- क्या आप जानते हैं कि जीवन में आगे बढने और सफलता के शिखर तक पहुचने का रहस्य स्वय आपके अन्दर छिपा है। यदि आपमें दृढ-निश्चय, आत्मविश्वास व कडी लगन है और आप मेहनत करने से नही घबराते हैं तो आप प्रगति की राह के हर बन्द दरवाजे को खोल सकते है।
- ऑरीसन स्वेट मार्डेन अमरीका के विश्वप्रसिद्ध विचारक, लेखक व प्रभावशाली वक्ता थे। उनकी प्रेरणापूर्ण पुस्तके पढकर विश्व के लाखो निराश व्यक्तियो ने अपने जीवन को सुख-सफलता एव स्वास्थ्य से परिपूर्ण किया है। स्वेट मार्डेन का कहना है कि मनुष्य अर्थात् आप स्वयं ही अपने भाग्यविधाता हैं। अपनी असफलताओ का दोष भाग्य के सिर मढ देने के बजाय यदि आप दृढ इच्छाशक्ति और सकल्प के साथ कठिनाइयो का मुकाबला करे तो आप अपनी असफलता को सफलता में बदलकर जीवन मे सभी प्रकार की खुशिया मनाने मे कामयाब हो सकते है।
- स्वेट मार्डेन का कहना है कि जीवन मे सफलता पाने का एकमात्र मूलमन्त्र है--आपका आत्म-विश्वास, कडी मेहनत और दूरदृष्टि। यदि आपके विचार निर्बल तथा नकारात्मक है तो आप सफल कैसे बन सकते है? वस्तुत. आप यह कल्पना ही नही कर पाते कि आपमे भी ऐसी अनेक शक्तिया, सामर्थ्य और योग्यताएं हैं, जिनके थोडे-से प्रयोग मात्र से आप सफलता के शिखर पर पहुच सकते हैं।
- अवसर हर क्षण हमारे चारो ओर उपस्थित रहता है। यदि हम निरन्तर प्रयत्न करेगे, निरन्तर चेष्टा करेगे तो निश्चित ही आपने सभी लक्ष्यो को प्राप्त कर लेंगे। किन्तु अक्सर देखा जाता है कि अधिक आशावादी लोग थोडा-सा प्रयत्न करके अधिक फल की कामना करने लगते है तथा मनोवांछित फल प्राप्त न होने पर निराश हो जाते है। जीवन मे सफलता प्राप्त करने के लिए परिस्थितियों के समक्ष घुटने न टेके बल्कि हिम्मत से उनका मुकाबला करें

ट मार्डेन कृत

चिन्ता छोड़ो सुख से जियो

रूपान्तरकार

वेद प्रकाश सोनी

चित्रांकन

विवेक कौशिक

प्रकाशक

युगबोध साहित्य

518/6 बी, कड़कड़ी रोड, विश्वास नगर

शाहदरा दिल्ली- 100 032

- क्या आप जा
और सफलता
स्वय आपके
निश्चय, आत्म
आप मेहनत
प्रगति की रा
सकते है।
- ऑरिसन स्वेट
विचारक, लेख
प्रेरणापूर्ण पुस्त
व्यक्तियो ने
स्वास्थ्य से प
कहना है कि
भाग्यविधाता
भाग्य के सिर
इच्छाशक्ति
का मुकाबला
को सफलता
की खुशिया
- स्वेट मार्डन
पाने का एव
विश्वास, कई
विचार निर्बल
कैसे बन स
ही नही कर
शक्तिया,
थोडे-से प्रयो
पर पहुंच स
- अवसर हर
है। यदि
चेष्टा करेंगे
को प्राप्त क
कि अधिक
करके अधि
तथा मनोव
हो जाते हैं
लिए परिरि

ISBN : 81-8108-009-2

प्रकाशक

युगबोध साहित्य

518/6 बी, कड़कड़ी रोड, विश्वास नगर
शाहदरा, दिल्ली-110032

मूल्य
200.00 रुपये

सस्करण
सन् 2004

आवरण
एस० के० ग्राफिक्स, दिल्ली-110032

शब्द-सयोजन
एस० के० कम्प्यूटर्स, दिल्ली-110032

मुद्रक
एस० एन० प्रिंटर्स दिल्ली 1'0032

अनुक्रम

भय मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है

भय से ही दुख आते हैं। भय से ही मृत्यु होती है और भय से ही बुराइयां उत्पन्न होती हैं। अतः भय को मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु माना गया है। भय व्यक्ति को हर समय निरुत्साहित करता रहता है। इस प्रकार उस कार्य में भी वह उसे असफल बना देता है जिसे करने की शक्ति उसमें होती है।

एक भयकर राक्षस किसी मनुष्य को बहुत सताया करता था। वह मनुष्य बहुत दुखी था। उसने एक दिन उस राक्षस से कहा—"मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है, तुम मुझे इतना क्यों सताते हो?"

राक्षस बोला—"मैं तो तुम्हारी ही कृति हू, मुझे तुम्हीं ने तो बनाया है, इसलिए अपने कष्टों अथवा दुखों के लिए दोषी तो तुम स्वय हो।"

यह लोकोक्ति आज संसार के अधिकांश प्राणियों पर लागू होती है। आप जानते हैं कि यह राक्षस कौन है? यह राक्षस न तो बीमारी है और न ही मृत्यु। यह तो इनसे भी बढ-चढकर है। यह है—भय।

यह विचारणीय है कि इस 'भय' नामक राक्षस ने प्रभु की इस सृष्टि की सर्वश्रेष्ठ रचना, मानव का क्या हाल बना दिया है। इस भय ने मानव की कैसी दयनीय स्थिति बना दी है। इस दुष्ट राक्षस के वश में होकर मनुष्य अपना आत्मविश्वास, अपनी गौरवमय प्रतिष्ठा की बात और अपनी सभी ईश्वरप्रदत्त शक्तियों को भी भुला बैठा है। वह उसका गुलाम बनकर अपने मान-सम्मान की भी परवाह नहीं करता और धूल चाटने लगता है। व्यक्ति अभी असफल नहीं हुआ होता कि असफलता के भय से काप उठता है। उसे रोग नहीं होता, परन्तु रोग के भय की भावना ही उसे खोखला बना देती है। वह निर्धन नहीं होता, परन्तु निर्धन हो जाने की भावना उसे दीन-हीन बना देती है। नाश, असफलता, भूख, दुर्घटना अथवा पदावनति का विचार मन में आते ही आदमी बावला बन जाता है, सुध-बुध खो बैठता है और बेकार की दुश्चिन्ताओं में घिर जाता है, जबकि ये आशकाए और दुश्चिन्ताए निराधार होती हैं।

यह महान आश्चर्य की और विचित्र बात है कि मनुष्य को इस पृ
प्राणी माना जाता है, उसका निर्माण ही ससार के प्राणियों पर शासन क
था, जबकि वह स्वय भयरूपी शत्रु को देखकर विफल हो जाता है और अ
को ही भूल जाता है।
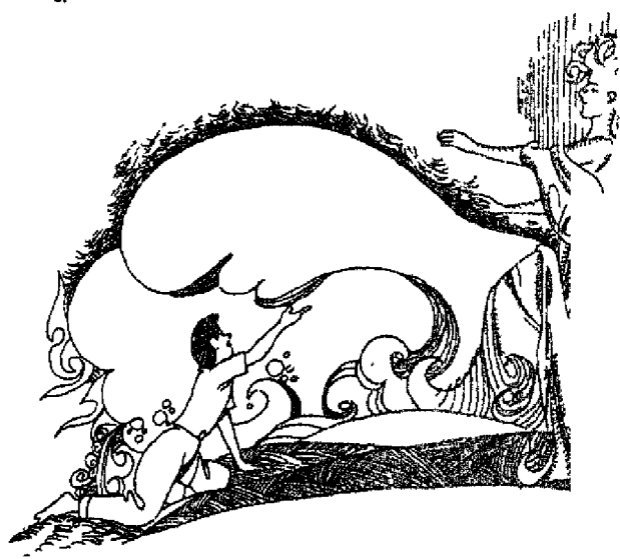
हम तब और भी तुच्छ बन जाते हैं जब हम भय क
सर्वशक्तिमान से बड़ा मानकर उसके आगे घुटने टेक देते हैं

सबसे अधिक आश्चर्य की बात तो यह है कि हम यह छोटी-सी बात
कि इस भय का निर्माण तो हम स्वय अपने विचारों द्वारा ही करते
हमने स्वय की है। हमारे अपने विचार, हमारी अपनी कल्पनाए ही
और हम अपनी ही इस नाचीज कृति के आगे हथियार डाल देते हैं

प्रत्येक व्यक्ति अपने भय की रचना स्वयं करता है। यह तो आप
जिस चीज की स्वयं रचना करते हैं, उसे स्वयं नष्ट भी कर सकते हैं
होता है कि जिस भय की हम रचना करते हैं उसे नष्ट भी स्वय क
भी आपके अपने विचारों से उत्पन्न होता है, अत· स्पष्ट है कि यदि
को नियन्त्रित कर सकें तो आप इस भयरूपी राक्षस से मुक्ति पा स
कोई भी व्यक्ति भयभीत नहीं कर सकता, परन्तु यदि कभी भयावह
जाती है तो वह तभी होती है जब हम अपने मन को भयभीत होने
अर्थात जब हमारा मन हमारे वश में नहीं रहता या हम उसे खुला
वह भयभीत होता है। जब तक हम भय को अपने मन पर आक्रमण

नहीं देते, तब तक भय का हम पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसका अर्थ यह है कि जब मन पर भय का प्रभाव पडता है, तभी हमारा अनिष्ट होना आरम्भ हो जाता है।

यदि आपका मन स्वस्थ है, उसमें सही दिशा में सोचने की शक्ति है, तब उसे किसी भी प्रकार की परिस्थितिया भयभीत नहीं कर सकतीं। यदि हमारे घर का दरवाजा खुला है तो कोई भी आदमी आसानी से अन्दर आ सकता है। इसी प्रकार जब हम अपने मन को खुला छोड़ देते हैं, उस पर नियन्त्रण नहीं रख सकते तो भय भी अन्दर घुस आता है। वैसे हमारी इच्छा के बिना भय हमारे मन में प्रवेश नहीं कर सकता। हममें इतनी शक्ति होनी ही चाहिए कि हम जिस चीज या भाव को चाहें अपने मन में प्रवेश करने दें और जिसे चाहें बाहर कर दें। यदि हममें इतनी दृढ़ इच्छाशक्ति हो तो हम मन के द्वार उस वस्तु के लिए बन्द कर सकते हैं जो भय को अपने साथ लाती है।

यह हमारे अपने वश की बात है कि हम अपने में उन्हीं बातों को प्रवेश करने दें जो अपने साथ शक्ति, सम्पूर्णता, सामंजस्य और आनन्द लाती हैं। वस्तुत बात यह है कि यदि एक बार भय के लिए हम अपने मन के द्वार खोल देते हैं तो उसे निकालना कठिन हो जाता है। भय का राक्षस एक बार आक्रमण कर देता है तो बहुत-से लोगों के लिए तो वर्षों तक उससे छुटकारा पाना कठिन हो जाता है। भय के कारण ही उनका प्रत्येक कार्य प्रभावित हो जाता है, उनकी प्रत्येक चेष्टा भय से प्रभावित हो जाती है और उस हानिकारक प्रभाव से वे लोग पूर्ण रूप से असहाय हो जाते हैं।

अफसोस तो यह है कि अभागे व्यक्ति यह नहीं समझ पाते कि उन्होंने अपनी जो स्थिति बनाई है, उसके लिए वे स्वयं ही उत्तरदायी हैं, अन्य दूसरा कोई नहीं। अपने जीवन को दुखपूर्ण उन्होंने स्वयं बनाया है। इतने पर भी वे नहीं जानते कि भय के कारण ही उनका मन काम-काज में नहीं लगता, उनके जीवन का आनन्द फीका पड़ गया है और आयु के कितने ही अमूल्य वर्ष भी कम हो गए हैं। भय के कारण ही कार्यकुशलता के मार्ग में बाधा पड़ती है, क्योंकि भयभीत व्यक्ति कोई भी कार्य कुशलतापूर्वक नहीं कर सकता।

हम एक छोटे-से उदाहरण से इस बात को स्पष्ट करते हैं—मान लीजिए कि आपको आज से तीन माह बाद किसी सभा में भाषण करना है। यदि स्वभाव से ही आप झिझकने वाले हैं तो आपके अवचेतन मन में भय की भावना चक्कर काटने लगेगी। आप कुछ समझ पाएं, इससे पूर्व ही सप्ताह गिनने लग जाएंगे। पहले सप्ताह में ही आपके मन में भय की आशका स्पष्ट झलकने लगेगी और ज्यों-ज्यों भाषण का समय निकट आने लगेगा, आपका भय लगातार बढ़ता जाएगा। जब भाषण का दिन आ पहुंचेगा तो आपको जो कष्ट होगा, वह असीम होगा। इसी डर के कारण आपकी सारी एकाग्रता नष्ट हो जाएगी, आपको चैन नहीं मिलेगा और आपकी कार्यशक्ति जवाब दे जाएगी। यहां तक कि आपकी नींद भी हराम हो जाएगी।

न जाने हम कितनी बार इसी प्रकार अनेक कष्ट उठाते हैं। न जाने कितनी बार

भय की ऐसी कल्पना द्वारा हमें लज्जित होना पड़ता है, शर्म उठानी पड़ती है, अपमान, अपयश और असफलता भी झेलनी पड़ती है। इस प्रकार हम कष्टों की सम्भावना को न जाने कहां तक बढा लेते हैं। जिस बात का हमें भय होता है, वह बात स्पष्टतः हमारे पीछे भी चली आती है। यदि आपको भाषण करने से भय की कल्पना सताती है तो वस्तुतः आप भाषण न कर पाएंगे। भय का वास्तविक परिणाम ऐसा ही होता है। इसके विपरीत यदि हम साहस के लिए अपने मन के द्वार खोल दें और सफलता के ही दर्शन करें, सफलता अनुभव करें तो हमारा आत्मविश्वास प्रतिदिन दृढ से दृढतर होता चला जाएगा और हमें लज्जा और असफलता आदि कष्ट नहीं भोगने पड़ेंगे।

बहुत-से लोग सफलता तो प्राप्त करना चाहते हैं, परन्तु हर समय सोचते यही रहते हैं कि हम कहीं असफल न हो जाएं। यह परस्पर विरोधी बातें हैं, विरोधाभास है। यह तो दो विषम पदार्थों को मिलाने जैसी बात है—जैसे दूध और खटाई को। यदि दूध और खटाई को मिलाएंगे तो दूध फटेगा ही। आप प्रयत्न करते हैं सफलता के लिए और आपका मन झुका हुआ है असफलता की ओर—तो इस स्थिति में आपको सफलता कैसे मिलेगी? यह तो वही बात हुई कि काम आप किसी और चीज के लिए करते हैं और आशा किसी और चीज की। यह तो विचित्र जीवन-दर्शन है।

सफलता प्राप्ति का एक निश्चित नियम है। इसी प्रकार सुख और समृद्धि के लिए भी निश्चित नियम है। यह नियम या कानून आकर्षण का सिद्धान्त है। सफलता के मूल में आशावादी चिन्तन होता है। सफलता के लिए हमें आशा भी सफल होने की करनी चाहिए। यदि हम असफलता के बारे में ही सोचते रहेंगे तो असफलता की ओर ही आकर्षित होंगे। फल तो बीज के अनुरूप ही होगा। यदि आप बबूल बोएंगे तो आम कहां से पाएंगे?

इसलिए भय को मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु माना गया है, क्योंकि यह व्यक्ति को हर समय निरुत्साहित करता रहता है। इस प्रकार उस कार्य में भी वह उसको असफल बना देता है जिसे करने की शक्ति उस व्यक्ति में होती है।

प्राचीन काल में रोमन लोगों पर भय का इतना अधिक कुप्रभाव था कि उन्होंने उसका मन्दिर ही बना डाला। 'भय' इच्छा और महत्वाकाक्षा की हत्या कर डालता है, उन्हें बुरी तरह कुचल देता है। उसके कारण उत्साह तो रहता ही नहीं और कार्यारम्भ करने की शक्ति भी नष्ट हो जाती है। मनुष्य के मन पर जब भय का हमला होता है तो उसके अंग-प्रत्यंग तक ढीले पड़ जाते हैं, निश्चेष्ट हो जाते हैं।

जीव विकास की दृष्टि से जो व्यक्ति बौने रह जाते हैं, पूर्ण विकास नहीं कर पाते, इसका कारण उन पर भय का आक्रमण ही है। यदि भय उन पर आक्रमण न करता तो वे भी पूर्ण विकसित जीवन प्राप्त करते, पर इस शत्रु ने उनके जीवन को कुचल डाला, उनके सुन्दर स्वप्नों को मसलकर रख दिया।

भय अज्ञान के कारण पैदा होता है। हम भयग्रस्त इसीलिए होते हैं, चूंकि हम अपनी

शक्तियों के प्रति जागरूक नहीं होते, हमें अपनी दिव्य कार्यशक्ति और सामर्थ्य का ज्ञान नहीं होता। ज्ञान प्राप्त करते भी हैं तो अपनी शक्तियों के थोडे-से अश का। हमें अपने साधनों व सम्भावनाओं का ही पूरा ज्ञान नहीं होता। हमारे अन्दर शक्ति का जो विशाल भण्डार सुरक्षित है उसकी हमने अब तक खोज-खबर ही नहीं ली।

हमारे भय का सबसे मुख्य कारण यह है कि हम अपने आपको एक पृथक व्यक्ति मान लेते हैं। हम ऐसा समझ लेते हैं कि इस सृष्टि के रचयिता ने हमें अकेले ही संघर्षो से जूझने के लिए फेंक दिया है। हम अपनी सत्ता को ही उससे पृथक मान लेते हैं, परन्तु सच तो यह है कि हम उस जगन्नियन्ता की विशाल योजना के एक आवश्यक और अभिन्न अग हैं, एक महत्वपूर्ण अंश हैं। जिस प्रकार सृष्टि में निर्माण की प्रक्रिया चल रही है, उसी प्रकार प्रतिक्षण, प्रतिपल हमारा भी पुनर्निर्माण होता रहता है, नवीनीकरण होता रहता है। जितनी बार हम सांस लेते हैं, उतनी बार ही हमारी पुनर्रचना होती है।

कर्ता को उसकी कृति से, रचना से पृथक कैसे किया जा सकता है। वह तो सर्वशक्तिमान है। हम उसकी रचना हैं तो उससे पृथक कैसे हो सकते हैं? हम तो उससे अविच्छिन्न हैं। जब वह निर्भय एव निर्विकार है तो हमारे लिए भय का स्थान कहा रह जाता है। हमारे और उसके बीच भय की गुजाइश कहां रह जाती है?

हमारे मन में असफलता की आशका से भय होता है, परन्तु हम यह नहीं सोचते कि यदि हम सफलता के अजर-अमर स्रोत से अपना सम्बन्ध जोड लें तो असफलता की सत्ता ही नहीं रह जाएगी। हम बीमारियों, रोगों से भयभीत क्यों होते हैं? क्योंकि हम यह बात जानते ही नहीं कि स्वास्थ्य ही हमारा जीवन है और जीवन की स्वाभाविक अवस्था भी यही है। हमारा वास्तविक स्वरूप स्वस्थ रहता है, रोग की तो वस्तुत. कोई सत्ता ही नहीं। रोग तो स्वास्थ्य के अभाव का नाम है।

इसी प्रकार हम निर्धनता की आशका से भी भयभीत होते हैं, डरते हैं, क्योंकि हम यह भूल जाते हैं अथवा हमें यह ज्ञान ही नहीं होता कि जहा से हमारे जीवन का स्रोत प्रकाशित हो रहा है, वह स्वयं समस्त पदार्थों का अखण्ड स्रोत है। उस अखण्ड भण्डार के रहते हम अभावों से ग्रस्त कैसे रह सकते हैं। हा, यह बात अवश्य है कि जब हम इस सबंध को भूल जाते हैं अथवा उससे संबध-विच्छेद करके अपनी सत्ता को अपने व्यक्तित्व तक सीमित मान लेते हैं, तब हमें निर्धनता का अनुभव होने लगता है। हम यह समझने का प्रयत्न ही नहीं करते कि हमारे अन्दर ऐसी शक्ति विद्यमान है जो आए सकटों की अपेक्षा अधिक सामर्थ्यवान है।

यदि हमें यह पता हो कि हमारे पास उन समस्त वस्तुओं का अथाह भण्डार है, जो हमारे अभाव की भावना को क्षणमात्र में समाप्त कर सकता है तो हम निश्चय ही निर्धनता की खिल्ली उड़ाने में समर्थ हो जाएंगे। हमारा दृष्टिकोण सीमित होता है। उसी सीमित दृष्टिकोण के कारण हम अपने साधनों का बहुत थोडा भाग ही, एक साधारण-सा

अश ही देख पाते हैं। हम अपने आपको अपनी देह तक सीमित मानक
इस प्रकार हम उस विशाल व अथाह भण्डार से अपने आपको अलग कर
उससे सबंध-विच्छेद हो जाता है।

हममें जितनी दिव्य संभावनाएं हैं, उनका यदि हमें तनिक भी ज्ञान
अन्दर विद्यमान सामर्थ्य का तनिक भी पता होता तो हम कभी भी भय के
इस प्रकार के ज्ञानमात्र से सारे भय नष्ट हो जाते हैं कि भगवान हमारे
हमारा साझीदार है, साथी है, परन्तु यह अत्यन्त दुख और खेद की बात
अपने सबध में कोई अनुमान करते हैं तो अपने आपको बहुत ही तुच्छ
हम फौरन ही यह मान लेते हैं कि यह संकट हमारी शक्ति और सामर्थ्य
बडा है। सच बात तो यह है कि ऐसा मान लेना अपने पैरों पर कुल्हा
वैसे जिस पल भी हमें अपनी आन्तरिक शक्ति का बोध होता है तो हमा
बढ जाती है। वह हमें बनाने वाला असीम है, जब हम उससे सबंध जो
हमारी शक्ति असीम हो जाती है, वह असीम बुलन्दियों को छूने लगती है
आया संकट स्वय दूर हो जाता है।

इसीलिए हमें शक्ति के उस विशाल भण्डार की अनुभूति करनी चाहिए, जो
छिपा हुआ और सुरक्षित है और साथ ही सदा हमारी सहायता के लिए उत

आशा की नाव पर सवार रहें, वही आपको भय के तूफान से पार ले जा सकती

कोई युवक पूजी की कमी के कारण अपना व्यापार आरम्भ करने में कठिनाई अनुभव कर रहा हो, अचानक उसे यह समाचार मिले कि स्टैण्डर्ड ऑयल कम्पनी ने उसकी सहायता का निश्चय किया है, उसके व्यापार के लिए जितने धन की आवश्यकता होगी, उतना वह कम्पनी देगी तो उस युवक को कितनी अधिक प्रसन्नता होगी? इसी प्रकार जिस भी व्यक्ति ने अपना संबध उस अनन्त शक्ति के भण्डार से जोड़ लिया है, उसे किसी शक्ति-सामर्थ्य या पूजी की आवश्यकता नहीं रह जाती। वह किसी प्रकार के भय से त्रस्त या ग्रस्त नहीं रहेगा। एक बार उस अथाह भण्डार के साथ संबंध जोडने के बाद, उससे चाहे जितनी शक्ति ले लें, चाहे जितनी सामर्थ्य प्राप्त कर लें, आपको कभी भी कोई कमी अनुभव नहीं होगी।

वस्तुत. हम तब और भी तुच्छ बन जाते हैं जब हम भय को उस सर्वशक्तिमान से बड़ा मानकर उसके आगे झुक जाते हैं और अपने सर्जनहार से संबंध-विच्छेद कर लेते हैं। यदि हम ऐसा न करें तो हमारा जीवन अधिक प्रभावशाली, अधिक ऊचा, अधिक महान बन सकता है।

मिथ्याविश्वास और आशंकाओं को न पनपने दें

अपशकुन, वहम, अन्धविश्वास और आशंका की भावनाएं व्यक्ति के मनोबल व उद्देश्य को कमजोर कर देती हैं। आज इस युग में भी व्यक्ति अपने आपको इन भावनाओं से मुक्त नहीं कर पाता है, यही कारण है कि इन भावनाओं से घिरा व्यक्ति कभी सुखमय जीवन नहीं बिता पाता।

वस्तुत कहते तो सब यही हैं कि हम भूत-प्रेतों में विश्वास नहीं करते, परन्तु वास्तविकता यह है कि प्रायः हम सबने किसी-न-किसी तरह के भय को पालतू जानवर के समान पाल रखा है। अधिकांश लोग अपशकुन, वहम और अन्धविश्वासों के चंगुल में फसे हुए हैं और जीवन भर इन वहमों, अपशकुनों और शुभ-अशुभ के विचारों से त्रस्त रहते हैं। बहुत-से लोग इन बातों को मानने से इनकार करते हैं, परन्तु वे भी किसी-न-किसी प्रकार के पालतू भय के शिकार अवश्य हैं तथा जीवन भर इन बातों के शिकार रहते हैं।

उदाहरण के लिए यूरोप के लोग शुक्रवार के दिन कोई कार्य आरम्भ नहीं करते। उस दिन 13 तारीख हो तो और भी कठिनाई हो जाती है। इतना ही नहीं, वे लोग होटल में 13 नम्बर के कमरे में भी नहीं ठहरेंगे। इसलिए होटल और गेस्टहाउस के मालिकों ने 13 नम्बर का कमरा ही उड़ा दिया। वे जीने के नीचे से गुजरना भी अच्छा नहीं समझते। काली बिल्ली रास्ता काट जाए तो भी वे अच्छा नहीं मानते। भारतीय भी इसे अपशकुन मानते हैं। इसी प्रकार रात के समय किसी कुत्ते का रोना या चीखना भी अच्छा नहीं समझा जाता।

आप भी अपने मन को टटोलकर देखिए कि आप किस बात को अपशकुन मानते हैं। कहीं आपने भी तो किसी मिथ्याविश्वास को पालतू जानवर की तरह नहीं पाल रखा? आप थोड़ी देर शान्ति से सोचेंगे तो आपको स्मरण हो जाएगा कि आप किस बात को अपशकुन मानते हैं।

इस बात में कोई अतिशयोक्ति नहीं कि अधिकाश लोगों को वहमी या मिथ्याविश्वासी

कहा जाए तो वे चिढेंगे, परन्तु असलियत यही है कि वे अवश्य किसी-न-किसी अन्धविश्वास के शिकार हैं, उसमें फसे हुए हैं। उनके अवचेतन मन मे कोई-न-कोई भय सदा ही कुण्डली मारे बैठा रहता है, जो उन्हें समय-असमय डराता रहता है, 'कहीं ऐसा न हो जाय, कहीं वैसा न हो जाय।'
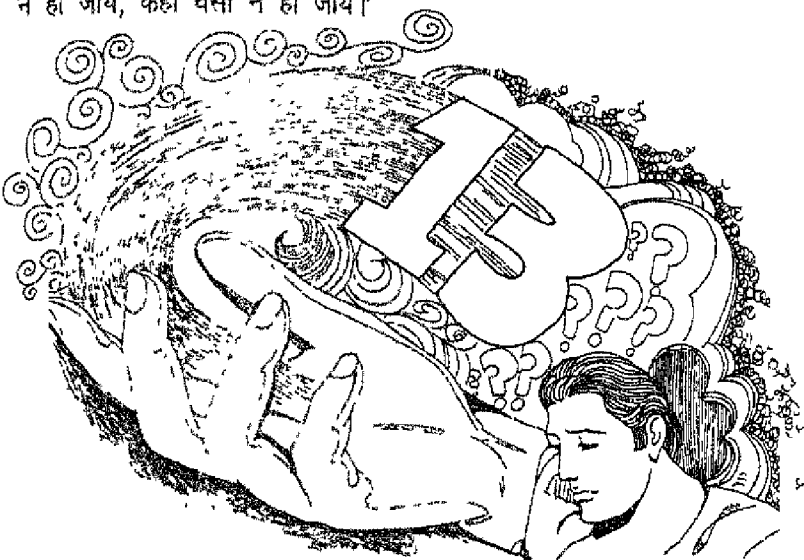
अधिकाश लोग वहमों व अपशकुनों के भय को पालकर बैठे हैं।

मैं एक प्रतिभावान युवती को जानता हू। वह एक बार एक सार्वजनिक समारोह में असफल रह गई थी, क्योंकि इसमें उसकी आवाज ने जवाब दे दिया। न जाने क्या अदृश्य प्रतिक्रिया हुई कि वह उस संगीत समारोह में सफलता न पा सकी और उसके बाद उसने सगीत का प्रदर्शन करना ही बन्द कर दिया। उसे अनेक बार प्रोत्साहित किया गया, परन्तु वह राजी न हुई। एक बार बहुत साहस करके वह एक सार्वजनिक प्रदर्शन के लिए गई थी, परन्तु सगीत की उसी धुन पर आकर रुक गई। तीसरी बार भी वह असफल रही। इस प्रकार इन असफलताओं से घबराकर उसने सगीत को सदा के लिए त्याग देने का निश्चय किया। उसने सगीत के क्षेत्र से पृथक होने का निर्णय कर लिया और अलग हो गई।

सौभाग्य से उन्हीं दिनों उसे एक व्यक्ति मिला जो उसे जानता था। उसने उसे सुझाया कि उसकी इस असफलता का कारण शारीरिक नहीं, वरन् मानसिक है। उस व्यक्ति ने उसे समझाया कि यदि वह अपनी इच्छाशक्ति को दृढ करे तो वह अपनी मानसिक कठिनाई पर विजय पा सकती है और अपने कार्य में सफल हो सकती है। वह युवती एक विशेषज्ञ डॉक्टर के पास गई। डॉक्टर ने उसका मुआयना किया, उसके स्वर-सबधी अगों का परीक्षण किया। डॉक्टर ने उसे बताया कि उसे किसी प्रकार का शारीरिक कष्ट नहीं। उससे सम्बन्धित शिक्षक ने भी बताया कि उसका स्वरालाप निर्दोष है, उसमें कोई

अनियमितता नहीं। जब उसे यह निश्चय हो गया कि उसकी असफलता का कारण भयरूपी मानसिक पिशाच है, तब उसने उससे छुटकारा पाने का निर्णय किया।

उसने स्वयं एक सार्वजनिक समारोह में भाग लिया। वह गाने के लिए खड़ी हो गई। भय का वही भाव फिर आया, परन्तु उसने मन को डांटकर कहा—यह स्वर मेरा है और इस पर मेरा पूर्ण अधिकार है और अपनी इसी दृढ़ निष्ठा के कारण वह सफल हुई।

हमने अपने मन में किसी-न-किसी प्रकार के भय को पाल रखा है। कोई-न-कोई आशंका हमारे मन में घर किए ही रहती है। परन्तु अधिकतर हमें उस पर शक भी नहीं होता। फिर भय की यह बिल्ली ही शेर बन जाती है और सब किए-कराए को चौपट कर देती है।

यह आशका कहां थी? आपके मन में।

उसे जन्म देने वाला कौन था? आपका मन। जिन दिनों आपको यह आशका घेरे रहती थी, आपका मन भारी-भारी-सा रहता था। आप अपने को बीमार-सा अनुभव करते थे। आपका मन स्वाभाविक स्थिति में नहीं रहता था। उस समय आप जितना इस आशका से, इस भय से छुटकारा पाने का यत्न करते थे, यह आशंका उतना ही जोर पकड़ लेती थी, भय और घना हो जाता था।

वस्तुत. उस समय आपने कभी भी इस तथ्य पर विचार नहीं किया। यह आशका का भूत आपके अपने मन की उपज थी, उसी की रचना थी। आपने भय को उसे बनाया और पाला-पोसा था। आप जितना अधिक इस आशंका पर विचार करते थे, उतना ही उसे बढ़ावा मिलता था।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अनेक व्यक्ति अपने ही मन द्वारा उत्पन्न की और पाली हुई आशकाओं से दुख उठाते रहते हैं। वे यह विश्लेषण ही नहीं कर पाते कि उनकी बेचैनी का कारण क्या है। वे यह अनुभव ही नहीं कर पाते कि इस मानसिक अवस्था का कारण भय है।

संभव है कि हमारे मन में इस भय की जड़ें बाल्यावस्था से ही जमी हों। यह भय बाल्यावस्था में ही आरम्भ हुआ हो, क्योंकि प्राय सभी देशों में बूढ़ी आया, धाय या दादी-नानी बच्चों को ऐसी कहानियां सुनाया करती हैं, जिनसे बच्चों के कोमल मन पर भय की एक छाया-सी पड़ जाती है। परियों, भूत-प्रेतों और राक्षसों आदि की कथाओं से भय बच्चों के मन में अपनी जड़ें जमा लेता है और बचपन से ही हमारे मन में बैठा हुआ यह भय कार्य के आरम्भ में, कार्य के मध्य में और सफलता के निकट पहुचने तक हमें त्रस्त करता रहता है। बचपन में हम किसी परछाईं को देखकर डर जाते थे। उसकी इतनी गहरी छाप हमारे मन पर पड़ी रहती है कि हम सदा यही सोच-सोचकर आशंकित होते रहते हैं कि यह न हो जाय। कहीं ऐसा न हो जाय, कहीं वैसा न हो जाय।

अब क्या होगा—प्रायः यह आशंका ही हमें इतना कष्ट पहुचाती रहती है कि जितना शायद उसके 'होने' से भी न हो।

मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हूं जिसे थोड़े-थोडे दिन बाद दात में दर्द हुआ करता

था। वह काफी कष्ट उठाता था, परन्तु कभी भी इतनी शक्ति या हौसला न जुटा पाता था कि कष्ट देने वाले उस दांत को निकलवा दे। कुछ समय बाद जब दर्द बन्द हो जाता तो वह यह अनुभव करता कि यह दर्द अन्तिम बार का है, परन्तु कुछ दिनों बाद दर्द फिर होता और पहले से अधिक होता। इतने पर भी दांत उखडवाना स्थगित करता रहता और कष्ट सहन करता रहता।

लोग ऑपरेशन के भय से ही अनेक बार दीर्घकाल तक असह्य पीडा सहन करते रहते हैं। इस प्रकार कई बार उनका रोग असाध्य हो जाता है। यदि ये लोग चीरफाड (सर्जरी) करने वाले डॉक्टर के पास जाते तो उन्हें उतना कष्ट न उठाना पड़ता, जितना भय के कारण उन्होंने उठाया या उठाते रहते हैं, परन्तु वे भय के कारणों को दूर नहीं करते।

मेरा एक परिचित व्यक्ति है। दो वर्ष पूर्व उसके जबडे की हड्डी टूट गई थी। उसने चोट की मरहम-पट्टी तो की, दवाई भी खाई, परन्तु जो असली काम था—सर्जन के पास जाने का—वह नहीं किया। वह उससे डरता रहा। मन में सर्जन के नश्तर का भय जो बैठा था। फल यह हुआ कि समय के साथ उसके जबडे इतने कमजोर पड गए कि आज वह कोई भी ठोस पदार्थ खाने में असमर्थ है। पूरे पौष्टिक तत्व न मिलने से उसका शरीर कमजोर होता गया। उसके एक सर्जन मित्र ने कई बार टोका कि एक छोटे-से ऑपरेशन से ही वह पूरी तरह से ठीक हो जाएगा, पर भय उसके मार्ग में रोड़े अटकाए रहा और वह कष्ट उठाता रहा।

आप और हम कहेंगे कि वह व्यक्ति मूर्ख था। वाकई वह मूर्ख था, पर क्या हम भी समय आने पर ऐसा ही नहीं करते? हम भी तो इसी भय के कारण कई कामों को स्थगित करते रहते हैं। यह केवल झूठे भय के कारण होता है, जबकि हमारा कर्तव्य यह होना चाहिए कि हम संकटों के विरुद्ध उठकर खड़े हो जाएं और उनकी इतिश्री करके, उन्हें समाप्त करके ही सांस लें।

क्या आपने कभी सोचा कि यह आपका पालतू भय क्या है?

ऐसा दीखता है कि यह हमारे लिए अनिवार्य बन गया है। हमारे स्वभाव में पैठ गया है। आपको जानना चाहिए कि यह हमारे लिए अनिवार्य नहीं, आवश्यक नहीं। इसलिए हमें पूर्ण निश्चय करके इसकी जड़ें काटने के लिए कमर कस लेनी चाहिए। हमें इसकी जडों पर कुठाराघात करना चाहिए। डरते रहने एव भयभीत होने से कुछ नहीं होगा। इससे तो केवल हमारी शक्तियों का नाश ही होता है। भय हमारी शक्तियों को नष्ट करता है, उन्हें विकसित नहीं होने देता। आप यह तो जानते ही हैं कि जो सैनिक भयभीत होते हैं उन्हें पराजित करना कुछ भी कठिन नहीं होता, वह हारे हुए तो पहले ही होते हैं।

प्रायः अधिकांश लोगों के अन्तर्मन में किसी-न-किसी प्रकार का भय छिपा रहता है। चाहे वह रोगों का भय हो, दुर्घटना का भय हो, व्यापार के घाटे का भय हो, नौकरी छूट जाने या मृत्यु का भय हो, कोई-न-कोई भय छिपा रहता है और—केवल छिपा ही नहीं रहता, वह अन्दर-ही-अन्दर हम पर आक्रमण भी करता रहता है और हमें खोखला

बनाता रहता है कुछ लोग जब यात्रा करते हैं तो उनके मन में दुर्घटना की आशका बनी रहती है। जब ट्रेन या बस किसी पुल पर से गुजर रही होती है तो वे इस आशका से भयभीत रहते हैं कि कहीं गाड़ी नदी में न गिर जाए।

कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जिन्हें किसी-न-किसी रोग का वहम जीवन भर घेरे रहता है। उन्हें इस वहम से छुटकारा ही नहीं मिलता। कुछ लोग कैंसर से, कुछ लोग हृदय रोग से. कुछ गुर्दे के रोग से या और कुछ नहीं तो हाथ-पाव के दर्द की आशंका से ही सदा कष्ट उठाते रहते हैं। वे सदा ही सबधित रोग के लक्षण अपने शरीर में ढूंढते रहते हैं। जरा-सा कोई कष्ट हो गया तो फौरन कहेंगे--मैं कहता था न कि मुझे अमुक रोग है। दवा बेचने वालों की इन्हीं लोगों के सहारे तो चांदी बनती है।

रोगों से सबंधित इस प्रकार के भय हमेशा सक्रिय नहीं होते, परन्तु इनके कभी-कभी दौरे पडते हैं और इस तरह की आशकाओं के शिकार व्यक्ति के चेतन मन को इसका ज्ञान तक नहीं होता, परन्तु यह वहम और भय उनके अवचेतन मन के ही किसी कोने में कुण्डली मारे पड़े रहते हैं और इनका दुष्प्रभाव व्यक्ति के सभी मानसिक गुणों पर पडता है। जीवन के हर मोड पर और हर क्षणं उन्हें यह भयपूर्ण विचार घेरे रहते हैं व मनुष्य उनके हाथों कष्ट उठाता रहता है।

एक स्थान ऐसा है जहां निरन्तर तूफान आते रहते हैं। वहां के लोग हर समय आकाश में तूफान आने के चिन्हों को ही खोजते रहते हैं। वे देखते रहते हैं कि कहीं लाल रग के बादल तो नहीं छाए हुए? वे देखते रहते हैं कि आकाश कैसा है, धुंधला या मैला तो नहीं हो रहा? वे तूफान से बचने के लिए विशेष प्रकार की कोठरियां बनाते हैं। जब कभी उन्हें यह कोठरियां छोडनी पडती हैं या वे कहीं दूर जाते हैं तो परेशान हो जाते हैं। वे वास्तव में तूफान के कष्टों की अपेक्षा, तूफान आने की आशका के कारण हजारों गुना अधिक कष्ट भोगते हैं।

एक समय वह भी था जब लोग आकाश से गिरने वाली उल्का से भयभीत रहते थे। उस समय पीर लोग एक जादुई डण्डा बेचते थे। उनके कथनानुसार डण्डा पास में रहने से बिजली का भय नहीं रहता था।इस जादुई डण्डे के मुहमांगे दाम उन्हें मिलते थे। पीर जनता के भय की भावना का नाजायज लाभ उठाते थे और खूब रुपया बटोरते थे। आज हम इस प्रकार के अन्धविश्वास पर हसते हैं, उनके गुरुओं को बुरा-भला भी कहते हैं, पर क्या हम भी आज कुछ अन्य प्रकार के कामों में जादुई चीजों पर विश्वास नहीं करते? क्या जिन्हें हम जादुई शक्तियों से सम्पन्न व्यक्ति मानते हैं उनके आगे-पीछे नहीं घूमते या उनकी पूजा नहीं करते?

आज जब भी कहीं कोई महामारी फैलती है तो शायद उसके कारण उतनी मौतें न होती हों जितनी उस महामारी के फैलने के भय के कारण होती हैं। जब कभी कोई महामारी फैलती है तो अक्सर महिलाए इतना अधिक परेशान हो जाती हैं कि उन्हे कुछ सूझता ही नहीं। वे इसी डर से अपना दिमाग शान्त नहीं रख पातीं कि कहीं उनके बच्चों

चिन्ता छोड़ो सुख से जियो 1

परिजनों तथा अन्य मिलने वालों को यह रोग न लग जाय। जब किसी को महामारी का शिकार देखती हैं तो वे प्राय मूढ और अकर्मण्य हो जाती हैं। वे एक विशेष प्रकार के भय का शिकार हो जाती हैं, जो उनके दिल और दिमाग को जकड लेता है।

एक डॉक्टर का कहना है कि महामारी में रोग की अपेक्षा भय से अधिक विनाश होता है, इसमे भय का बहुत महत्वपूर्ण भाग होता है। बहुत वर्ष पहले इसी भय के कारण यूरोप के अनेक नगरों में यैलो फीवर (पीत ज्वर) से बचने के लिए गलियों के नुक्कड पर कोलतार के पीपों में आग लगाई जाती थी। वहा के निवासियों का भ्रम था कि कोलतार जलाने से पीत ज्वर नहीं फैलेगा। और कुछ हो या न हो, पर इतना अवश्य है कि लोगों के मन मे व्याप्त भय अवश्य अपना काम करता है। वस्तुत ऐसे समय में यह चाहिए कि लोग अपने मन में दुर्बलता न आने दें और अपने विवेक को स्थिर रखें।

कुछ लोगों को कई बार यह भ्रम हो जाता है कि उनका दिमाग काम नहीं कर रहा है या वे अपनी स्मरण-शक्ति खो रहे हैं। ऐसे उदाहरण भी देखे गए हैं कि इसी भ्रम के कारण कई लोग वास्तव में अपनी स्मरण-शक्ति खो बैठे। ऐसे व्यक्ति कई बार अपना नाम तक भी भूल जाते हैं। एक बार एक व्यक्ति वाशिंगटन के किसी होटल मे ठहरा। होटल के क्लर्क ने जब उसका नाम पूछा तो वह बता न सका। वह अपना नाम ही भूल गया था तथा स्मरण-शक्ति के नष्ट होने के कारण वह चिन्ताग्रस्त रहने लगा। वह प्राय इमर्सन का उदाहरण देकर कहा करता था कि जीवन के अन्तिम वर्षों मे वह अपने परिचितों एव मित्रों आदि के ही नहीं वरन् अपना नाम भी भूल गया था।

भय के वशीभूत होना मूर्खता है। भयाक्रान्त होने से ही सकट का मुकाबला करने वाली हमारी शक्ति कमजोर होती है। जो लोग प्रायः किसी रोग के लक्षण ढूढते रहते हैं या फिर किसी सकट की आशका करते रहते हैं, वास्तव में वे भयभीत हो जाते हैं। यदि उन्हें किसी साधारण-से रोग का लक्षण दीख भी जाए तो वे उसे बहुत बढा-चढाकर बताते है। उनका ऐसा स्वभाव बन जाता है। वे अपनी शक्तियों व गुणों को तुच्छ समझने लगते हैं और कमजोरियों का वर्णन बहुत बढ़ा-चढाकर करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि सकट समय से पूर्व ही आ जाता है या यू कहिए कि वे सकट को निमन्त्रण दे बैठते हैं।

प्राय· बहुत-से लोगों के अन्तर्मन में भय छिपा रहता है और उन्हें यह ज्ञात ही नहीं होता कि उनके अन्तर्मन में जो भय घर कर बैठा है उसकी परिभाषा क्या है। अधिकाश व्यक्ति इस बात की स्पष्ट व्याख्या ही नहीं कर सकते। ऐसे लोग तो कोने में बैठे-बैठे किसी सकट की प्रतीक्षा करते रहते हैं। आज तक हमें ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं मिला जिसे कोई भय न हो। सभी किसी-न-किसी भय को पाले रखते है। एक व्यक्ति को बचपन से ही इस भय ने घेर रखा था कि एक-न-एक दिन उसे अदालत मे जाना पड़ेगा और वहा वकील उससे ऐसे बेढगे प्रश्न पूछेगा जिनका उत्तर देना उसके लिए असम्भव होगा।

आपने प्राय. देखा होगा कि बहुत-से माता-पिता अपने बच्चों के मन पर विभिन्न

प्रकार के भय की छाप डालते रहते हैं, पर वे यह नहीं समझते कि इस प्रकार बच्चों के मन में जो भय बैठ जाता है उसके कितने भयंकर परिणाम निकलते हैं। यद्यपि माता-पिता के मन में बच्चों की भलाई की ही भावना निहित रहती है, तथापि इस प्रकार के भय से-बच्चों का बड़ा भारी अनिष्ट हो जाता है। बालक के मन पर इस प्रकार से जम गए भय के बीज उसे जीवन भर परेशान करते रहते हैं, जिन्हें नष्ट करना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव भी हो जाता है।

ऐसा न करना, वैसा न करना, वहा न जाना, बाहर न निकलना, सर्दी लग जाएगी, यह न खाना, वह न खाना आदि अनेक निषेधों से बच्चे की स्वतन्त्र चिन्तनशक्ति में भारी बाधा पड़ती है। इससे उसके तन और मन दोनों की ही मूल प्रवृत्तियों पर कुठाराघात होता है और इसका निश्चित परिणाम यह होता है कि बच्चों का स्वतंत्र और स्वाभाविक विकास नहीं हो पाता। भय और चिन्ता के भयावह विचारों को उनके मन पर लादकर माता-पिता उनहे चिड़चिड़ा और कमजोर बना देते हैं। आपको चाहिए कि आप अपने बच्चों को हर प्रकार के भय से बचाए ताकि उनका स्वाभाविक विकास हो सके।

आप जिस वस्तु का सदा ध्यान करते रहते हैं तथा जिस बात के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहते हैं, उसमें अवश्य ही सफल हो जाते हैं, लेकिन यदि आपके मन में सदा ही भय के विचार बने रहेंगे या आप उसी का चिन्तन करते रहेंगे, उसी की बात करेंगे तो आपका ध्यान भी उसी की ओर लगा रहेगा और तब वही भय साकार रूप धारण करके आपके सम्मुख आ जाएगा और आप कभी भी सफल नहीं हो सकते।

डॉक्टर आपको ऐसे अनेक रोगियों के बारे में बता सकते हैं जिन्होंने रोग की अपेक्षा रोग के भय के कारण अधिक कष्ट उठाया। हैजा, प्लेग आदि महामारियों की स्थिति आने पर रोग की अपेक्षा रोग के भय से मरने वालों की सख्या सदा ही अधिक होती है। किसी भी सामान्य अथवा साधारण रोगों की अपेक्षा रोग के भय से चिन्तित रोगी अधिक देर से ठीक होता है और कभी-कभी तो उसका रोग असाध्य हो जाता है।

भय का मानव शरीर के विभिन्न अगों—जैसे गुर्दे, हृदय और पाचन अंगों पर तुरन्त ही प्रभाव पड़ता है और कभी-कभी तो यह प्रभाव बड़ा घातक भी सिद्ध होता है। विचारों, भावनाओं एव मनोवृत्तियों का भी हमारे अगों-प्रत्यंगों पर तुरन्त प्रभाव पड़ता है। आपने देखा होगा कि बहुत-से लोग तार या टेलीग्राम को देखकर ही घबरा जाते हैं, भले ही उसमें कोई प्रसन्नतासूचक सन्देश क्यों न हो। तार को देखते ही उनका मानसिक सन्तुलन बिगड़ जाता है और वे घबरा उठते हैं।

वास्तव में कोई विरला व्यक्ति ही ऐसा होगा जो भयरहित होकर जीवन का पूर्ण आनन्द प्राप्त कर सका हो। हम पूरी तरह निश्चिन्त कभी हो ही नहीं पाते। हमें अधूरी निश्चिन्तता ही प्राप्त होती है और कभी-कभार ही आनन्द की झलक मिल पाती है। आनन्द का कोई क्षण कभी हमारी ओर आता भी है तो हमारे मन में बैठे हुए भय की आंधी उसे उडा ले जाती है। एक बडे राजा ने कहा कि उसे सारे जीवन में केवल 98 दिन ही आनन्द

प्राप्त हो सका एक राजा के बारे में तो यह कहना ठीक हो सकता है क्योंकि उसे अपने राज्य का सारा उत्तरदायित्व सभालना पडता है, परन्तु आश्चर्य तो तब होता है जब साधारण व्यक्ति तक यह कहते सुने जाते हैं कि उनके जीवन में कोई आनन्द नहीं।

क्या आप बता सकते हैं कि अब तक आपके जीवन में आनन्द के कितने दिन आए, कितने दिन आप चिन्ताओं से मुक्त रहे और आपके जीवन में कितने दिन ऐसे बीते कि जब आप दिन भर मुस्कराते रहे?

सच्चाई तो यह है कि हममें से बहुत ही कम लोग अपनी आखों को आनन्द प्रदान करने वाले क्षणों की प्रतीक्षा में खुली रखते हैं।

एक व्यक्ति ने एक लेख में ऑपरेशन के बाद की अनुभूतियों का वर्णन किया था। लेख का शीर्षक था 'वास्तविकता के बीस मिनट'। लेख का सार इस प्रकार था—'वसन्त का आगमन हो चुका था, आकाश में बादल छाए हुए थे, पर अस्पताल के वातावरण में कोई भी आनन्द न था। अचानक ही मुझे आनन्द से भरपूर एक नया संसार, एक नवीन आलोक दिखाई दिया। मैं कह नहीं सकता कि वह परिवर्तन क्यों और कैसे हुआ। मुझे कोई चीज दिखाई नहीं दी, परन्तु उन्हीं पुरानी वस्तुओं में से अचानक ही एक नया प्रकाश, एक नया आलोक, एक नई ज्योति बिखर रही-सी प्रतीत होने लगी और ऐसा अनुभव होने लगा कि यह प्रकाश वास्तविक है। तब मुझे अनुभव हुआ कि जीवन सौन्दर्य से परिपूर्ण है, सुखों से भरा हुआ है। उस समय आता-जाता हर व्यक्ति व हर परिन्दा सौन्दर्य का साक्षात प्रतीक प्रतीत होता था। उस सौन्दर्य की मादकता में एक विचित्र आनन्द था। उस समय मुझे उन सभी व्यक्तियों, पशु-पक्षियों एव परिन्दों के प्रति प्रेम की अनुभूति हो रही थी और इससे भी अधिक चमत्कारपूर्ण बात यह हुई कि उस समय मुझे अनुभव होने लगा कि जीवन आनन्द से भरपूर सत्य है। उस समय मेरी आत्मा आनन्द से गदगद हो रही थी।

विचारणीय बात यह है कि यदि कोई व्यक्ति बीस मिनट इस प्रकार के आनन्दमय आलोक में बिता सकता है तो क्या इस प्रकार की प्रसन्नता, आनन्द और सुखानुभूति के आलोक में वह अपना सम्पूर्ण जीवन नहीं गुजार सकता? वस्तुत सुख किन्हीं पदार्थों की प्राप्ति में नहीं, बल्कि आन्तरिक अवस्था का नाम है। सुख हमारे अन्त करण की एक स्थिति का नाम है और यह दशा केवल चिन्ता से मुक्त होकर ही प्राप्त की जा सकती है।

जब भी चिन्ता आपको घेरे या निरुत्साहित करे, उस समय अपने विचारों की प्रबल विद्युत-तरगें अपने अन्त करण में प्रवाहित कीजिए और चिन्ता को प्रभावरहित बना दीजिए। प्रयत्न कीजिए कि आपका अन्त.करण स्वस्थ और सुदृढ हो। भावना की प्रबल तरगों में बडी शक्ति है। उत्साहपूर्ण विचारों की तरगें बहुत बलवान होती हैं। आत्मविश्वास से पूर्ण विचार-तरगों में अपूर्व सामर्थ्य होती है। आनन्दपूर्ण विचार-तरंगो में बडा बल होता है। जब भी कभी आपको चिन्ता घेरे, उस समय दूसरों की प्रशसा कीजिए, हसी-मजाक की बातें कीजिए। किसी खेल में मन लगाइए, मनोरंजन के काम कीजिए, मन में आशापूर्ण

विचार लाइए तथा हौसले और उत्साह से भरी बातें कीजिए। ऐसा करते ही आपकी चिन्ता
के बादल फौरन छट जाएगे और चिन्ता आपके मन से ओझल हो जाएगी।

एक वृद्ध महिला का कहना है कि आशा करते रहना मेरे जीवन का स्वभाव बन ग
है। प्रतिदिन प्रात:काल जब मैं सोकर उठती हू तो आशा करती हू कि आज का दि
बहुत अच्छा और गौरव प्रदान करने वाला होगा। मैं तो प्रत्येक दिन को ऐसा समझ
लगी हू कि मानो मुझे किसी ऐसी नई यात्रा पर जाना हो, जिसमें नए-नए आनन्दपू
एव भव्य दृश्य देखने को मिलेंगे तथा अनेक सुखदायी अनुभव होंगे।
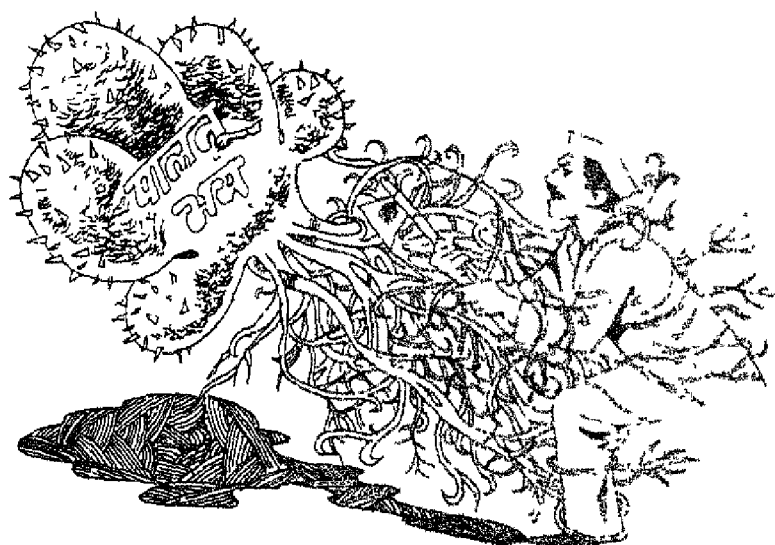
हमें कमर कसकर अपने मन के पालतू भय की जड़ें काटने को तैयार रहना चाहिए।

यदि आप भी सदा प्रसन्न रहना चाहते हैं तथा भय एव चिन्ता से छुटकारा पाना चाहते हैं तो आपको चाहिए कि आप अपने मन की प्रवृत्ति ऐसी बनाएं कि आप जिस किसी भी व्यक्ति को देखें, आपको आनन्द अनुभव हो, आप किसी भी वस्तु को देखें तो आपको सौन्दर्य और प्रसन्नता की अनुभूति हो। यदि आप अपने आपको शक्तिशाली बनाना चाहते हैं तो अपने को सब प्रकार के पश्चातापों और चिन्ताओं से मुक्त कर दीजिए, अपने मन के पालतू भय को दूर भगा दीजिए, जो मिथ्या भ्रम आपके मन में बैठ गया है, उससे उसे मुक्त कर डालिए। अपने मन में विश्वास की प्रबल तरंगें तरंगित कीजिए, जिनसे आपका उत्साह प्रतिक्षण बढ़ेगा तथा आपकी आशाएं फलवती होती जाएगी। ऐसा करने पर ही आपके मन से चिन्ताओं के विकृत विचार दूर होंगे, निराशा समाप्त होगी, उसके लिए कोई स्थान न रहेगा।

भावनाओं का जीवन में महत्त्व

मस्तिष्क और हृदय हमारे शरीर के अतिसंवेदनशील केन्द्र हैं। जब भी हमारे मस्तिष्क में भय अथवा क्रोध सम्बन्धी कोई विचार आता है या भावना उत्पन्न होती है तो हमारा रक्त-संचार तीव्र हो जाता है जिसका हृदय पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। अतः हमेशा अपनी भावनाओं को तनावपूर्ण होने से रोकें।

चिकित्सा-विज्ञान ने यह सिद्ध कर दिया है कि मनुष्य की भावनाओं का उसकी शारीरिक क्रियाओं पर बड़ा प्रबल प्रभाव पड़ता है। इस बात के भी अनेक प्रमाण हैं कि यदि कोई व्यक्ति बीमार या अस्वस्थ हो, परन्तु उसका मन शान्त हो तथा उसमें किसी प्रकार की कोई उद्विग्नता न हो तो उसके शीघ्र ही रोगमुक्त होने की आशा की जा सकती है। ऐसा रोगी जल्दी ठीक हो सकता है। रोग भले ही साधारण हो, परन्तु यदि व्यक्ति आशंका, भय और चिन्ता से ग्रस्त हो तो डॉक्टर जानता है कि उसे ऐसे रोगी पर बहुत परिश्रम करना पड़ेगा।

डॉक्टर विलियम एडलर का कहना है—मन.स्थिति शरीर को किस प्रकार प्रभावित करती है, वैज्ञानिक रूप से यह अभी ज्ञात हुआ है। अभी तक अस्पष्ट रूप से भावनाओं के महत्व को स्वीकार तो किया जाता रहा है, किन्तु अब तो स्पष्ट और निश्चित रूप से यह प्रमाणित हो चुका है कि भय की प्रवृत्तिया शरीर के अंग-प्रत्यगों एवं सूक्ष्म चेष्टाओं पर भी अपना बहुत अधिक प्रभाव डालती हैं।

एक पूर्ण स्वस्थ व्यक्ति भी बीमारी के चगुल में फस सकता है, पर यह सब उसकी अपनी कल्पना द्वारा ही होता है। जब वह रोग की कल्पना कर लेता है तो वह बीमार न होते हुए भी, उस बीमारी से होने वाले कष्टों को भुगतता रहता है।

एक व्यक्ति कैमिस्ट की दुकान पर गया। उसने कैमिस्ट से विष मागा। कैमिस्ट ने सोचा कि कहीं वह व्यक्ति आत्महत्या न कर ले, इसलिए उसने एक शीशी में रंगदार पानी भरकर और उसे अच्छी तरह पैक करके दे दिया। घर पहुचकर उस व्यक्ति ने अपनी पत्नी के नाम अन्तिम विदा का पत्र लिखा। उसने पत्र को बन्द किया और टेबल

पर रख दिया और रंगीन पानी पीकर लेट गया। थोड़ी देर बाद उसके शरीर में विष के सभी प्रभाव प्रकट होने लगे। अवस्था अधिक बिगड़ती देख उसे अस्पताल पहुंचाया गया। डॉक्टरों ने उसका निरीक्षण किया। उन्होंने बताया कि इसने विष तो नहीं पिया, क्योंकि इसके पेट के धोवन में उसके चिन्ह विद्यमान नहीं थे, परन्तु विष से जो लक्षण या कष्ट शरीर में होते हैं, वे सब स्पष्ट थे। उसे ठीक होने में एक सप्ताह लग गया। यदि उसे फौरन ही अस्पताल न पहुंचाया जाता तो शायद उसकी मृत्यु भी हो जाती।

आपको यह बात कभी नहीं भूलनी चाहिए कि रक्त के सचरण और हमारे शारीरिक स्वास्थ्य में सीधा सम्बन्ध है। यदि रक्तसंचार में कोई गड़बड़ हो जाती है तो हम रोगी हो जाते हैं और यदि हम ठीक हों तो हम स्वस्थ रहते हैं। आप यह तो जानते ही हैं कि मन में जो उथल-पुथल होती है, वह हमारे रक्तसंचार को भी प्रभावित करती है। मन में जो भी परिवर्तन होता है, वह स्पष्ट रूप से हमारे रक्त-परिभ्रमण में भी परिवर्तन कर देता है। क्रोध आने पर, कोई भय उत्पन्न हो जाने पर अथवा किसी प्रकार की दुर्घटना घट जाने पर हमारे रक्तसचार के प्रमुख स्रोत—हृदय पर फौरन प्रभाव पड़ता है। आपको यह भी ज्ञात होगा कि क्रोध आने पर रक्तचाप बढ़ जाता है और रक्तसचार में अव्यवस्था उत्पन्न हो जाती है।

ऐसा कहा जाता है कि यदि घोड़े का मालिक घोड़े को चाबुक लगाए या यूं ही उसे डांटे-फटकारे तो घोड़े के हृदय की धड़कन 10-12 बार प्रति मिनट अधिक तेज हो जाती है। क्रोध, चिन्ता, भय या अन्य किसी प्रकार के मानसिक कष्टों, क्लेशों एव तनाव आदि से रक्तसचार में भारी परिवर्तन होता है। उस परिवर्तन का शरीर के अंगों पर भी प्रभाव पडता है। वे रोगों को ग्रहण करने लगते हैं और इस प्रकार मनुष्य की आयु कम होने लगती है। मन में रोग के समाप्त होने के प्रति सन्देह हो या रोग के कारण चिन्ताएं अधिक बढ जाएं तो रोग से जितना कष्ट होना चाहिए वह बढ़ जाता है। शरीर पर मुर्दनी-सी छा जाती है तथा निरन्तर मनहूसियत छाई रहने से रोग शरीर को आ घेरते हैं। यदि मन में निरन्तर असन्तोष बना रहेगा तो रोग भी अवश्य पैदा होंगे। ऐसी स्थिति में शरीर का विकास रुक जाता है और मनुष्य की आयु सीमा काफी कम हो जाती है।

एक सुप्रसिद्ध चिकित्सक का कथन है कि शरीर के विकास और थकान आदि से नष्ट होने वाले अणुओं की मरम्मत आदि के लिए भोजन का पाचन बहुत आवश्यक है, परन्तु पाचन-क्रिया तभी ठीक रह सकती है जब पाचन-सस्थान के प्रत्येक अंग से प्राप्त होने वाले रस का ठीक-ठीक स्राव होता रहे। इसके लिए आवश्यक है कि भोजन—रूप, रस और गंध—हर प्रकार से अच्छा हो। साथ ही भोजन करते समय आपके विचार भी तनावरहित होने चाहिए, तभी आपकी पाचन-क्रिया ठीक रह सकेगी और तभी भोजन का उचित और अच्छा प्रभाव आपके शरीर पर पड़ेगा। यदि भोजन रुचिकर हो, स्वादिष्ट हो, सुवासयुक्त हो, देखने में भी अच्छा हो और खाने वाले की इच्छा भी हो तो पाचन-सस्थान

सक्रिय होकर उसके पाचक रसों का उचित स्राव भी होने लगता है मुख कठ आमाशय जिगर, तिल्ली और पित्ताशय आदि से आवश्यक पाचक रस तुरन्त रिसने लगते हैं, जो भोजन को पचाने में विशेष सहायक सिद्ध होते हैं। ऐसा ही भोजन सुपाच्य कहलाता है।
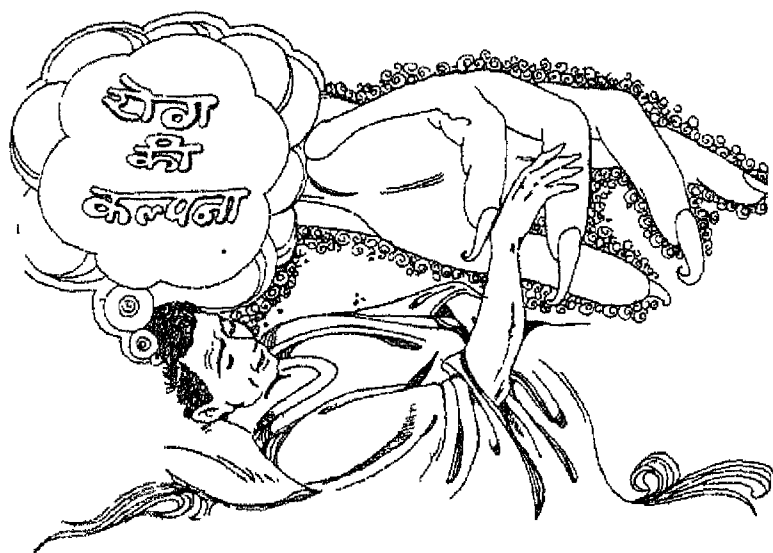
रोग की कल्पना एक स्वस्थ आदमी को भी बीमार बना देती है।

आप इस बात से भी परिचित होंगे कि अपमान या अन्याय होते ही आपका मन-मस्तिष्क तुरन्त विद्रोह कर उठता है तथा उसमें एक विस्फोट-सा होता है। इससे यह सिद्ध होता है कि भावनाओं का हमारे शरीर के अणुओं (सैल्स) से बडा घनिष्ठ सम्बन्ध है। हमारे शरीर के प्रत्येक अंग में संवेदनशील तन्तु होते हैं, जिनका नियन्त्रण हमारा मस्तिष्क करता है। मस्तिष्क अतिसवेदनशील केन्द्र है। जब भी हमारे मस्तिष्क में कोई विचार आता है अथवा हम कुछ सोचते हैं तो उस विचार से सबधित अंग के सवेदनशील तन्तु तुरन्त ही सक्रिय हो उठते हैं। इसलिए हमारा प्रत्येक विचार, क्रिया-कलाप, आशा-निराशा, चिन्ता और भय की भावनाएं हमारे अग-प्रत्यगों के व्यवहार पर गहरा प्रभाव डालती हैं।

आपने देखा होगा कि प्रात काल के समय ओस के प्रत्येक कण में सूर्य का अत्यन्त सूक्ष्म एव चमकीला प्रतिबिम्ब दिखाई देता है। इसी प्रकार हमारे शरीर का प्रत्येक अणु मस्तिष्क के लघु रूप से प्रतिबिम्बित होता है अर्थात शरीर के प्रत्येक अणु में मस्तिष्क का लघु रूप झलकता है। हमारे मन में जो उद्देश्य का लक्ष्य होता है, वह हमारे शरीर के अणु से ही प्रकट होता है। हमारा जैसा चरित्र होता है, वह हमारे अग-प्रत्यग और हमारे विचारों तथा क्रियाओं में झलकता है।

जितनी बार हम क्रोध करते हैं जितनी बार हम चिन्ता करते हैं जितनी बार हम व्याकुल और बेचैन होते हैं, उतनी ही बार हम अपने शरीर के अणु-अणु के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करते हैं, उतनी ही बार हम उन्हें अपना सामान्य कार्य करने से रोकते हैं। भय, चिन्ता और गलत भावनाओं आदि मनोविकारों का हमारे शारीरिक अणुओं पर अच्छा प्रभाव नहीं पडता। बल्कि ऐसे विचार, ऐसी भावनाएं कष्टों को हमारी ओर खींच ले आती हैं। अतः हमेशा अपनी भावनाओं को तनावपूर्ण होने से रोकें और उन्हें कोमलता से भरपूर बनाने की कोशिश करें।

भय ही रोगों की जड़ है

भयभीत विचार हमारी रोगनिरोधक शक्ति को कम कर देते हैं। जिससे हमारे शरीर के अंग अपने कर्तव्य का पूरी तरह निर्वाह नहीं कर पाते। फलस्वरूप अनेक रोग-विकार हमें घेर लेते हैं। यदि आप स्वस्थ व प्रसन्नचित्त रहना चाहते हैं, तो भयरूपी राक्षस को कदापि अपने अन्दर पनपने न दें।

अमरीका के राष्ट्रपति हार्डिंग जब लौटकर स्वदेश आए तो जहाज पर उन्हे एक घातक रोग ने आ घेरा। उस समय उनके मन में भय के विचारों ने अपना डेरा जमा लिया और उन्हें भयपूर्ण चित्र दिखाई देने लगे। उन्हें अपनी रोगशय्या के निकट ही नहीं, सारे ससार में भय-ही-भय छाया दिखाई देने लगा। सभी समाचार पत्रों में उनके भय की खबरें छपीं। इससे जनता भी भयभीत हो उठी कि यदि राष्ट्रपति स्वस्थ न हुए तो क्या होगा?

उन्हें सान फ्रांसिस्को के एक अस्पताल में पहुंचाया गया। वहा नर्सों और डॉक्टरों से घिरे राष्ट्रपति रोगशय्या पर पड़े थे। उन्होंने जब भी आंखें खोलीं, उतनी ही बार डॉक्टरों और नर्सों का जमघट देखा। विभिन्न रोगों और अंगों के अनेक विशेषज्ञ डॉक्टर बुलाए गए। कोई उनकी नाडी देख रहा था, कोई तापमान देख रहा था, कोई उनके श्वास-प्रश्वास को देख रहा था, कोई हृदय की धडकन देख रहा था, कोई रक्त की परीक्षा कर रहा था। सभी नर्सों एवं डॉक्टरों के चेहरे चिन्ता में डूबे हुए थे। यह सब क्या था? यह भय का विषम वातावरण था, जिस वातावरण में रोग अधिक भयंकर हो उठता है, भले ही रोगी जीवन-मरण के संघर्ष में जूझ रहा हो। वे सब उनकी रोग-निरोधक शक्ति को बढ़ाने की अपेक्षा उसे निर्बल बनाने में जुटे हुए थे।

यह सम्भव है कि यदि राष्ट्रपति एक सामान्य साधारण नागरिक होते तो उनके बचने के अधिक अवसर थे। यहां यह कहने का अर्थ यह कदापि नहीं कि वहा उपस्थित डॉक्टरों में योग्यता का अभाव था। उनकी योग्यता में किसी को सन्देह नहीं था, वरन् कहने का अर्थ यह है कि रोगी के चारों ओर हम जो वातावरण बना देते हैं, वह वातावरण उचित नहीं होता। तीमारदारों के लटके हुए उदास चेहरों को देखकर रोगी और अधिक रोगी

हो जाता है। वह प्राय अपने रोग को असाध्य और अपने को अत
लगता है।

भय हमारे शरीर में विष का काम करता है, हमारे अ
क्रिया-कलापों पर दुष्प्रभाव डालता है, रक्त को दूषित कर देता
गडबडी पैदा कर देता है, हमारी शक्ति को क्षीण करके हमारी
डालता है। दूसरे शब्दों में भय हमारे जीवन के समस्त आनन्द
लूट लेता है।

हमारे मन में स्वास्थ्य संबंधी दो प्रकार के विचार होते हैं

भय के कारण कुछ अंगों की शक्ति कम हो जाती है और कुछ अग
ो जाते हैं। जब हमारे मन में भय होता है तो हमारे अग अपने का
र्वाह नहीं कर पाते। हमारे शरीर का एक-एक अणु संवेदनशील है
ा बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है, वे मन की चिन्तन प्रक्रिया में भाग लेते हैं
प्रभावित होते हैं।

पाचन-क्रिया पर भय या चिन्ता के प्रभाव को सभी ने अनुभव किया होगा
थवा दुर्घटना की आशका से पाचक-अंग प्रभावित होते हैं और वे काम
े हैं। उनसे रसों का स्राव रुक जाता है। परिणाम यह होता है कि हम
हमारी तबीयत ठीक नहीं रहती। कई बार ऐसा भी होता है कि अचान

आघात लगता है या कोई भयंकर आशंका होती है तो उसके प्रभाव को तो हम भाप जाते हैं, परन्तु जिन अनेक छोटे-छोटे भय और आशंकाओं को हम पाले रखते हैं तथा जिनके विष से हमें हानि होती रहती है, उनकी ओर हमारा ध्यान नहीं जाता।
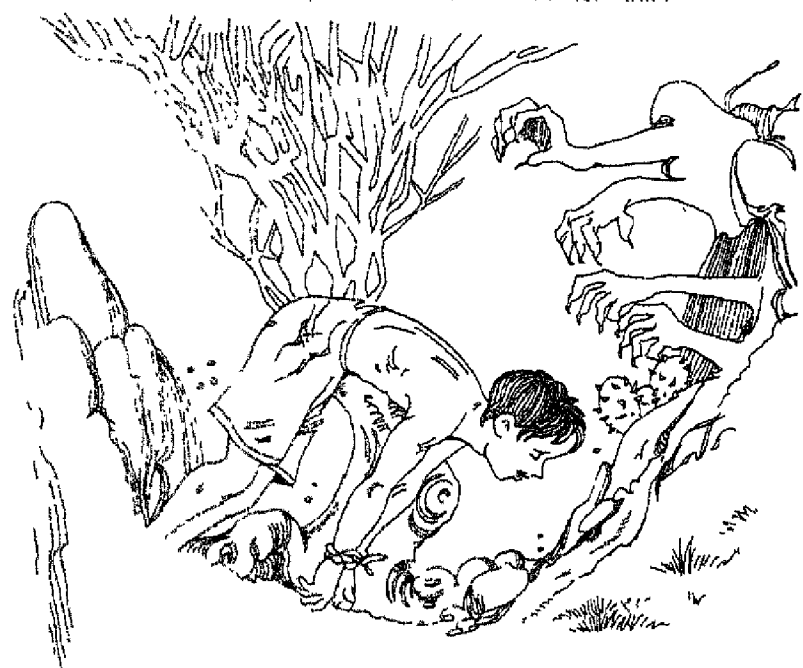
दुर्बल मन पर भयरूपी राक्षस शीघ्र ही आक्रमण कर देता है।

प्रायः लोग कहा करते हैं कि मेरा अमुक रोग ठीक नहीं होता। इस भय से रोग और भी बढ़ता है। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति कोई-न-कोई रोग पाले फिरता है। शायद ही हम किसी व्यक्ति को पूर्णतया स्वस्थ कह सकें। प्रत्येक व्यक्ति के शरीर में किसी-न-किसी प्रकार के रोग के लक्षण ढूंढे जा सकते हैं। ऐसी स्थिति में यदि वह व्यक्ति अपने मन में रोग की चिन्ता अथवा भय को बसा ले तो रोग के आने में क्या कुछ देर लगेगी?

कहने का तात्पर्य यह नहीं कि कोई रोग होने पर उसकी चिकित्सा न की जाए। चिकित्सा अवश्य की जानी चाहिए, परन्तु मन में किसी रोग की चिन्ता न लगाई जाए और यह भी भय अपने मन में न रखा जाए कि रोग है, क्योंकि यह स्पष्ट है कि चिन्ता अथवा भय से न तो रोग कम होता है, न घटता है, न नष्ट होता है, वरन् बढ़ता ही है।

कुछ लोग अपने आपको कोमल समझने में ही अपनी प्रतिष्ठा समझते हैं। उन्हें जरा-सी भी कोई तकलीफ हो जाए तो उसका वर्णन बडी शान से करेंगे। उन्हें इस बात का ज्ञान नहीं कि वे इस तरह स्वयं को ही हानि पहुचाते हैं। इस तरह के व्यवहार से उनके अन्तर्मन में यह भावना पूरी तरह बैठ जाती है और उन्हें साधारण-सा कष्ट भी

बड़ा प्रतीत होता है और वे उसे सहन नहीं कर पाते। वस्तुतः हमारा यही कर्तव्य है कि हम अपने आपको तथा मिलने-जुलने वाले लोगों को इस प्रकार के विचारों से बचाएं इस प्रकार के विचारों से ही हमारी रोग-निरोधक शक्ति कम होती है। रोग-निरोधक शक्ति कम होने से रोग जल्दी-जल्दी होने लगते हैं और धीरे-धीरे हम सदा के लिए रोगी बन जाते हैं। हम जितना अधिक रोगों के आगे झुकेंगे, उतना ही रोग भी हमें दबाते रहेंगे। जब हम उन्हें तुच्छ अथवा नगण्य समझेंगे तो वे भी शरीर में आश्रय न पा सकेंगे। इस प्रकार वे स्वय हमारा पीछा छोड़ देंगे। यह बिल्कुल उसी प्रकार है जैसे आप किसी व्यक्ति से पीछा छुडाना चाहते हों तो उससे अधिक बातें न करें अथवा उसकी उपेक्षा करते रहें। इस प्रकार वह व्यक्ति स्वय आपका पीछा छोड़ देगा। आप भी रोगों की इसी प्रकार उपेक्षा कर दीजिए और अपने आपको सदा स्वस्थ समझिए।

हमारी मानसिक स्थिति का हमारे शरीर के अणुओं पर निश्चित प्रभाव पड़ता है। मानसिक स्थिति की अच्छी या बुरी प्रतिक्रिया हमारे शारीरिक अणुओं पर अवश्य पड़ती है। जब हमारे मन में आशा होती है, हम अपने स्वास्थ्य के प्रति आशावान होते हैं, हमें विश्वास होता है कि हमें कोई कष्ट नहीं होने वाला, तब हम पूर्णतः नीरोग रहते हैं। जब हमारे मन में यह दृढ़ विश्वास होता है कि हममें रोगों का मुकाबला करने की शक्ति है या हम समझते हैं कि हम रोगों से अधिक शक्तिशाली हैं तो रोग हमें नहीं घेर पाते। उस समय हमारे शरीर का एक-एक अणु शक्तिपुंज बन जाता है और हम ऐसा अनुभव करने लगते हैं कि हम कभी बीमार ही नहीं हुए।

हमारे शरीर का प्रत्येक अणु संवदेनशील है। उसे जीवन का स्पन्दन मिला है, उसमें जीवन की गति है। वह जीवन के सिद्धान्त से ही अनुप्रेरित है अर्थात जीवन का सिद्धान्त लागू होता है। जैसा कि हम पहले बता चुके हैं, हमारा मस्तिष्क एक-एक अणु का केन्द्र है, मस्तिष्क से उनका सीधा सम्पर्क बना रहता है। मस्तिष्क जो सन्देश उन अणुओं तक पहुचाता है, वे उसी के अनुरूप कार्य करने लगते हैं। अतः जब तक आपमें स्वास्थ्य की आशा नहीं होगी, आप स्वस्थ कैसे रह सकेंगे? स्वस्थ रहने के लिए आपको स्वास्थ्य का विश्वास करना पडेगा। जिस प्रकार व्यापार या कोई कारखाना आदि चलाने के लिए पूंजी की अनिवार्य आवश्यकता होती है, उसी प्रकार नीरोग रहने के लिए आशा और विश्वास की पूजी भी अत्यावश्यक है। यदि आपको अपने पाचन-संस्थान पर विश्वास नहीं अथवा आप उसके प्रति आशंकित हैं तो निश्चित रूप से आपका पाचन-संस्थान बिगड़ जाएगा और भली प्रकार काम न कर सकेगा। यदि आपको हर समय ही पेट खराब रहने या अपच एवं अनिद्रा की चिन्ता रहती है तो यह निश्चय मानिए कि आप इन दोनों रोगों के शिकार हो जाएगे। शारीरिक गडबडी मन की गड़बड़ी से ही होती है। हमारे मानसिक विचारों का हमारे शरीर से बहुत ही निकट का सम्बन्ध है।

ऐसी कोई भी बात, जिससे हमारा मन उत्साहित न हो, हमारे शरीर को हानि पहुंचाती है। जिस बात से मन की कार्यशक्ति कम होती है, उससे शरीर का बल भी कम होता है, घटता है। यदि हम निरन्तर चिन्ताओं में डूबे रहें, सदैव सन्देह में फसे

रहें, भय के बोझ तले दबे रहें तो हमारे मस्तिष्क के छोटे-छोटे सैल भी उसी प्रकार के लक्षण प्रकट करेंगे। यही कारण है कि मन की शक्ति को कम करने वाले यह शत्रु, हमारे शरीर के रोगों का मुकाबला करने वाली शक्ति को कम करते हैं।

भय से जितने अधिक लोग मरते हैं, उतने लोग युद्धों और वास्तविक रोगों से भी नहीं मरते। बहुत-से रोगी मौत के मुह में केवल इसीलिए पहुच जाते हैं कि उन्हें रोगमुक्त होने की आशा ही नहीं रहती, वे पूर्णतया निराश हो जाते हैं। जो लोग आशा छोड़ देते हैं, उनके शारीरिक अणुओं में इतनी शक्ति नहीं रह जाती कि वे दुबारा स्वस्थ और सबल होकर रोगों का प्रतिरोध कर सकें।

शल्य-चिकित्सक ही नहीं, साधारण व्यक्ति भी जानता है कि घावों को भरने में कितना समय लगता है। वास्तव में भय और चोट लगने से होने वाले पश्चाताप के कारण घाव शीघ्र नहीं भरता। भय घावपूर्ति की प्रक्रिया में बाधक सिद्ध होता है। जब रोगी घाव के कारण अपने मन में भय बिठा लेता है तो शल्य-चिकित्सक भी नहीं बता सकता कि घाव कितने दिन बाद ठीक हो पाएगा।

जिस समय हम पर कोई भी सकट या कष्ट आता है तो भयरूपी राक्षस हमें चारों ओर से घेर लेता है। वह हमारे चारों ओर मडराने लगता है और हमारी नींद हराम कर देता है। वस्तुत भयरूपी राक्षस हम पर आक्रमण तभी करता है जब वह हमको दुर्बल पाता है। वह हमारे कान में बार-बार यह बात दोहराता है—तुम इस सकट से बच न सकोगे, तुम इससे कभी मुक्त न हो सकोगे, यह रोग बहुत भयकर है, तुम अब काम के योग्य नहीं रहे।

भयरूपी यह राक्षस जीवन भर हमारा पीछा नहीं छोड़ता, लेकिन जब हमारे सारे काम ठीक ढग से हो रहे हो तो उस समय यह अदृश्य हो जाता है और इसका कहीं कोई पता नहीं चलता, परन्तु जब कहीं जरा-सी गडबड़ होती है या हमारे काम में किसी प्रकार की अड़चन आती है तो उस समय यह बिना बुलाए ही भयकर रूप धारण कर हमारे सामने आ खडा हो जाता है। जब हम रोगी होते हैं, किसी कारणवश निरुत्साहित होते हैं या हमें किसी काम से पीछे हटना पड़ता है अथवा हम किसी शारीरिक या मानसिक परेशानी में फसे हुए होते हैं तो उस समय यह राक्षस हम पर आक्रमण करता है और हमारी गर्दन पर सवार हो जाता है।

आज तक भय से बडा कोई राक्षस पैदा ही नहीं हुआ, जिसने मानव जाति को इतना अधिक त्रस्त किया हो।

इसलिए हमें यह विचार करना आवश्यक है कि हम स्वस्थ रहना चाहते हैं, यदि हम प्रसन्न रहना चाहते हैं, यदि हम अपने मन को सन्तुलित अवस्था में रखना चाहते हैं, चित्त को स्थिर और निश्चिन्त रखना चाहते हैं तो हमें इस भयरूपी राक्षस से छुटकारा पाना बहुत आवश्यक है। यह शैतान आते ही हमें भडका देता है, हमारे अन्दर एक विस्फोट-सा हो जाता है, जिससे हमारा नाडी-सस्थान अस्त-व्यस्त हो जाता है। इसलिए यह आवश्यक है कि यदि हम ठीक तरह जीना चाहते हैं, जीवन का सदुपयोग करना चाहते हैं तो हमें इस राक्षस से पीछा छुड़ाना ही होगा।

भय से पीछा छुड़ाना हो तो उसकी उपेक्षा कीजिए।

हमें अपने स्वास्थ्य के सम्बन्ध में अपनी मनोवृत्ति को उत्साहपूर्ण और सुदृढ़ रखना चाहिए। हमें यह अटूट विश्वास होना चाहिए कि हमारा जीवन स्वस्थ रहने के लिए है, हम शक्तिशाली और सदा सुखी रहने के लिए पैदा हुए हैं। हमारे मन में यह सुदृढ़ धारणा होनी चाहिए कि हमारे अंगों-प्रत्यंगों की क्रिया स्वाभाविक है तब हमें कोई रोग लग भी जाए तो हमारे अन्दर वह शक्ति है जो उसे दूर कर सकती है, उसकी उपेक्षा कर सकती है। इस प्रकार के विचार सर्वोत्तम औषधियों से भी बढ़कर हैं।

हमारे मन में स्वास्थ्य के सम्बन्ध में दो तरह के विचार होते हैं। रोगी विचार या स्वस्थ विचार। बीच का अन्य कोई मार्ग नहीं। सब प्रकार के स्वस्थ, निर्मल और उत्साहपूर्ण विचार शरीर और मन को स्वस्थ रखते हैं। सरल और सहज स्वभाव से उत्साहपूर्ण जीवन के कार्यों में लगे रहने से हमारा तन और मन दोनों ही सदा स्वस्थ रहते हैं और रोग भी हमें नहीं घेर पाते।

शुभ विचारों को अपनाइए

आप अपनी कल्पना से ही मन में भय की स्थापना करते हैं। वास्तव में उसकी कहीं भी कोई सत्ता नहीं होती। जब आप अपने अन्दर कमी महसूस करते हैं, तब भय उत्पन्न हो जाता है। और यही भय अपने अन्य साथियों—रोगों और संकटों को साथ लेकर आता है। अतः अपने मन में भय को स्थान न दें।

अधिकाश लोगों ने कुछ-न-कुछ मिथ्याविश्वास पाल रखे होते हैं और प्राय' वे उनके सम्बन्ध में अभिमानपूर्वक बातें करते देखे जाते हैं। जब कोई बच्चा या बडा आदमी रात के समय में जगल में जाने से डरता है और वृक्षों के ऊपर या नीचे भूत-प्रेत होने की बात करता है तो ये लोग उसकी बात को उपहास में उडाने का यत्न करते हैं, परन्तु प्रतिदिन के जीवन में, कदम-कदम पर, यही लोग मिथ्याविश्वासों और भयों से ग्रसित देखे जा सकते हैं।

आप जिन बातों से डरते हैं, अनजाने में उन्हें अपने ऊपर हावी होने देते हैं, उन्हें शक्तिशाली बनाते रहते हैं। आप जिन बातों की चिन्ता करते हैं, चिन्ता को उनसे ही शक्ति मिलती है। आप अपनी कल्पना से ही किसी भय की स्थापना करते हैं, वास्तव में उसकी कहीं भी कोई सत्ता नहीं होती। इस पर भी आप उससे डरने लग जाते हैं। यह बात लगती तो हास्यास्पद है, पर है वास्तव में सच।

आप जिन वस्तुओं, घटनाओं, बातों अथवा व्यक्तियों से डरते हैं, उन्हें आप स्वय शक्तिशाली बनाते हैं। आप जिस बात की चिन्ता करने लगते हैं, उससे स्वत ही चिन्ता सबल होती जाती है। आप किसी दुर्घटना की आशका करके, उससे भयभीत होकर उसका महत्व बढ़ाते और उसे प्रबल बनाते हैं। कई बार यह आशका या भय कि कुछ अनहोनी या दुर्भाग्यपूर्ण घटना होने वाली है, सचमुच आपके दुर्भाग्य का कारण बन जाती है। यही कारण है कि जो लोग असफलता से भयभीत रहते हैं, उससे डरते रहते हैं, प्राय असफल हो जाते हैं। यदि आपका भय में दृढ विश्वास है तो वह सच होकर ही रहेगा। इसके विपरीत यदि आपके मन में शुभ आकाक्षाएं होंगी और आप उन पर स्थिर रहेंगे तो वे पूर्ण होंगी।

आप जिन बातों से डरते हैं, अनजाने में वही आप पर हावी हो जाती हैं।

आप जीवन के पथ पर सदैव किसी-न-किसी रूप में अपने विचारों या धारणाओं को बल देते रहते हैं, उन्हें शक्तिशाली बनाते रहते हैं। यदि आपमें यह धारणा हो कि आपमें कुछ गड़बडी है या आप दूसरों की अपेक्षा घटिया हैं, आपमें योग्यता की कमी है तो इन्हीं भावों से आपके मन में भय पैदा होता है और फिर वही भय अपने साथियों--रोग या अन्य सकटों को साथ लेकर आता है और भय के लिए उर्वरा भूमि पाकर धीरे-धीरे बढ़ता हुआ विकराल रूप धारण कर लेता है।

इसके विपरीत यदि आप निरन्तर भय के सामजस्य और समन्वय के सम्बन्ध में सोचें, रचनात्मक ढंग से विचार करें तो निश्चित रूप से आप स्वस्थ एव सुखी रहेंगे तथा सम्पन्न भी बनेंगे। आपका जीवन सुखी होगा। यदि आप अपनी सीमित-सी चेतना से छुटकारा पा सकें, जिसने आपके जीवन को तुच्छ और नाचीज बना दिया है, यदि आप अपनी इन्द्रिय-सवेदनाओं से मुक्ति पा सकें, जिनके कारण आपका जीवन क्षुद्र बना हुआ है तो आपका जीवन विकसित होना आरम्भ हो जाएगा।

सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक हेलेन क्रेन का कहना है कि यह हमारी आध्यात्मिक, चारित्रिक और शारीरिक दुर्बलता की स्वीकारोक्ति है। भय हमारी आत्मा, मन और शरीर की पराजय है। भय का ही अर्थ है इच्छानुसार कार्य करने में असमर्थ होना, अपने को असहाय समझना। भय के दुष्प्रभाव से मन की भांति, शरीर के अंग-प्रत्यंग भी, पहले अस्थायी रूप से तथा फिर स्थायी रूप से अकर्मण्य हो जाते हैं। भय के कारण पहले मन बेकार और निष्क्रिय हो जाता है, फिर मस्तिष्क क्रिया करना छोड देता है और तब हमारे अग-प्रत्यंग ढीले पड जाते हैं और समस्त शरीर निढाल हो जाता है।

जब आप भय से ग्रस्त होते हैं, तब आप उसे अपने ऊपर अधिकार करने देते हैं। भय के पास अपनी कोई शक्ति नहीं होती, उसे आप अपने पास से शक्ति देते हैं। कहा भी है कि प्रभु द्वारा निर्मित इस ससार में सबसे निकृष्ट वस्तु भयभीत आदमी ही होता है।

एक लेखक ने कहा है—यह प्राकृतिक नियम है कि जिस वस्तु से हम भय खाते हैं या डरते हैं, उसे अपनी ओर आकर्षित करते हैं। उदाहरणार्थ, यदि आप दुर्घटना का भय अपने मन में पालकर रखेंगे तो एक-न-एक दिन दुर्घटना हो ही जाएगी।

यदि आप किसी मनुष्य से पूछें—क्या तुम डरते हो? तो वह झट से उत्तर देगा—नहीं, मैं नहीं डरता, मुझे किसी से भी डर नहीं लगता, पर प्राय लोग यह कहते सुने जाते हैं—मुझे भय है कि यह काम नहीं बनेगा। कुछ लोग यह भी कहते हैं—मुझे भय है कि कहीं मेरा व्यापार चौपट न हो जाए अथवा मुझे आशका है कि मैं असफल न हो जाऊ। कुछ लोग प्राय यह भी कहा करते हैं—मुझे डर है कि कहीं मुझे जुकाम न हो जाए या मैं बीमार न हो जाऊं।

यह ध्यान में रखने की बात है कि जितनी बार आप सन्देह या भय की भावना या आशका को व्यक्त करते हैं, उतनी ही बार आप अपने मन को निषेधात्मक बनाते हैं, उसमें निषेधात्मक भावनाए भरते है और साथ ही उस बात के लिए अपने मन के द्वार खोल देते हैं जिससे आप डरते हैं। इस प्रकार आप अपने मन को निषेधात्मक बनाकर, उसे भय का शिकार बनने के लिए खुला छोड़ देते हैं।

निराशापूर्ण विचार आते ही मन से निराशा की तरगें प्रवाहित होने लगती हैं।

इसके विपरीत यदि आप प्रत्येक बार यह कहें— हा, मैं करूगा; मैं यह कार्य अवश्य करूगा, मैं यह काम कर सकता हू, यह काम अवश्य बनेगा, मैं इसे अवश्य पूर्ण करके रहूगा तो इस प्रकार की स्वीकारात्मक (पॉजिटिव) अथवा विधेयात्मक मानसिक प्रवृत्ति से आप अपने ध्येय को, अपने लक्ष्य को अपने निकट खींच सकेंगे, उसे अपनी ओर आकर्षित कर सकेंगे।

प्रत्येक विचार से, प्रत्येक अभिव्यक्ति से एक तरग पैदा होती है। जब कोई व्यक्ति आपके सामने आकर भय, निराशा अथवा आशकापूर्ण बातें करता है तो आपके मन में भी वैसी ही भयपूर्ण तरंगे तरगित होने लगती हैं। उस समय यह आपके पक्ष में होता है कि आप अपनी निर्भीकता, आशा, उत्साह और उमगों के प्रबल भावों द्वारा भय की उन तरगों को नष्ट कर दें और उनका अपने ऊपर कोई प्रभाव न पडने दें।

किसी व्यक्ति का कोई पूर्वज किसी रोग से मरता है और इस कारण यदि वह यह सोचने लगे कि कहीं उसे भी वही रोग न लग जाए तो उसकी इस भावना से उसका मन विकृत हो जाता है और मन के विकृत होने से शरीर के सामान्य कार्यक्रम में बाधा पडती है। इस प्रकार धीरे-धीरे उस व्यक्ति के उन्हीं अणुओं मे उसी रोग के लक्षण प्रकट होने लगते हैं जिससे वह भयभीत था, डरता आ रहा था। विचारों का विष शरीर के अग-प्रत्यग को विषैला करके उन्हें रोगी बना देता है।

मैं जितनी बार अपने एक व्यापारी मित्र से मिलता हू, वह उतनी ही बार मुझे बताता है कि उसका पाचन-सस्थान बिगड चुका है तथा वह बहुत ही कम खाद्य वस्तुए पचा पाता है।

यह विचारणीय बात है कि ऐसा व्यक्ति कैसे यह आशा कर सकता है कि उसके पाचन-अग ठीक प्रकार से काम करने लगेंगे। पाचन-अग तो बहुत ही सूक्ष्म और कोमल होते हैं। ये मानसिक आशंकाओ और भय से फौरन प्रभावित हो जाते हैं। यदि हम इन्हें निरन्तर निरुत्साहित करते रहेंगे, हर समय अशक्त समझते रहेंगे तो इनमें काम करने की शक्ति कहा से आ सकेगी?

एक डॉक्टर को उसके साथ काम करने वाले डॉक्टर ने बताया कि रक्त में विष फैलने से उसकी मृत्यु हो जाएगी। एक दिन उस डॉक्टर ने अपनी पत्नी और परिवार वालों को बुलाया और उन्हें भी बताया कि रक्त में विष फैलने से मेरी मृत्यु होगी। मृत्यु की आशका के कारण ही उसने अपनी वसीयत भी लिख दी। सयोग की बात है कि ठीक उसी समय उस डॉक्टर की मृत्यु हो गई।

कैलिफोर्निया के एक व्यक्ति ने एक निश्चित समय पर अपनी लीला समाप्त करने का निश्चय किया, पर जब उसने आत्महत्या करने के लिए रिवॉल्वर चलाया तो रिवाल्वर ने जवाब दे दिया, उससे फायर ही नहीं हो सका। इतने पर भी वह व्यक्ति उस दुस्साहसपूर्ण धारणा के कारण अन्दर से इतना टूट चुका था कि थोडी देर बाद ही उसकी हृदय गति बन्द हो गई और वह मर गया।

वास्तव में विचारों के प्रभाव से बचना बहुत ही कठिन है। अत: अपने मन में शुभ विचारों को स्थान दे ताकि आप कुविचारों से होने वाले अनिष्ट से स्वय को बचा सकें।

असफलता, चिन्ता व दुख के विचारों से दूर रहें

असफलता, चिन्ता, दुख और सकट के विचारों को मन में प्रवेश न करने दें। चिन्ता, असफलता, दुख और संकट के विचार व्यक्ति के हर हौसले को पस्त कर देते हैं। और यह सर्वमान्य बात है कि जब आदमी किसी कार्य को घटिया ढंग से करने लगता है—वहीं से उसकी असफलता का आरम्भ हो जाता है।

हमारे जीवन में चारों ओर असफलता का एक भयकर भूत छिपा बैठा है। वह हमारे चारों ओर व्याप्त है तथा वह हर स्त्री और हर पुरुष को अपना शिकार बनाने की ताक में रहता है तथा अवसर मिलते ही उन्हें दबोच लेता है। इस भयंकर भूत ने असख्य व्यक्तियों को उन्नति करने, आगे बढ़ने और प्रगति के मार्ग पर चलने से रोक दिया है, उससे वचित किया है। असफलता का यह भूत हर व्यक्ति से चिपटा हुआ है। इसके कार्य करने का ढग अपना है। वह पहले व्यक्ति को डराता तथा उसे भयभीत करता है। भय से व्यक्ति के मन में सन्देह पैदा होता है, आशंकाएं उठती हैं, सन्देह और आशकाओं से साहस नष्ट होता है और साहस नष्ट होने पर काम करने को मन नहीं करता, कार्य करने की प्रवृत्ति नहीं रहती।

जो व्यक्ति यह सोचता है—मैं यह नहीं कर सकता, उससे काम नहीं हो सकेगा, परन्तु जो व्यक्ति यह सोचता है—मैं कर सकता हू, वह कर लेता है। वह अपने काम में सफल हो जाता है।

मानव-सभ्यता का निर्माण उन व्यक्तियों के द्वारा हुआ है जिनको यह विश्वास था कि हमने जो भी काम हाथ में लिया है, जिसे हमने आरम्भ किया है, उसे हम पूरा करके रहेंगे। उनका प्रण था कि कार्य की पूर्ति के लिए हमें अपनी देह का त्याग भी करना पड़ेगा तो भी हम पीछे नहीं हटेंगे। दूसरी ओर ऐसे लोग प्रगति के मार्ग में बाधक सिद्ध हुए, सभ्यता के मार्ग को अवरुद्ध करने वाले सिद्ध हुए, जिन्होंने यह कहा कि वे कुछ नहीं कर सकते अथवा यह कार्य उनके वश का नहीं।

असफलता की भावना का भूत हर आदमी से चिपटा हुआ है।

असफलता अथवा भय का भूत मनुष्य की सारी शारीरिक शक्तियों को सोख लेता है, उसकी मानसिक शक्ति को समाप्त कर डालता है और शक्ति न रहने पर मनुष्य असमर्थ बन जाता है। भय द्वारा मनुष्य की इतनी शक्ति नष्ट होती है कि मनुष्य कार्य को सर्वोत्तम ढंग से नहीं कर पाता अर्थात जिस अच्छे ढंग से वह कार्य होना चाहिए था, वैसे ढंग से वह पूर्ण नहीं होता, रो-पीटकर घटिया ढंग से भले ही वह उसे पूर्ण कर सके। यह मानी हुई बात है कि जब मनुष्य किसी कार्य को घटिया ढंग से करने लगता है तभी से उसकी असफलता आरम्भ हो जाती है। जो विक्रेता या एजेण्ट सदा यही सोचता रहता है कि ऑर्डर मिलेगा भी या नहीं, उसे ऑर्डर कभी भूले-भटके ही मिलेगा, अन्यथा वह खाली हाथ ही लौटेगा। इसके विपरीत जो विक्रेता या एजेण्ट सदा आशावान रहता है, जिसे पूर्ण विश्वास होता है, वह शायद ही कभी खाली हाथ लौटता है। अनेक विक्रेता अपने ग्राहकों के पास पहुंचने से पहले ही अपने हाथों पिट चुके होते हैं, असफल हो चुके होते हैं।

जो लोग यह सोचते रहते हैं कि वे गाड़ी पकड़ने से रह जाएंगे, वे प्रायः रह ही जाते हैं। जो यह सोचते हैं कि वे कभी भी किसी कार्य के लिए निर्धारित समय पर न पहुंच पाएंगे, वे सचमुच ही नहीं पहुंच पाते।

यदि आपकी मनोवृत्ति विजय की है तो आपकी अवश्य विजय होगी। मनोवृत्ति में भय है तो पराजय ही होगी। भावों और विचारों का रूप तो बहुत सूक्ष्म होता है, परन्तु

उनकी गति बहुत ही द्रुत होती है। वे बडी तेजी से फैलते हैं और यदि दूसरे व्यक्ति सावधान नहीं तो उन पर भी प्रभाव डालते हैं। इसलिए निराशा की बात सुनकर लोग निराश होने लगते हैं और आशापूर्ण विचार और बातें सुनकर आशान्वित हो जाते हैं। ऐसे लोग ढुलमुल प्रवृत्ति के होते हैं। वे किसी भी प्रकार के रचनात्मक कार्य करने में असमर्थ होते हैं। बचपन में जिन भूतों को रात के समय देखकर हम प्रायः डर जाया करते थे, बड़े हो जाने पर भी उनका सन्देह हमारा पीछा नहीं छोड़ता। हम तो उन्हें दूर भगाने का प्रयत्न करते रहते हैं, पर वे हमें जैसे-तैसे घेरे ही रहते हैं।

रात के समय भय हमें अधिक घेरता है, क्योंकि रात के समय कल्पनाशक्ति अधिक क्रियाशील हो जाती है। हर तरह के भय रात को ही अधिक डराते हैं। दुखों, सकटों और रोगों की चिन्ता भी रात को ही अधिक होती है। ऐसा क्यों होता है? दिन के समय ऐसा क्यों नहीं होता? दिन के सम्य हम काम में लगे रहते हैं, हमारा मन भी काम में लगा रहता है और भय तथा चिन्ता के विचार हमारे मन में नहीं आ पाते।

इसी तरह क्रीड़ा, मनोविनोद और विश्राम के समय हम अपने मन में अच्छे विचार रखें, उसमें शुभ सकल्प रहे तो भय आदि विचार हमें कभी भी नहीं सता सकेंगे। अतः हमें चाहिए कि हम भय, असफलता, चिन्ता, दुख और संकट के विचारों को मन में प्रवेश ही न करने दें।

आप यह तो अच्छी तरह जानते हैं कि निद्रा द्वारा ही हम तरोताजा होते हैं। उसी समय अपनी अंगों-प्रत्यंगों की खर्च हुई शक्ति हम पुनः प्राप्त करते हैं। अतः ऐसे समय भय, चिन्ता और सकट आदि शत्रुओं को अपने सोने के कमरे से बाहर ही रखें। उन्हें अपने सोने—विश्राम करने के कमरे में घुसने ही न दें, तभी हम दिन में व्यय हुई शक्तिया अर्जित कर सकेंगे और अगले दिन के काम के लिए तरोताजा हो सकेंगे।

कहीं आप भी उन लोगों में से तो नहीं हैं जो अवकाश के दिन, सायकाल या किसी अन्य फुर्सत के समय भी चिन्ता करते रहते हैं? ऐसे लोग अपने मनोरंजन या विश्राम की घड़ियों का भी पूर्ण आनन्द नहीं ले पाते। उस समय भी वे बेचैन रहते हैं, असन्तुष्ट रहते हैं, अन्यमनस्क रहते हैं और उदासी से भरे बैठे रहते हैं, वे अपने आसपास के वातावरण से भी कोई आनन्द नहीं उठा पाते, वे अपने मिलने वाले व्यक्तियों से भी खुशिया नहीं ले पाते।

यदि आप अपनी चिन्ताओं के व्यर्थ के बोझ को उतारकर फेंक दें तो यह आपके लिए कितनी सुखकर बात होगी। यदि आप अपने मन के द्वार को व्यर्थ की चिन्ताओं, असम्भव कल्पनाओं, मनोरथों, कल्पित पराजयों और विवेकशून्य भय के लिए बन्द कर दें तो निश्चय ही आपका जीवन सुखी हो जाएगा।

जब भय हमें आकर घेर लेता है तब हम कितनी भयंकर और दुर्भाग्यपूर्ण बातें करते हैं। दुर्घटना हो या न हो, परन्तु उसका विचार आते ही हमारे मन में एक तूफान-सा उठ खड़ा होता है और हम काप उठते हैं।

मैं कुछ ऐसे लोगों को जानता हू, जिन्होंने केवल काल्पनिक हानि के डर से अपना सारा व्यापार वास्तविक मूल्य से चौथाई मूल्य पर ही बेच दिया। इस तरह की काल्पनिक असफलता की आशका और हानि के कारण ही अनेक लोग अपना व्यवसाय खोकर अपने जीवन को अन्धकारपूर्ण बना डालते हैं।

बहुत-से व्यापारी मन्दी के भय से प्रयत्न करना छोड़ देते हैं, विज्ञापन करना बन्द कर देते हैं, अधिक परिश्रम भी नहीं करते, खर्च भी घटा देते हैं, अपने काम में लगे आदमियों की संख्या कम कर देते हैं और हाथ पर-हाथ रखकर संकट की प्रतीक्षा करने लगते हैं। मन्दी की बातें करने लगते हैं, पर सोचने की बात यह है कि व्यापार अपने आप तो चलता नहीं, उसके लिए भाग-दौड़ करनी पड़ती है, परन्तु वे लोग भय के कारण अपनी सप्लाई के सभी द्वार बन्द कर लेते है और सारा धन्धा चौपट कर बैठते हैं।

भय से रचनात्मक शक्तिया कम होती हैं तथा आशा-आकांक्षाएं कुचली जाती हैं। इससे व्यक्ति के प्रयत्नों में भारी कमी आती है और उत्पादन भी बन्द हो जाता है। भय के कारण मस्तिष्क पर परदा पड जाता है और मन डरपोक हो जाता है।

जब व्यक्ति भयग्रस्त हो जाता है तो वह अपनी शक्तियों का अपव्यय करने लगता है। अनुचित ढग से उसका उपयोग करता है और सही स्थान पर भी उसका प्रयोग नहीं कर पाता। उस समय वह अपनी शक्ति का प्रयोग सोच-समझकर भी नहीं करता। जिसके मस्तिष्क में भय बैठ जाता है वह निष्क्रिय हो जाता है और उसके कार्य करने की शक्ति व्यर्थ हो जाती है। उस समय मन ऐसी उलझन में फस जाता है कि उसे उस समय सीधा रास्ता भी दिखाई नहीं देता। निश्चय ही ऐसी स्थिति में वह काम करना बन्द कर देता है।

प्राय· जनसमूह में भाषण करने वाले व्यक्ति भयभीत हो जाते हैं। वे न तो ठीक से बोल ही पाते हैं और न ही अपने मन की बात कह पाते हैं। उन्हें भय इसलिए भी आ घेरता है कि कहीं वे ठीक से भाषण कर भी पाएंगे या नहीं। जूलिया वार्ड ने वाशिंगटन इरविंग के सम्बन्ध में एक घटना लिखी है—न्यूयार्क के प्रमुख नागरिकों की ओर से चार्ल्स डिकन्स के सम्मान में भोज दिया गया था। मैं भी कुछ अन्य महिलाओं के साथ वहां उपस्थित थी। वाशिंगटन इरविग सभापति थे। उन्हें स्वागत भाषण करना था। वह भाषण करने के लिए खड़े हुए। इसी बीच मेरे पास बैठे हुए व्यक्तियों में फुसफुसाहट हुई—यह भाषण पूरा नहीं हो सकेगा। सदा ऐसा ही हुआ करता है। इरविंग ने बोलना आरम्भ कर दिया। वह दो वाक्य ही बोल पाए थे कि उनके मित्रों ने उनके उत्साहवर्द्धन के लिए तालियां बजाईं। इरविन ने समझा, लोग मजाक-उड़ा रहे हैं। बस, इतने से ही वे अपने आप पर काबू न रख सके और घबराकर बोले—मैं अब और अधिक कुछ कह पाने में असमर्थ हू—और इतना कहकर वे बैठ गए।

इसी भय के कारण अनेक पादरी, अध्यापक, कथावाचक और अभिनेता भी असफल हुए हैं। भय के कारण वह अपनी बात नहीं कह पाते और उपहास का पात्र बनते हैं।

भय के कारण योग्यता समाप्त हो जाती है अथवा आप यू कह सकते हैं कि भय योग्यता को समाप्त कर देता है। चिन्ता और भय से मन में घबराहट और बेचैनी पैदा हो जाती है और व्यक्ति अपने उद्देश्य तक नहीं पहुच सकता अथवा उसमें असफल रह जाता है।

भाषण करने वालों को मंच पर इस विश्वास से जाना चाहिए कि उनका सम्बन्ध, शक्ति के अपार भण्डार, उस प्रभु से जुड़ा हुआ है और उसी के उद्देश्य की पूर्ति के लिए वह भाषण करने खड़े हुए हैं तथा दिव्य शक्तियों का वह स्रोत, प्रभु, उनके इस कार्य में उनके साथ है। जो भाषणकर्ता इस प्रकार के विचार रखेगा, वह अपने ध्येय में कभी भी असफल नहीं होगा।

चिन्ताग्रस्त मस्तिष्क विचारों को प्रकट करने की शक्ति खो बैठता है।

हमें यह बात भी सदा याद रखनी चाहिए कि छोटी-से-छोटी चिन्ता या छोटे-से-छोटे भय की भावना भी हमारे शरीर पर बुरा प्रभाव छोड़ जाती है, जिसके कारण शरीर का सन्तुलन बिगड़ जाता है और उससे हमारा शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य नष्ट हो जाता है। चिन्ता से ग्रस्त अथवा भय से त्रस्त मन विचारों को प्रकट करने की शक्ति खो बैठता है, परिणामस्वरूप ऐसी मनःस्थिति से हमारे सभी कार्य असफल हो जाते हैं। जब मन ही साथ नहीं देगा तो शरीर कार्य करने में सफल कैसे होगा?

निर्धनता की भावना घातक शत्रु है

निर्धनता के विचार मात्र से ही हमारी जीवनी-शक्ति पर भयंकर चोट पड़ती है। हम बेचैन हो जाते हैं, ढीले पड़ जाते हैं, हमारे मन में एक शिथिलता-सी आ जाती है। यह कष्ट शारीरिक कष्ट से भी दुखदाई होता है, अतः निर्धनता या गरीबी की कल्पना अथवा भावना को आस-पास भी न आने दें।

आप यह तो जानते ही हैं कि यह जीवन एक नाटक है और हम इस जीवनरूपी नाटक में विभिन्न रोल अदा कर रहे हैं। इस जीवनरूपी नाटक में अभिमान या गर्व का भी एक महत्वपूर्ण रोल है। मनुष्य के अभिमान पर की गई एक चोट शारीरिक चोट से अधिक भयकर और कष्ट देने वाली होती है। यदि हम अपने लिए और अपने परिवार के लिए ही नहीं कमा पाएगे, उसका ही भरण-पोषण नहीं कर पाएंगे तो लोग क्या कहेंगे—यह विचार जब मनुष्य के मन में पैदा होता है तो वह कांप उठता है। इस विचार से, इस भावना से हमारे अभिमान पर, हमारे अहंभाव पर गहरी चोट लगती है। लोग सोचते हैं कि जो मनुष्य कमा नहीं सकता, वह मानसिक दृष्टि से हीन है या उसके दिमाग का कोई पुर्जा ढीला है, उसमें कोई कमी है।

हमारे लिए यह बात सहना बड़ा कठिन होता है कि हमारे विषय में कोई व्यक्ति यह कहे कि हम अपना और अपने परिवार का निर्वाह सम्मानपूर्वक नहीं कर सकते या हम उनका भरण-पोषण करने में असमर्थ हैं। यह बात हम पर भारी चोट करती है। इस तरह की चोट का विचार आते ही हमारे प्रयत्नों में गडबड़ी हो जाती है, उनमें बाधा पडती है और हमारा साहस, उत्साह, हौसला और उमंग समाप्त होने लगते हैं।

जब मन्दी आती है, जब व्यापार ठप्प हो जाता है तो इस तरह का विचार, इस तरह का भय कि हमारा गुजारा कैसे होगा, अनेक लोगों के मन में आता है और वे उस विचार से बहुत कष्ट उठाते हैं। उन दिनों यह भावना महामारी की तरह फैलने लगती है। उस समय कोई यह नहीं सोचता कि इस भय की भावना से हमारी वास्तविक कठिनाइयों को हल करने में कोई सहायता नहीं मिलती तो हम भय की इस भावना को, इस आशंका

को इस विचार को अपने मन से बाहर क्यों नहीं निकाल देते और अपने कार्य की सिद्धि के लिए कठोर परिश्रम क्यों नहीं करने लग जाते? यदि हम हाथ-पैर ढीले छोडकर बैठ जाएगे तो यदि किसी सकट की, किसी अभाव की सभावना न भी होगी, तब भी वह सकट आ जाएगा और अभाव हमें आ घेरेंगे।

जब हम देखते हैं कि हम अपने सगी-साथियों या मिलने वालों के स्तर के अनुरूप अपने परिवार का पालन नहीं कर सकते तो हमारे अभिमान पर गहरी चोट पड़ती है। घर की महिलाओं पर तो इसका विशेष असर पड़ता है, उनके लिए यह बहुत बुरा सिद्ध होता है। एक मां को उस समय बहुत कष्ट होता है जब वह देखती है कि उसके बच्चे दूसरे लोगों के बच्चों के समान बढ़िया पोशाक नहीं पहन सकते। जिस समय गृहिणी यह समझती है कि वह अपनी इच्छा से खर्च नहीं कर सकती अथवा वह जो वस्तु खरीदना चाहती है उसे नहीं खरीद सकती तो उसे बहुत कष्ट होता है। उसका हृदय उसे अन्दर-ही-अन्दर कचोटता है। यह दुख और कष्ट उस समय और भी बढ़ जाता है, जब वह अपने मिलने वालों के प्रति यह अनुभव करती है कि वे लोग तो वे चीजें खरीद सकते हैं जिन्हें वह नहीं खरीद सकती। उस समय उसे अपनी असमर्थता पर बहुत ही लज्जा और सकोच का अनुभव होता है।

असंख्य लोग ऐसे होते हैं जिनके लिए निर्धनता का रोग असाध्य बन चुका है। इसका कारण यही है कि उन्हें गरीबी का भय सामने आकर सताता रहता है। इस प्रकार हर समय भय को अपने मन में पालते रहना सम्पन्नता का शत्रु है। ऐसी स्थिति में आपके घर में लक्ष्मी का निवास हो ही नहीं सकता। जिन व्यक्तियों की मनोदशा ऐसी रहती है वे कभी धनी बन ही नहीं सकते। उन्हें सदा निर्धनता में ही अपने दिन काटने पड़ेंगे।

हमारा एक परिचित व्यक्ति है। वह बहुत ही ईमानदार और कठिन परिश्रम करने वाला है। उसने अपने जीवन को सफल बनाने का बहुत प्रयत्न किया, परन्तु सफल न हो सका। बात यह थी कि वह अपने बचपन में अनाथगृह में पला और यह बात उसके मन से निकलती ही नहीं थी। केवल यही एक भावना सदा उसकी प्रगति में बाधक रही। वह इस डर से कभी भी मुक्त न हो सका, कभी भी छुटकारा न पा सका। मैं कितना भी प्रयत्न क्यों न करूं, कितना भी कठिन परिश्रम क्यों न करू, अवश्य कोई-न-कोई ऐसी घटना घटेगी कि मेरी सारी सम्पत्ति चली जाएगी और मैं निर्धन हो जाऊगा—अनेक वर्षों तक वह इस भावना को अपने मन से न निकाल सका और अन्तत अपनी वृद्धावस्था में उसे 'पूअर हाउस' में जाना पड़ा।

एक और व्यक्ति है। उसकी आय काफी अच्छी है, परन्तु उसका मन सदा ही निर्धनता की आशंका से भयभीत रहता है, वह सदा ही डरता रहता है कि मैं कहीं गरीब न हो जाऊ। इस व्यक्ति ने इसी प्रकार की मनोदशा के कारण कभी भी अपने उपार्जित धन से सुख नहीं उठाया और न ही कभी अपने आपको धनी अनुभव किया। इस बात को आप यू भी कह सकते हैं कि सब-कुछ होते हुए भी उसे कभी वास्तविक जीवन जीने का मौका ही नहीं मिला।

असंख्य लोगों के लिए निर्धनता का भय एक असाध्य रोग बन चुका है।

बन्धु! क्या तुमने अपने जीवन के अनेक अमूल्य वर्ष इस भय की वेदी पर बलि नहीं चढ़ा दिए? क्या यह दुत्कारने योग्य राक्षस तुम्हारे मन के राज्य पर मंडराता नहीं रहा? इसने तुम्हारा क्या भला किया है? यही न कि तुम्हें काम-काज करने से वंचित कर दिया है, तुम्हें एक प्रकार से पंगु, निठल्ला व डरपोक बना दिया है, लेकिन आप अब भी अपना भला चाहते हैं तो इसे अपने मन से बाहर निकालकर कहीं दूर ले जाकर दफना दें, कहीं दूर ले जाकर गाड़ दें, जहां से यह फिर लौटकर न आ सके तथा अपना मनहूस चेहरा न दिखा सके।

प्राय देखने में आता है कि अनेक व्यक्ति अपने जीवन का अधिकांश भाग धन कमाने की समस्या का हल ढूंढने में ही लगा देते हैं और जीवन को बचाने के लिए जीवन का बहुत ही कम भाग खर्च कर पाते हैं। हम अपने घर को स्वर्ग बनाने में, अपने परिवार और मित्रों के साथ आनन्द मनाने में जीवन का बहुत ही कम भाग लगा पाते हैं। हारे-थके, चिन्ताओं से लदे हुए अपने परिवार में जाते हैं, जीवन से ऊबे हुए अपने मित्रों से बातें करते हैं और फिर पुकारते हैं—आनन्द कहां है?

निर्धनता के भय का भयंकर भूत—जो कि केवल हमारी कल्पना में विद्यमान है—हमें उस समय भी जीवन के आनन्द का उपभोग नहीं करने देता, जबकि हमारी आय काफी होती है। जिन दिनों आय अच्छी होती है, उन दिनों भी आय बन्द हो जाने के डर से लोग आतंकित रहते हैं। कल्पित निर्धनता का भूत अच्छी-भली आय के दिनों में भी पीछा नहीं छोड़ता।

हम कहीं निर्धन न हो जाएं? भय के इस कल्पित भूत ने ही मानव-जाति को दुखी बना रखा है उसे दीन-हीन बना रखा है। यह हमारी विकृत अवस्था का द्योतक है। हम

उससे छुटकारा नहीं पा सकते उससे छुटकारा पाने में अपने आपको विवश पाते हैं यह अवस्था स्वाभाविक नहीं, यह कल्पित और विकृत है। यह एक मनोविकार है और इस पर प्रबल इच्छा द्वारा ही विजय प्राप्त की जा सकती है।

निर्धनता या गरीबी को दूर करने के लिए आपको निर्धनता के विचारों को ही दूर करना होगा। निर्धनता के विचारों को दूर किए बिना निर्धनता दूर नहीं की जा सकती है और निर्धनता के विचारों को दूर किए बिना आप धनी भी नहीं हो सकते। जब तक आप रोगी हैं, बीमार हैं, आप स्वस्थ कैसे हो सकते हैं? इसके विपरीत जब आप रोग को हटा देंगे तो रोगी नहीं रह सकेंगे।

इसी प्रकार निर्धनता का विचार भी एक रोगी विचार है। इस रोगी विचार को हटाकर ही जब आप सम्पन्नता के विचारों की स्थापना करेंगे तो उसी दिन से सम्पन्न होने लगेंगे। जब तक आप निर्धनतारूपी भय के राक्षस को अपने मन मे बिठाए रहेंगे, तब तक लक्ष्मी आप पर कैसे दयालु होकर आपके पास निवास करेगी? निर्धनता के इस कल्पित भूत को भगाने के लिए आपको प्रबल उत्साही होना होगा, आपको कठिन परिश्रम करना पडेगा। आप उत्साही भी न हों और उद्यमी भी न हों, और ऐसी स्थिति में आप निर्धनता के भूत को भगा दें, यह असम्भव है।

बन्धुवर! आप अपने मन में भय के राक्षस की चाहे जितनी बडी मूर्ति बना लें, निर्धनता का चाहे जितना बड़ा काल्पनिक चित्र बना लें, यहा तक कि भिक्षावृत्ति या भीख मागने की भी कल्पना कर लें, परन्तु उस समय आपको यह शिकायत नहीं करनी होगी कि आप अधिक निर्धन होते जा रहे हैं। यह स्पष्ट है कि आपने जिस वस्तु को अपनी ओर आकर्षित किया है, वही तो आपके पास आ रही है, अन्य दूसरी वस्तु तो नहीं आ रही है। आपकी योजना के अनुसार ही आप परिणाम प्राप्त कर रहे हैं, वैसा ही फल आपको मिल रहा है। फिर आप घबराते क्यों हैं?

यदि आप निर्धन होने की आशंका से भयभीत रहते हैं तो निश्चित रूप से आप उस प्रभु की सत्ता से इनकार करते हैं, जिसके साधारण-से इशारे या सकेत पर आपको सभी ऋद्धि-सिद्धिया प्राप्त हो सकती हैं, जो ससार के सारे भण्डारों का स्वामी है। प्रभु सर्वशक्तिमान है, वास्तव में उससे अपना नाता तोड़कर मनुष्य अपने आप क्षुद्र बन जाता है। जब वह 'मैं' का अर्थ केवल 'मेरे शरीर मात्र' से लेता है, जब वह अपने आपमें सीमित हो जाता है, तब ससार से उसके सारे सम्बन्ध विच्छिन्न हो जाते हैं, तब वह बिल्कुल अकेला रह जाता है और क्या अकेला चना भाड को फोड़ सकता है? इसलिए चिन्ताओं और निर्धनता की आशंकाओं को मन से निकाल दीजिए।

प्राचीनकाल में राजा-महाराजा यही सोचकर डरते रहते थे कि कहीं उनके भोजन में विष न मिला दिया गया हो। ऐसी परम्परा थी कि उनके भोजन करने से पहले या तो राजा का कोई विश्वासपात्र नौकर उसे चखता था या किसी पशु-पक्षी को खिलाकर देखा जाता था कि भोजन में कहीं विष तो नहीं है। इस प्रकार वे खाने से पूर्व आश्वस्त होना चाहते थे। रूस के जार निकोलस और टर्की के सुल्तान तथा अनेक अन्य राजा ऐसा करते थे।

बहुत-से लोग कहेंगे कि इस प्रकार के भय की स्थिति में जीवन बिताना भी कोई जीवन है, परन्तु ससार के करोड़ों लोगों में से ऐसे कितने व्यक्ति निकलेंगे जो किसी-न-किसी प्रकार के भय की छाया में अपना जीवन नहीं बिता रहे हैं? वस्तुतः उन्हें ज्ञात ही नहीं होता कि उन्हें डर किस बात का है। इतने पर भी किसी अज्ञात भय की छाया ने उन्हें घेर रखा है और मजा तो यह कि एक प्रकार के भय की अवधि समाप्त होने पर वही भय रूप बदलकर फिर हमारे मन में घर करने लगता है। यह भयरूपी राक्षस बड़ी तेजी से अपने रूप बदलता रहता है। प्रत्येक मनुष्य को किसी-न-किसी प्रकार की आशंका ने घेर रखा है कि न जाने कब, कौन-सी अज्ञात दुर्घटना हो जाए। प्रत्येक मनुष्य किसी-न-किसी अज्ञात चिन्ता से ग्रसित है।

खोज और अनुभवों से यह पता लगाया गया है कि विभिन्न प्रकार के भय सख्या में पांच हजार से भी अधिक हैं। वास्तव में भय के अनेक रूप हैं। वह अनेक रूपों में प्रकट होता है। चिन्ता, फिक्र, ईर्ष्या, कायरता, दब्बूपन, सन्देह, अन्धविश्वास, असहनशीलता, अधिक लोभ या कंजूसी—यह सब केवल भय के ही अनेक रूप हैं। यह किसी-न-किसी रूप में प्रकट होते ही रहते हैं और जब यह प्रकट होते हैं तो मनुष्य के शरीर और उसके अगों को अकर्मण्य बना देते हैं। इस प्रकार मनुष्य पंगु बन जाता है, वह किसी काम का नहीं रहता। भय मानव जाति का प्रबलतम शत्रु है। वह उसकी प्रसन्नता व हंसी-खुशी को लूट लेता है और कार्य-कुशलता को समाप्त कर देता है।

हम सब यह जानते हैं कि भय मनुष्य के प्राण तक ले सकता है। महामारी के दिनों में जितने लोग भय के कारण रोगी होकर मौत का शिकार होते हैं, उतने वास्तविक रोगी नहीं होते। रोग, महामारी और युद्ध में उतने व्यक्तियों की मृत्यु नहीं होती जितने भय से मरते हैं। जब हैजा फैलता है तो हैजे से डरने वालों को जल्दी हैजा होता है। जो डरते नहीं, उन्हें कुछ भी नहीं होता, वे बचे रहते हैं।

आज हजारों नहीं, लाखों-करोड़ों आत्माएं भय की दास हैं, उसकी गुलाम हैं। हम गुलामी की प्रथा को दूर करने के लिए आन्दोलन करते हैं, अत्याचारों के प्रति जद्दोजहद करते हैं, परन्तु ससार के लोगों को भय के अत्याचारी पंजे से मुक्त करने के लिए कुछ भी नहीं करते। साथ ही इसके जो विभिन्न रूप हैं, उनसे बचने के लिए भी हम कोई आन्दोलन नहीं छेड़ते। ऐसा दिखता है कि मनुष्य ने इस भय के आगे अपने हथियार डाल दिए हैं और जीवन भर के लिए अपने को उसकी गुलामी की जंजीरों में जकड़ दिया है। इतना होने पर भी जब आप भय की वास्तविकता का पता लगा लेंगे तो आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि भय तो केवल आपकी कल्पनामात्र है, उसकी कोई मूर्ति नहीं। वह तो शेखचिल्ली का खोखला सपना भर है, उसकी बुनियाद कहीं भी नहीं है। उसकी वास्तविकता या अस्तित्व तो कहीं है ही नहीं। यह भय की कल्पना साबुनयुक्त पानी के बुलबुले की तरह क्षण भर में लुप्त हो जाने वाली है, बच्चों के गुब्बारे की तरह पल भर में फूट जाने वाली है।

इससे छुटकारा पाने का एक ही साधन है कि आप यह परवाह ही न करें कि इसका

भयकर है यह साहस और सामान्य बुद्धि के साधारण से स्पर्श से ही मिट
ी भयकर-से-भयंकर मूर्ति उत्साह के छूने मात्र से खण्ड-खण्ड हो जाएगी।
ख यही है कि हम माता की गोद से लेकर मृत्युपर्यन्त उस काल्पनिक दैत्य
हैं, जिसकी कहीं संज्ञा ही नहीं। शेखचिल्ली के सपने के समान जो केवल
जिसका कहीं कोई अस्तित्व ही नहीं, परन्तु कोरे काल्पनिक होने के
ा होने के बावजूद वह मूर्ति आंधी और तूफान की तरह बार-बार हमारे
खडी हो जाती है और हमारी प्रगति की राह को रोक देती है, जिससे
ग हो जाते हैं, हमारे निश्चय बालू की दीवार की भांति टूट-फूट जाते हैं।
इस बात के अनेक उदाहरण भरे पड़े हैं कि भयग्रस्त होने पर मनुष्य ने कैसे-कैसे
धन्य कार्य किए हैं। इन उदाहरणों से स्पष्ट हो जाएगा कि भय का राक्षस
है।

हमें भय पर चोट करके उसे सदा के लिए समाप्त कर देना चाहिए।

नहीं कि मनुष्य इसका मुकाबला नहीं कर सकता। दृढ़ विश्वास और शुद्ध
सका मुकाबला किया जा सकता है। यह बात उसी प्रकार ध्यान में रखें कि
सांप पर चोट करें तो हमें उसे सदा के लिए समाप्त कर देना चाहिए। यदि
तो फिर कभी-न-कभी हमसे अवश्य बदला लेगा। इसी प्रकार यदि हम भय
हैं तो हमें उसे भी सदा के लिए नष्ट कर देना चाहिए, इसका नामोनिशान
हिए। यदि हम उसे नष्ट न कर सके तो सांप की तरह भय भी हम पर
भारी चोट करेगा और उस समय हमें अपने आपको संभालना कठिन हो जाएगा।

कल की चिन्ता न करें

कल क्या होगा? परिवार का भरण-पोषण कैसे होगा? होगा भी कि नहीं? लिया हुआ कर्ज उतरेगा भी या नहीं? इस प्रकार की अनेक चिन्ताएं हमारी कार्य करने की शक्ति को निर्बल बना देती हैं। फलस्वरूप हम आने वाले कल के कार्यों को विश्वासपूर्वक नहीं कर पाते और असफल हो जाते हैं।

यदि कोई यह कहे कि चिन्ता से प्रतिदिन की समस्याओं को सुलझाने में सहायता मिलती है तो सर्वथा गलत है। इससे समस्याएं सुलझने के बजाय उलझती हैं व और कठिन हो जाती हैं। जब हम चिन्ताग्रस्त होते हैं तो हममें सोचने की शक्ति नहीं रहती, हमारी शक्ति लुप्त हो जाती है और कार्य करने का बल समाप्त हो जाता है।

कल की रोटी की चिन्ता ने मनुष्य को जितना सताया है, उतना शायद अन्य किसी चिन्ता ने नहीं सताया। यह रोटी की चिन्ता आती कहां से है? हमें अपने तथा अपने परिवार के लोगों के लिए प्रतिदिन रोटी की आवश्यकता होती है। जब हम रात को चारपाई पर सोने के लिए लेटते हैं तो हमें नींद नहीं आती, उसकी जगह कल की रोटी की चिन्ता आ घेरती है। इससे हम वह बहुमूल्य शक्ति खो बैठते हैं जो कल प्रात:काल हमारे काम आने वाली थी, जिसके सहारे हमने दिन भर काम करना था। चिन्ता उसे चाट जाती है। अगले दिन प्रात हमने जो कार्य करने थे, जो सघर्ष करना था, उसके लिए हम तैयार नहीं हो पाते अर्थात हमारी तैयारी ही नहीं हो पाती। कर्जे की चिन्ता, भविष्य की चिन्ता तथा अन्य अनेक प्रकार की सामान्य चिन्ताएं हमारी शक्ति को पूर्णतया नष्ट नहीं तो कम अवश्य कर देती हैं।

भय और चिन्ता से कोई रचनात्मक, कोई विधेयात्मक कार्य हुआ है तो केवल यह कि उन्होंने अनगिनत स्त्री-पुरुषों को निकम्मा बनाया है, उनकी कार्यकुशलता को नष्ट-भ्रष्ट किया है। अनेक नर-नारी भय के कारण आत्महत्या जैसे जघन्य अपराध कर बैठते हैं और बहुत-से लोग तो इसके चक्कर में पडकर त्रस्त और आशंकित होते हैं तथा सकट की प्रतीक्षा में दुख भोगते रहते हैं। जो संकट अभी आया ही नहीं, हो सकता है उसके आने की संभावना भी न हो, परन्तु वे अवश्य दुखी रहते हैं और अपने जीवन को भी अशान्त और दुखी बनाए रहते हैं।
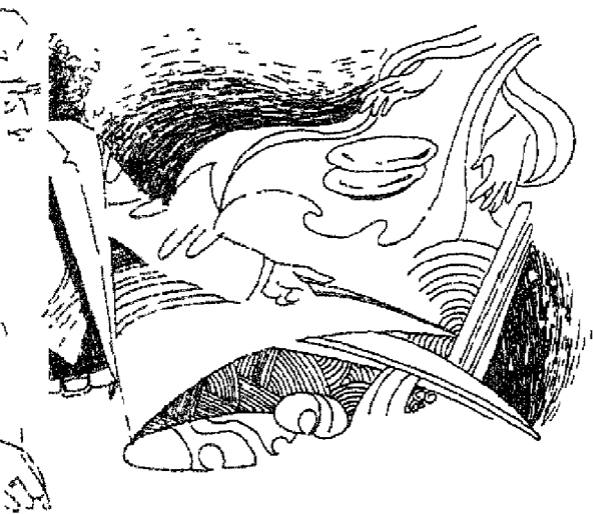
ल की रोटी की चिन्ता ने मनुष्य को सबसे ज्यादा सताया है।

ताओं के कारण बहुत-से लोग अपने ऊपर अत्याचार करते रहते हैं और
हते हैं। ऐसे समय वे कुछ काम नहीं कर पाते, क्योंकि उनकी शक्तिया
'। उन्हें अपना भविष्य निर्धनता के सकट से ग्रस्त दिखाई देता है या वे
ों की कल्पना से ही भयभीत रहते हैं। उन्हें अपने भविष्य में बुरे दिन
वे अपने भविष्य को दुर्भाग्यपूर्ण मानकर अपने वर्तमान सुख को भी नष्ट
हें ऐसा दिखता है कि दुर्भाग्य उनका पीछा कर रहा है।

का जीवन व्यर्थ की ऐसी अनहोनी कल्पनाओं से ही निरर्थक बन जाता
वे स्वयं होते हैं, क्योंकि वे समझते हैं कि आने वाले दिन आनन्ददायक
नहीं होंगे। उनके विचार से जब वह समय आ जाता है और उनकी
छ होती है और कोई सकट भी नहीं आता तो वे और आगे के दिनों
ी ही दुश्चिन्ताएं पाल लेते हैं। इस प्रकार उनका सारा जीवन इसी
न्ताओं में घिरा रहता है और इसी तरह बीत जाता है।

ने अपने पति से कहा—"हमें छः दिन के भीतर मकान का भाडा देना है।"
ठीक है किराया देना है, पर पाच दिन पहले से चिन्ता नहीं करनी है।
., पर चिन्ता नहीं करनी है, क्योंकि किराएनामे में चिन्ता करने की
ो है।"

कि आप भी चिन्ता न करें। हिसाब करें, काम की योजना बनाएं और
यत्न करें। प्रतिज्ञा करें कि आप उस योजना को पूर्ण कर देंगे, परन्तु

चिन्ता नहीं करेंगे। ***चिन्तन कीजिए चिन्ता मत कीजिए। चिन्तन और चिन्ता में आकाश-पाताल का अन्तर है।*** चिन्तन है—बात के हर पहलू पर विचार करना और चिन्ता है अनहोनी बात से अपने मन में भय को प्रश्रय देना। चिन्तन आवश्यक है, जबकि चिन्ता एकदम निरर्थक है।

एक मनुष्य की एक आख फूट गई थी। उसे बड़ा कष्ट हुआ, परन्तु उस कष्ट से भी अधिक कष्ट उसे इस चिन्ता से हुआ कि अब आगे उसे क्या-क्या कष्ट उठाने होंगे। इस परेशानी में उसे दो दिन नींद नहीं आई और इस तरह जागने से उसकी दूसरी आंख में भी पीड़ा होने लगी। उसे यह चिन्ता हो गई कि कहीं दूसरी आंख भी न जाती रहे, पर जब डॉक्टर ने उसे समझाया कि तुम चिन्ता छोड़ दो और विश्राम करो। तुम्हारी आंख बिल्कुल ठीक है, एक-दो दिन में जो पीड़ा है वह भी जाती रहेगी तो उस व्यक्ति ने डॉक्टर के परामर्श के अनुरूप कार्य किया और वह स्वस्थ हो गया।

हम सबकी भी यही स्थिति है। हम एक आंख की चिन्ता में दूसरी को भी सकट में डाल लेते हैं। कष्ट स्वय में इतना दुखदायी नहीं होता, जितनी चिन्ता होती है।

बहुत-से लोग सोचते रहते हैं कि उन्हें घर से बाहर जाने में बड़े बड़े कष्ट उठाने पड़ेंगे। इस भय के कारण ही वे घर से बाहर नहीं निकलते। कूपमण्डूक बने रहते हैं। वे सब प्रकार की हानि सह लेते हैं, अपनी प्रगति के मार्ग को खोलते नहीं और मन में उस बाधक भय को प्रश्रय दिए रहते हैं, उसे पाले रहते हैं।

सबसे सीधा और लाभप्रद मार्ग है—चिन्ता छोड़ दो और काम करो। जो बात गई सो बीत गई। उस पर पछतावा मत करो। पछतावे से कुछ भी नहीं होगा और जो आने वाला है उसकी चिन्ता भी मत करो। बस, काम करो।

अपनी मनोवृत्ति को, मन.स्थिति को चिन्ता के गन्दे नाले में मत बहने दीजिए। इससे कुछ लाभ नहीं होगा। चिन्ता का प्रवाह आपकी शक्तियों को बहा ले जाएगा। अत: अपनी कार्यशक्ति को व्यर्थ ही नष्ट होने से बचाइए। अपनी शक्ति को रचनात्मक व विधेयात्मक कार्य में लगाइए और काम का आनन्द उठाइए। प्रसन्नतापूर्वक काम में लगे रहने से आनन्द-ही-आनन्द प्राप्त होगा। कार्य का आनन्द लूटिए। जो आनन्द आपको स्वत: प्राप्त हो सकता है, उसे क्यों हाथ से जाने देते हैं?

ईर्ष्या, चिन्ता, फिक्र, घृणा, होड़, प्रतिशोध—यह सब भय के ही अंकुर हैं, उसी की सन्तान हैं। भय के थोड़े-से ही बीज बोकर आप अपने मन में अनेक विषैले वृक्षों का जमघट लगा देते हैं। भयग्रस्त लोगों के मस्तिष्क के सैल निश्चित रूप से क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। भय और चिन्ता हमारे रक्त और नाड़ी-सस्थान में विष का काम करते हैं। उनमें इनके कारण रासायनिक परिवर्तन होते हैं और हमारा स्वस्थ चिन्तन नष्ट होने लगता है। हमारा मस्तिष्क स्वस्थ रूप में कार्य करना छोड़ देता है। हमारा मन सम्भावित संकटों की घटनाओं से घिर जाता है। व्यर्थ की आशकाएं हमारे विचारों को धुंधला बना देती हैं। इससे हमारे मन की कुशलता नष्ट होती है।

भय और चिन्ता करने पर रक्त भी शुद्ध नहीं रह सकता। स्वस्थ चिन्तन के लिए मस्तिष्क को शुद्ध रक्त अवश्य ही मिलना चाहिए। यदि उसे शुद्ध रक्त नहीं मिलेगा तो वह अपना काम भली प्रकार नहीं कर सकेगा और इसका परिणाम यह होगा कि आपको सर्वोत्तम विचार प्राप्त नहीं होंगे।

थोड़ा-बहुत अस्वस्थ तो सभी होते हैं, परन्तु बहुत-से लोग थोड़ा-सा अस्वस्थ होते ही भय और चिन्ता के कारण अपने स्वास्थ्य को और भी बिगाड लेते हैं। भय और चिन्ता के भावों के कारण रोग नहीं हटता और रोग बने रहने से चिन्ता और भय समाप्त नहीं होते। इस प्रकार अन्योन्याश्रित होकर एक ओर तो रोग उस व्यक्ति को कष्ट पहुचाता है और दूसरी ओर भय और चिन्ता उसे कुचल डालते हैं। परिणाम—दो पाटन के बीच में साबुत बचा न कोय। उस व्यक्ति का उठना-बैठना भी कठिन हो जाता है।

इसके विपरीत, भयंकर-से-भयंकर रोग में भी यदि धैर्य रखा जाए, होश-हवास कायम रखे जाए, मन में चिन्ता के भाव न आने दिए जाए, उसे स्थिर रखकर उचित उपचार और पथ्यापथ्य का ध्यान रखा जाए तथा इच्छाशक्ति को दृढ रखकर रोग को दूर करने की ओर प्रेरित किया जाए तो रोग निश्चित रूप से दूर होने लगता है।

अनेक बार हमारी चिन्ताओं का कारण केवल यह होता है कि हम धन को अपने जीवन में अत्यधिक महत्व दे देते हैं और अन्य बहुत-सी महत्वपूर्ण बातों को गौण समझ लेते हैं। धन के महत्व को हम इतना बढ़ा-चढ़ा देते हैं कि अन्य अनिवार्य बातों की उपेक्षा हो जाती है अथवा हम जानबूझकर उन्हें महत्व ही नहीं देते। इन बातों का परिणाम यह होता है कि धन तो हमें प्राप्त हो या न हो, परन्तु हम अपने स्वास्थ्य, सौजन्य, मित्रता, आशा-आकांक्षा आदि अनेक श्रेष्ठ और महत्वपूर्ण वस्तुओं में से किसी-न-किसी से अथवा सबसे ही हाथ धो बैठते हैं। हम अपना स्वास्थ्य नष्ट कर देते हैं, अपने मित्रों से वैमनस्य मोल ले लेते हैं, सौजन्यपूर्ण व्यवहार को भी तिलाजलि दे बैठते हैं तथा हमारी महत्वपूर्ण आशा-आकांक्षाएं नष्ट हो जाती हैं और कई बार यह सब खोकर भी धन हमारे हाथ नहीं लगता।

हमारे झूठे अभिमान या मिथ्या अहकार का भी हमारी चिन्ताओं से गहरा सम्बन्ध है। झूठी प्रतिष्ठा के चक्कर में ही हम बहुत-सी चिन्ताएं लगा लेते हैं। कई बार वास्तविक कष्ट या कठिनाई के कारण हम उतनी चिन्ता नहीं करते जितनी अपनी हसरतों के पूरा न होने के कारण करते हैं। हमें चिन्ता इस बात की होती है कि हम अपनी हसरतों को पूरा नहीं कर सके। मनुष्य को यह समझना चाहिए कि वह सर्वशक्तिमान तो है नहीं कि उसकी सभी इच्छाएं, आकांक्षाएं और हसरतें पूरी हो जाए। जब भी हमारी कोई इच्छा पूरी नहीं होती तो हम अनुभव करते हैं कि हमारे अभिमान पर गहरी चोट लगी है।

हमें एक ओर तो यह चिन्ता रहती है कि हमारे पास दुनिया भर की चीजें होनी चाहिए, हमारे पास यह भी हो, हमारे पास वह भी हो। किसी को कार में बैठा देखकर हम सोचने

लगते हैं कि हमारे पास यह कार भी होनी चाहिए। किसी के पास बढ़िया मकान है तो हम सोचते हैं कि हमारे पास भी ऐसा खूबसूरत मकान होना चाहिए। वस्तुतः बात यह है कि अधिकाश पदार्थों की इच्छा हम इसलिए करते है कि यदि वह चीज हमारे पास होगी तो हम दूसरों की नजरों मे बडे आदमी बन जाएगे। हम यह नहीं सोचते कि हम इस चीज को खरीद भी सकते हैं या नहीं अथवा इसकी हमें आवश्यकता भी है या नहीं। इसलिए हम आवश्यक-अनावश्यक सभी प्रकार के पदार्थों की इच्छा करते हुए अपना सुख और शान्ति गवा बैठते हैं और वस्तुओं के न मिलने पर अपने आपको छोटा समझने लगते हैं।

स्पष्ट है कि हम दूसरो की नकल के कारण न केवल अपने आपको चिन्ता में फंसा लेते हैं, वरन् हम उन लोगों से भी संघर्ष करने लगते हैं जिनके पास वह चीजें होती हैं। इतना ही नहीं, हम शेखचिल्ली की तरह सोचने और छटपटाने लगते हैं।

दूसरों के पास जो चीजें हैं उन्हें देखकर हम बेचैन क्यों हों? हम उन सभी कार्यों को करने के लिए क्यों सोचें जिन्हें दूसरे लोग करते हैं? हम यह नहीं सोचते कि हो सकता है हमारे पास भी बहुत-सी चीजें दूसरों से अधिक अच्छी और अधिक उपयोगी हों। सम्भव है कि हममें बहुत-सी बातें दूसरो से अच्छी हों, अच्छे गुण हों, अच्छा स्वभाव हो, अच्छा स्वास्थ्य हो। हो सकता है कि हमारी सफलता भी दूसरे अनेक लोगों से अच्छी हो, अधिक श्रेष्ठ नहीं तो हो सकता है कि उनकी कोटि की ही हो। जब हम ईर्ष्या व जलन से उत्तेजित होकर कुछ करना चाहते हैं तो हम अधिक कुछ नहीं कर पाते, क्योंकि हमारी कार्यशक्ति जलन व डाह के कारण कुंठित हो जाती है।

हमें चाहिए कि हम अपने लक्ष्य पर सदा दृढ़ रहें और अपने ध्येय के अनुसार ही कार्य करते हुए जीवन के आनन्द का उपभोग करें। आगे बढ़ें और उन सफलताओं से प्रेरणा ग्रहण करें जो हमें अपने जीवन में प्राप्त हुई है। दूसरो से ईर्ष्या करने का फल तो यह होगा कि हम जिस ध्येय के प्रति समर्पित हैं, वह तो आंखों से ओझल ही हो जाएगा, साथ ही हम अपनी बुद्धि को भी कुंठित और अशक्त बना देंगे। इससे न तो हमारा काम होगा और न वह वस्तु ही हमें प्राप्त होगी। दूसरों के अनुकरण से हम सफल न हो सकेंगे। इससे हमारा पूर्वनिश्चित कार्य भी छूट जाएगा।

यदि आप भारी सख्या में भौतिक पदार्थ एकत्र कर भी लेते हैं तो क्या आपको उनसे सुख, शान्ति अथवा आनन्द प्राप्त होगा? अधिकांश सुखी व्यक्तियों के पास भौतिक सुख की वस्तुएं बहुत ही कम होती हैं। वे सुखी केवल इसलिए हैं कि उनका जीवन-क्रम निश्चित है, उन्होंने बेकार की कोई चिन्ता नहीं पाल रखी। क्या आपने कभी सोचा है कि आनन्द का मूलाधार क्या है? आनन्द का मूलाधार है—अपने देश का गौरव बढ़ाना, मित्रों से घिरे रहना, अन्य व्यक्तियों से प्रेम करने का अवसर पाना, उनकी सहायता करना, मगन होकर अपना कार्य करना, अपने जीवन को उपयोगी बनाना और संसार को मानव-जीवन के लिए अधिक उपयोगी बनाने में सहायक होना आदि। जिसे आप

ंसार का साधारण व्यक्ति समझते हों वह यदि अन्य पदार्थों को अपने पास जुटा लेता तो वह असीम आनन्द प्राप्त कर सकता है, परन्तु यह आनन्द व्यर्थ की चिन्ताए छोडने े ही प्राप्त होता है, अपने मन को सदा स्वस्थ रखने से ही प्राप्त होता है।
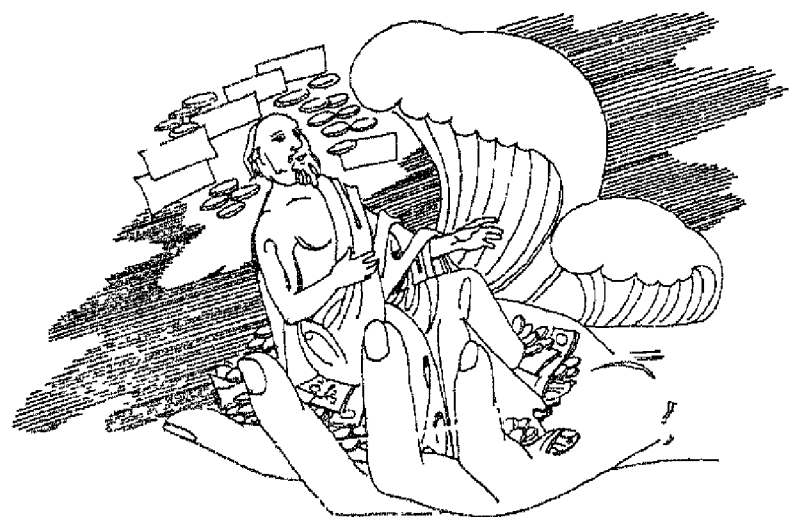
हर समय धन की लालसा ने हमारे जीवन में बेचैनी भर दी है।

हर समय धन की लालसा, हर समय बैंक-बैलेंस बढ़ाने का मोह, व्यर्थ की भाग-दौड तथा बेकार की इच्छाओं और आकाक्षाओं ने हमारे जीवन में भयकर बेचैनी भर दी है, जबकि हम मन को अधिक स्थिर और शान्त करके, भाग-दौड़ छोडकर धन की लालसा को त्याग कर सत्य पर चलते हुए संसार की कहीं अधिक भलाई कर सकते हैं। इस प्रकार का जीवन बिताते हुए हम श्रमपूर्वक जो कार्य करेंगे, वह कहीं अधिक उपयोगी और श्रेष्ठ होगा।

चिन्ता : महामूर्खता

हमारी अधिकांश चिन्ताएं इन आशंकाओं पर आधारित होती हैं कि अगर कल ऐसे हो गया तो क्या होगा—वैसा हो गया तो क्या होगा। यह कल्पनाएं सारी जिन्दगी हमारा पीछा नहीं छोड़तीं—और हम अपने जीवन का एक बहुत बड़ा हिस्सा ऐसी चिन्ताओं में ही व्यतीत कर देते हैं, जो कभी आती ही नहीं।

एक बार एक लेखक ने लिखा था—यदि बन्दरगाह में चलने को तैयार खड़े जहाज में सोचने की थोडी भी शक्ति होती तो वह बन्दरगाह से एक इंच भी बाहर न खिसकता। वह तो समुद्र की उत्ताल तरंगें देखकर ही डर जाता और सोचता कि यदि यह लहरें मुझे निगल गईं तो मेरा अस्तित्व ही नहीं रहेगा। शायद उस समय वह यह भी भूल जाता कि अभी तो उसे एक समय में केवल एक ही तरंग से, एक ही लहर से जूझना पड़ता है।

एक किसान था। उसकी गौशाला घर से अलग नाले के पार थी। नाले पर एक शहतीर पड़ा था। उसकी बड़ी लड़की रोज दूध दुहने जाया करती थी। वह उस शहतीर पर से होकर प्रतिदिन गुजरती थी। एक दिन वह दूध निकालकर वापस लौटी तो फफक-फफककर रोने लगी। उसे बहुतेरा समझाया, पर उसका रोना बन्द ही नहीं हो रहा था। जब उससे रोने का कारण पूछा गया तो बहुत देर बाद वह बोली—"आज जब मैं शहतीर पर नाला पार कर रही थी तो मुझे विचार आया कि जब मेरा विवाह हो जाएगा तो मेरा एक बच्चा भी होगा। जब मैं दूध दुहने जाऊंगी तो वह भी ठुमक-ठुमककर मेरे पीछे-पीछे आएगा। जब मैं शहतीर पर से होकर नाला पार करूंगी तो वह भी पीछे-पीछे शहतीर पर से नाला पार करते हुए नाले में गिरकर बह जाएगा।"

मेरा एक परिचित व्यक्ति है। वह सदा ही कष्टों और संकटों की आशंका करता रहता है। वह सदा यही सोचता रहता है कि वह गलत काम कर रहा है, भारी भूलें कर रहा है। उसकी किस्मत अच्छी नहीं है। सारी बातें, दुनिया के सारे फैसले उसके विरुद्ध ही होते हैं। वह कितना भी परिश्रम करे, परिणाम सदा उसकी इच्छा के विरुद्ध ही होगा,

जब तक उसकी मनःस्थिति ऐसी है, तब तक परिणाम उसकी इच्छा के विपरीत ही

ोगा, क्योंकि केवल वही बातें हमारी ओर आकर्षित होती हैं जो हमारी मनोदशा के अनुकूल होती हैं। यह तो एक प्राकृतिक नियम है। हम इसके विपरीत चल ही नहीं नकते। जिसका चिन्तन नकारात्मक है या जिसकी वृत्तियां निषेधात्मक हैं, उन्हें विधेयात्मक िद्धियां कैसे प्राप्त हो सकती हैं? भले ही प्रज्ञा का सागर अदृश्य है, परन्तु हम उसमें जो कुछ डालेंगे, वही पनपेगा, उसी का विकास होगा और वैसा ही फल भी मिलेगा। ुसका सीधा-सा अर्थ है कि हम जैसा सोचेंगे, हमें वैसी ही प्राप्ति भी होगी।

जिसका चिन्तन नकारात्मक है, उसे विधेयात्मक सिद्धियां कैसे प्राप्त हो सकती हैं?

यदि आपको किसी व्यक्ति की मनोदशा का ज्ञान हो जाए तो आप बता सकेंगे कि उसका वातावरण कैसा है। संसार के साथ उसका संपर्क कैसा है, उसकी क्या अवस्था या स्थिति होने वाली है। इन्हीं बातों से ज्ञात हो जाएगा कि वह आशावान है और उन्नति की ओर उन्मुख है या निराशाओं से भरा हुआ पतनोन्मुख है, नीचे को देख रहा है।

मनुष्य का रुख किधर है, वह विकासोन्मुख है या पतनोन्मुख, प्राय इस बात का पता उसका चेहरा और उसके हाव-भाव देखकर चल जाता है। उससे बात करके पता लगा सकते हैं कि जीवन के प्रति उसका मानसिक दशा-विचार कैसा है तथा संसार के प्रति उसका दृष्टिकोण क्या है, यह भी पता लगाया जा सकता है। स्वयं अपने प्रति उसकी प्रवृत्ति क्या है, इस बात का पता लगने पर आप यह भी जान सकते हैं कि उसके क्रियाकलाप का फल क्या होगा।

आज के वैज्ञानिक युग में बीज देखकर ही यह बताया जा सकता है कि पौधा स्वस्थ होगा या बीमार या उसके फल कैसे होंगे आदि। इसी प्रकार जो मनुष्य सदा अपने

आपको अभागा समझता है, जो गाड़ी निकल जाने के बाद स्टेशन पर पहुंचता है जो बाजार से ऊंचे दामों पर माल खरीदकर कम दर पर बेचता है, उसका भविष्य क्या होगा? यह कोई भी बता सकता है, इसके लिए किसी ज्योतिषी की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

अधिक चिन्ता करने वाले व्यक्ति यात्रा से पूर्व ही मौसम के खराब होने की आशंका करने लगते हैं, जहाज या गाडी के साथ दुर्घटना के भय से डरने लगते हैं। ऐसे व्यक्ति जहाज में पैर रखते ही समुद्र-रोग (Sea-Sickness) से ग्रस्त हो जाते हैं। इसके विपरीत कुछ यात्री सुन्दर दृश्यों की कल्पना करते हैं, अलग-अलग तरह के मौसम से आनन्द उठाने की सोचते रहते हैं। उन्हें उस यात्रा से आनन्द प्राप्त होता है। उन लोगों के लिए यात्रा कठिन नहीं रह जाती, उन्हें उससे कोई कष्ट नहीं होता।

सदा प्रसन्न रहने वाले एक प्रसिद्ध महान पुरुष से एक बार मैंने पूछा था कि आप अपने मानसिक आनन्द को किस प्रकार स्थिर रख पाते हैं? उत्तर देते हुए उन्होंने कहा था—मैं अपने मन में कभी किसी दुर्भाग्य की आशका या विचार को आने ही नहीं देता। मैं सदा सौभाग्य और अच्छे फल की ही आशा करता हूं। यदि कभी कोई कष्ट आ भी जाता है या कोई अप्रिय बात हो भी जाती है तो मैं उन्हें भी प्रिय बना लेता हू। उनमें भी कोई-न-कोई आनन्द, प्रसन्नता या खुशी की बात ढूंढ़ लेता हूं, कोई ऐसी राह खोज लेता हू कि दृश्य मेरे अनुकूल बन जाए।

अनादि काल से मनुष्य होनी और अनहोनी की चिन्ताओं से ग्रस्त रहता आया है। चिन्ता, फिक्र, भय और त्रास आदि उसे घेरे रहते आए हैं। इनके हाथों वह सदा ही अपने आपको दुखी, पीड़ित और संतप्त करता आया है। मनुष्य सदा ही किसी सकट के आने की आशका करता रहा है, दुर्घटना का भय उसे सताता रहता है, अस्वस्थ होने का डर लगा रहता है। कभी उसे प्राकृतिक आपत्तियों का डर परेशान करता रहता है और कभी भूकम्प का—और कुछ नहीं तो मृत्यु आदि के भय ही उसे सदा दुख देते रहे हैं। समय-असमय इनमें वृद्धि होती चली गई है और इनमें असफलता का भय, गरीबी या निर्धनता का भय, रोटी-पानी का प्रबन्ध न होने का भय, बेरोजगारी का भय और अपमान आदि के भय जुड़ते चले गए। सैकड़ों तरह के भय मनुष्य के जीवन-काल को वास्तविक दुख आने से पूर्व ही दुखी करते रहते हैं। भय और उसका परिवार उन लोगों को अधिक भयभीत करता है जो दुर्बल हृदय हैं और जिन्होंने अपनी सत्ता उस सच्चिदानन्द से पृथक् कर ली है। वही अधिक दुखी होते हैं जो आनन्द के उस असीम भण्डार से अपने आपको पृथक मान बैठते हैं, उससे अपना सम्बन्ध-विच्छेद कर लेते हैं।

विशाल जन-समूह अथवा अपार जनसंख्या प्रतिदिन चिन्ता के आगे आत्मसमर्पण करती या घुटने टेकती देखी जा सकती है। हम किसी कार्य के विषय में सोचते हैं, उसकी योजना की चिन्ता करते हैं तथा उसके लिए साधन जुटाने की फिक्र करते हैं, कार्य-पूर्ति के मार्ग में आने वाली बाधाओं के बारे में सोचते हैं। इन्हीं चिन्ताओं में हमें रात को नींद

नहीं आती, नींद हराम हो जाती है और दिन में चैन नहीं मिलता। हम बेचैन रहने लगते हैं। कल्पित भय हमें घेरते हैं और आशकाए हमें त्रस्त कर देती हैं। हमें अनुभव होता है कि हमारा रक्त सूख रहा है और हम धीरे-धीरे कार्य करने की शक्ति से रहित हो जाते हैं। चाहते थे हम प्रगति करना, परन्तु होने लगती है अवनति। यह सब हमारी मानसिक स्थिति के कारण ही होता है, मानसिक प्रशिक्षण के अभाव में ही होता है।

इसके विपरीत यदि व्यक्ति चिन्तन करे, चिन्ता करना छोड दे और मन को स्वस्थ और प्रसन्न रखते हुए अपने लक्ष्य की ओर आगे बढ़े, अपने ध्येय की पूर्ति में लगा रहे तो उसका कार्य स्वय ही योजना के अनुसार पूर्ण होने लगता है।

भय के दो पक्ष हैं, दो पहलू हैं। प्रथम यह कि संसार का कठोर-से-कठोर और दृढ-से-दृढ़ व्यक्ति भी भयग्रस्त हो सकता है और दूसरा यह कि प्रायः सभी मनुष्य किसी-न-किसी ऐसे भय की, डर की चिन्ता लगाए रहते हैं, जो कभी आता ही नहीं। यह बात इस उदाहरण से और भी स्पष्ट हो जाएगी।

डॉक्टर सेलडर ने इस सम्बन्ध में जनरल शुर्ज से सम्बन्धित एक घटना का उल्लेख किया है। उन दिनों चांसलर विले की लड़ाई हो रही थी। एक दिन प्रातःकाल जनरल जब जागा तो उसके मन में यह भय निश्चय बनकर बैठ गया कि उसका अन्त आ गया है। उसने बहुत प्रयत्न किया कि यह विचार उसके मन से निकल जाए, पर वह इस प्रयत्न में सफल न हुआ। ज्यों-ज्यों दिन बीतने लगे, उसका विश्वास अथवा भय दृढ होता गया। अन्त में उसने अपने परिवार वालों को अन्तिम पत्र लिखने की सोची और पत्र लिखने बैठ गया। उसे पता था कि आज उसकी टुकडी को अग्रिम मोर्चे पर जाना होगा और जब उसकी टुकडी अग्रिम मोर्चे पर चली तो उसका यह निश्चय और भी दृढ हो गया कि उसकी कल्पना सच होने वाली है। जब वह घोड़े पर सवार होकर शत्रु पर आक्रमण करने के लिए अग्रिम मोर्चे पर चला तो थोड़ी ही देर बाद उसका अंगरक्षक दुश्मन की तोप के गोले से मारा गया। यह देखकर जनरल का भय एकाएक बदल गया। जब उसने मौत को इतने निकट से देखा तो उसके मन में मृत्यु का रचमात्र भी भय न रहा और वह निडर व बेझिझक होकर कठिन अग्रिम मोर्चे पर शत्रु पर टूट पडा। शत्रु की पराजय हुई और जनरल के मुख-मण्डल पर मुस्कान खेल गई। उसका बाल भी बाका न हुआ था।

बहुत-से सैनिकों का विचार होता है—मैं मरूंगा तो केवल एक बार ही, एक ही गोली से, पता नहीं वह कौन-सी गोली है। जब तक वह मुझे नहीं लगती, तब तक संसार की कोई भी शक्ति मेरा बाल भी बाका नहीं कर सकती। जब वास्तविकता यही है तो जो सैनिक युद्धभूमि में भी निर्भय होकर नहीं जाते अथवा जो भयग्रस्त होते हैं, उन्हें मूर्ख नहीं तो और क्या कहा जाएगा?

कुछ लोग भय के कारण एक बार नहीं, कई बार ।

मरना सभी को है, परन्तु केवल एक बार, लेकिन कुछ लो
कारण न जाने कितनी बार मरते हैं। यह ठीक है कि भय के
छूटता, परन्तु भय से ग्रस्त और मृत व्यक्ति में अन्तर ही कितना
पुल के पास न पहुंच जाओ, उसको पार करने का विचार भी
करना तो दूर। इसी प्रकार जब तक संकट आ ही न जाए, तब
करो और आ भी जाए तो उससे डरो मत। जो व्यक्ति कल व
लेता है, जो कल की हानि से आज ही डरने लगता है और भ
कायर है और कायर व्यक्ति को न अपने ऊपर भरोसा होता है
ऐसा व्यक्ति सदा तुच्छ बना रहता है। वह न तो कभी महान
कोई महान कार्य ही कर सकता है।

भयभीत और चिन्तित मन प्रगति में बाधक है

जब आपके मन में भय और चिन्ता बस जाती है तो आप कोई भी कार्य प्रभावशाली ढंग से नहीं कर पाते। चिन्ता से आपकी समस्या सुलझने की बजाय और उलझ जाती है। अगर आप समझदार हैं तो सोचिए कि ऐसी स्थिति में भय और चिन्ता को मन में जगह देना कहां तक उचित है?

आप उस व्यक्ति के विषय में क्या सोचेंगे जो यह जानते हुए भी कि उसकी कार के ब्रेक ठीक से काम नहीं कर रहे, फिर भी उसे काफी तेज स्पीड से चलाता है? आप अनुमान लगा सकते हैं कि उसकी क्या दशा होगी। वह कहीं-न-कहीं अवश्य टक्कर मारेगा। स्वय भी मरेगा अथवा दुर्घटनाग्रस्त होगा तथा अन्य किसी की भी हानि करेगा।

इसी प्रकार जो व्यक्ति उन्नति के लिए तो निरन्तर चिन्ता करता है, उन्नति करना चाहता है, आगे बढ़ना चाहता है, परन्तु उसके ब्रेक उसके वश में नहीं हैं अर्थात जिसमें सयम शक्ति नहीं है, उसकी नस-नाड़ियां थक जाती हैं और वह दुर्घटनाग्रस्त हो जाता है और भली-भांति काम करना छोड देता है।

मानव की प्रगति को रोकने वाली सबसे बडी बाधा चिता ही है। चिन्ता से व्यक्ति की कार्यकुशलता ही नष्ट नहीं हो जाती, वह पूर्णरूप से समाप्त भी हो जाती है। चिन्ता हमें उस समय दुर्बल बनाती है, जब हमें शक्ति की आवश्यकता होती है। इस चिन्ता के सम्बन्ध में सयम करना बहुत ही आवश्यक है।

यूं तो कोई भी कार्य करने के लिए एकाग्रता की आवश्यकता होती है, परन्तु रचनात्मक कार्य करने के लिए तो इसकी और भी अधिक जरूरत होती है। जिस समय मन में चिन्ता, फिक्र, आशंका और भय भरा हुआ हो, उस समय मनुष्य कोई भी अच्छा काम नहीं कर सकता और उचित ढंग से तो बिल्कुल ही नहीं। यदि मन चिन्तामुक्त नहीं होगा तो उसमें कार्य को सिद्ध करने के लिए आवश्यक शक्ति ही नहीं रह जाएगी। एकाग्रता से ही व्यक्ति कार्यकुशल हो सकता है और एकाग्रता उसी समय सम्भव है, जब मन में कोई चिन्ता या भय न हो।

जिन व्यक्तियों में चिन्ता का रोग पुराना हो जाता है, उन्हें यह पता ही नहीं लगता

कि किस प्रकार इससे उनकी कार्यकुशलता प्रभावित हो रही है। चि-
पर बडा ही दुष्प्रभाव डालती है। बहुत से लोग निराशावादी होते हैं
एक आदत बन जाती है। वे हर बात का बुरा पहलू ही देखते
की उनकी आदत ही नहीं होती। उन्हें अपने हर कार्य में बाधाएं
लगती हैं और वे हर चीज को देखकर भय अनुभव करने लगते
हैं। उन्हें यह पता ही नहीं होता कि इन बातों से उनके शारीरि
हानि होती है। इससे उनके मन का सामजस्य अस्त-व्यस्त हो जात
हो जाती है और वे जीवन की दौड में पिछड़ जाते हैं, आगे न

जब हमारे विचारों में निराशा भरी रहती है, वे चिन्तायुक्त या भयय
हम अपने शरीर में उन अशों को प्रोत्साहन दे रहे होते हैं जो हमारे
हैं, जो हमारी लक्ष्यप्राप्ति में बाधक बनते हैं। उस समय हमारे शरीर
नया जीवन देने वाली प्रक्रिया मन्द पड जाती है और हमारी शक्ति

बहुत-सी माताए परिवार के प्रत्येक सदस्य को प्रत्येक कार्य में
और भयों से परिचित कराया करती हैं। वह ऐसा करना अपना
समझती हैं कि यदि ऐसा न करेंगी तो उनका कर्तव्य पूरा न होगा,
ही नहीं होता कि भयमिश्रित चिन्ता कार्यों में बाधक बन जाया करती
नहीं होते वरन् बिगड़ते हैं। इस प्रकार बहुत-सी माताएं अनजाने में
परिवार वालों का अहित किया करती हैं।

दुर्बल और चिन्तित मन मानव की प्रगति को रोकने वाला है

भय और चिन्ता की भावना हमारे अवचेतन मन को कार्यपूर्ति से रोक देती है। जिस कार्य को हम पूर्ण करना चाहते हैं, उसके सम्बन्ध में हमारी यह चिन्ता कि यह कार्य पूर्ण होगा या नहीं, हमारे उस कार्य के पूर्ण होने में बाधक बन जाती है, क्योंकि जिस मन में सन्देह बस जाता है, उससे कोई भी रचनात्मक कार्य प्रभावशाली ढग से नहीं हो पाता।

अत· हमें चाहिए कि हम भय को तुरन्त त्याग दें, क्योंकि वह हमारे सामने उसी सकट को ला खडा करता है, जिससे हम भयभीत रहते है। भय हमारी सकट-निरोधक शक्ति को क्षीण करता है, उसकी कमर तोड देता है। इस प्रकार हमें जिस चिन्तन की आवश्यकता है, वह उसकी शक्ति को कमजोर कर देता है। जब तक मन अशान्त है, वह कभी भी प्रभावशाली ढग से नहीं सोच सकता। वह किसी भी रचनात्मक विचार या कार्य को जन्म नहीं दे सकता। भय स्वाभाविक रूप से हमारे मनन अथवा चिन्तन करने की प्रक्रिया को भी निष्क्रिय बनाता है और हमारी शक्ति को भी कम करता है।

तनिक उस व्यापारी की कल्पना कीजिए जिसका दिवाला निकल रहा है। यदि वह अपनी बची हुई पूजी को बैंक से निकालकर यू ही फेंक दे तो आप उसे पागल अथवा मूर्ख नहीं तो क्या कहेंगे? परन्तु क्या आप और हम उससे भी अधिक बड़ा पागलपन नहीं करते, जब केवल काल्पनिक विपत्तियों में अपने बहुमूल्य मस्तिष्क की शक्तियों का अपव्यय करते हैं। वास्तविक रूप से आई हुई विपत्ति की चिन्ता भी हानिकारक होती है, फिर आकस्मिक और कल्पित की तो बात ही क्या। जब व्यक्ति के ऊपर वास्तविक आपत्ति आ पडे तो उसे अपने पूर्ण उत्साह और धैर्य से उसका मुकाबला करना चाहिए। उस समय व्यक्ति को अपने सम्पूर्ण गुणों और हर प्रकार की योग्यता द्वारा उसका सामना करना चाहिए। यही समय होता है जब वह अपनी योग्यता का परिचय दे सकता है। ऐसे समय भी यदि आप कार्य को छोडकर चिन्ता में लीन हो जाते हैं तो अपनी गति को ब्रेक लगाते हैं।

यदि व्यक्ति को पूर्ण रूप से इस बात का ज्ञान हो कि भय का विचार उसके कार्य करने की शक्ति को समाप्त कर देता है, यदि उसे यह पता हो कि भय किस प्रकार कार्य के प्रति उसके उत्साह को ठण्डा कर देता है, यदि उसे यह ज्ञात हो कि भय का विचार किस प्रकार शरीर की मासपेशियों को शिथिल कर देता है, किस प्रकार नस-नाडियों मे अवरोध पैदा कर देता है, उन्हें सुन्न कर देता है तथा किस तरह दृष्टि को धुधला बना देता है और किस तरह कार्य में सफल होने की सारी सम्भावनाओं को समाप्त कर देता है तो वह शायद कभी भी भय को अपने मन में स्थान न दे।

आपने कई बार यह देखा होगा कि जब आप किसी बात की चिन्ता करते-करते, कई रातें करवटें बदलते हुए बिता देते हैं तो आपने यह अनुभव किया होगा कि समस्याए तो वैसी-की-वैसी, जहां-की-तहा खडी हैं, परन्तु आपका तन-मन थककर टूट चुका होता है। इससे इतना स्पष्ट हो जाना चाहिए कि चिन्ता ने आपकी समस्या को सुलझाने में

कोई मदद नहीं की, कोई सहायता नहीं पहुंचाई, वरन् उसके स्थान प
में कार्य करने की जो शक्ति थी, उसे चाट लिया, उसका हनन कर दि
में बताइए कि भय को मन में जगह देना कहां तक ठीक है?

चिंता हमें पंगु बना डालती है और हमें किसी लायक नहीं छोड़ती।

एक किसान जानता है कि जिन गौओं को मक्खियां या मच्छर तंग
वे न तो पूरा दूध ही देती हैं और न ही सही ढंग से देती हैं। जि
मक्खियों-मच्छरों से बचाकर रखा जाता है, वे खुशी-खुशी पूरा दूध देती
मस्तिष्क के जिन सूक्ष्म तन्तुओं को चिन्ता ने सता रखा है, वे अपना का
सही ढग से कर पाएंगे?

हमें पशुओं के संबंध में तो इन तथ्यों का ज्ञान है, परन्तु अपने संब
जाते हैं कि हम भय और चिन्ता से दुखी होंगे तो अपना कार्य सही ढग
पाएंगे? हमें इस बात से आश्चर्य क्यों होता है कि हमारा कार्य ठीक ढंग
हो रहा अथवा हमारा तन-मन इतनी जल्दी क्यों थक जाता है? सही ढग
कार्य का अर्थ सन्तुलित ढग से किया हुआ कार्य है, परन्तु सन्तुलित ढंग
का अर्थ है, मन और शरीर दोनों से सन्तुलित होना।

प्रायः यह कहा जाता है कि मनुष्य निरन्तर जिस वस्तु की कामना 3
करता रहता है, उसे प्राप्त कर ही लेता है, परन्तु जब मन लगातार भय 3
ही लगा रहेगा और भयपूर्ण घटनाओं की आशंका पर विचार करता रहेगा
और चिन्ता ही तो प्राप्त होंगे।

भय और चिन्ता से हमारे नाडी-सस्थान का सन्तुलन बिगड जाता है तथा नाडी-संस्थान के असन्तुलित हो जाने से इस बात की पूरी सभावना रहती है कि भय मस्तिष्क में स्थायी रूप से स्थान बना ले। ऐसा होने पर स्नायु-विकार, मानसिक असन्तुलन या पागलपन तक भी हो जाता है। हमारी योग्यता को हानि पहुचाने में चिन्ता का प्रमुख स्थान होता है। चिन्तित रहने वाले व्यक्ति को चिन्ता का स्थायी रोग लग जाता है। बड़े-से-बडे और कर्मठ व्यक्ति की शक्तिया भी केवल चिन्ता के कारण क्षीण हो जाती हैं। चिन्ता सफलता की भयकर शत्रु है। क्या ऐसे शुत्र को अपने मन में बसाना हानिकारक नहीं है? हो सकता है कि चिन्ता आपके भविष्य को जडमूल से नष्ट न करे, परन्तु इतना तो अवश्य होगा कि आपकी कोई भी इच्छा इसके कारण पूर्ण न हो पाएगी।

भय या चिन्ता से ग्रस्त व्यक्ति पहले तो कोई कार्य आरम्भ ही नहीं करेगा, यदि आरम्भ कर भी दे तो चिन्ता का बोझ उठाने वाला व्यक्ति इतना थक जाता है कि कार्य का बोझ नहीं उठा सकता।

मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हू कि जिसके सम्बन्ध में उसके कॉलेज के सहपाठियों तथा मित्रों ने कहा था कि उसे जीवन में महान सफलताएं प्राप्त होंगी, परन्तु पचास वर्ष की आयु होने तक वह एक भी उल्लेखनीय कार्य न कर सका। इसका कारण उस व्यक्ति में कोई योग्यता अथवा शक्ति का होना न था वरन उसके एक 'साधारण व्यक्ति' रह जाने का कारण उसकी चिन्ताग्रस्त रहने की आदत थी। चिन्ता का ही दूसरा नाम है—विश्वास का अभाव। दृढ निष्ठा अपने मार्ग में कोई भी बाधा सहन नहीं कर सकती, उसका विश्वास कर्मठता में होता है, अधिकता में होता है। दृढ निष्ठा की आखों में सक्रियता लुप्त नहीं हो सकती। लक्ष्य सदा उसके सामने रहता है। वह सभी कठिनाइयों को पार करना जानती है और कठिनाइया पार होने पर वह गन्तव्य स्थान पर पहुच जाती है। दृढ़ निष्ठा कभी बीच में नहीं रुकती।

चिन्ता करने से चिन्ता और बढ जाती है। थोडी चिन्ता से और अधिक चिन्ता लगती है अर्थात चिन्ता ही चिन्ता की जननी है। कई बार मन में चिन्ता का स्थायी निवास बन जाता है।

जब एक बार हम यह अच्छी तरह से समझ लें कि चिन्ता वस्तुत: हमारे प्रयत्नों में बाधा डालती है, उन्हें पंगु बना देती है और हमें आगे बढ़ने के योग्य नहीं रहने देती तो ऐसी स्थिति में हमें चाहिए कि हम उसे अपने जीवन से बाहर निकाल दें। हमें चाहिए कि हम उसे अपने पास भी न फटकने दें और उसकी जगह उत्साह, हिम्मत, साहस, शौर्य, धैर्य और बुद्धिमत्ता को स्थान दें।

संशय : एक अभिशाप

सन्देह या संशय घातक है। यह हमारे प्रयत्नों की हत्या कर देता है। किसी भी प्रकार का संशय उत्पन्न होते ही हमारे प्रयत्नों पर रोक लग जाती है—हमारी आकांक्षाएं नष्ट होने लगती हैं। जब किसी मनुष्य के मन में सन्देह पनपता है तो वह सर्वोत्तम प्रयत्न कर ही नहीं सकता और वह शक्तिहीन हो जाता है।

जिन भयकर शत्रुओं का सामना मनुष्य को करना पड़ता है, उनमें से एक शत्रु सन्देह है। इसी का दूसरा नाम संशय भी है।

संशय आंखों के सामने उगते सूर्य तक को मानने के बारे में भ्रम पैदा कर सकता है।

जब हम प्रगति के मार्ग पर चल रहे होते हैं तो कई बार यह सशय ही हमारे मार्ग के बीच में आकर खड़ा हो जाता है और हमारी प्रगति रुक जाती है। इस कलकित मुख वाले सशय को देखकर हम पीछे को लौट जाने की सोचने लगते हैं, क्योंकि उसका सुझाव लौट जाने का ही होता है। उस समय हम आगे बढ़ना छोडकर सोचने लगते हैं—

- क्या यह मार्ग ठीक नहीं?
- क्या यह उचित नहीं कि हम कोई अन्य योजना बनाएं?
- हमने जो कार्य आरम्भ किया है, क्या हम उसे पूरा भी कर सकेंगे?
- क्या हम जानते हैं कि इस कार्य के पूरा हो जाने पर इसके परिणाम कितने भीषण हो सकते हैं?
- क्या यह उचित नहीं कि कुछ देर और रुक लिया जाए?
- ऐसा क्यों होता है?

ऐसा इसलिए होता है कि हम सशय के सुझावों को सुन लेते हैं। उस समय हमारे मन में ऊहापोह पैदा हो जाती है, दुविधाए उत्पन्न हो जाती हैं, मन में अनेक आशकाए आ खड़ी होती हैं और हम उन्हीं के चक्कर में खो जाते हैं।

शेक्सपियर ने कहा है—सशय हमारा दुश्मन है, हमसे उसका द्रोह है। जिन श्रेष्ठ कार्यों को हम कर सकते हैं, उन्हें भी संशय हमारे हाथ से छुडा देता है। इससे हमारे मन में भय पैदा हो जाता है और हम उन कार्यों को आरम्भ ही नहीं कर पाते अथवा सशय हमें वह कार्य आरम्भ ही नहीं करने देता।

प्राय: हम सबका ऐसा ही अनुभव होगा कि जब हम किसी कार्य को उत्साह और दृढ निश्चयपूर्वक आरम्भ कर देते हैं तो अचानक हमारे मन में सशय पैदा हो जाता है। हमें अपने पर संदेह हो जाता है और हम अपने आपसे पूछने लगते हैं कि क्या यह कार्य हम पूरा कर सकेंगे?

इस प्रकार संशय ही हमारे दृढ निश्चय का केवल एक सिरा पकड़कर हमारी सम्पूर्ण शक्ति को समाप्त कर देता है। इससे हमारी आकाक्षाएं नष्ट हो जाती हैं और उस समय ऐसी स्थिति पैदा हो जाती है कि हम कार्य करने से झिझकने लगते हैं, हमारा चित्त अस्थिर हो जाता है।

उस समय सशय हमारे कान में कहता है—धीरे-धीरे चलो। इतनी जल्दी किस बात की है? सहज पके सो मीठा होय। अभी उचित समय नहीं, अच्छा समय आने दो। उस समय काम आरम्भ करना चाहिए, आदि।

उस समय हम काम करना बन्द कर देते हैं। भले ही हममें वह कार्य करने की पूरी योग्यता होती है, हमें सफलता की भी आशा होती है और उस कार्य में हमारे जीवन की आकाक्षाएं भी संचित होती हैं, परन्तु मन में सन्देह पैदा होते ही हम आरम्भ किए हुए काम को झट बन्द कर देते हैं। हम झिझकने लग जाते हैं और उचित अवसर की प्रतीक्षा

में अपना सम्पूर्ण समय खो देते हैं और अन्तत हममें कार्य आरम्भ करने का साहस ही समाप्त हो जाता है।

मेरे ध्यान में जब यह बात आती है कि लोग हाथ में लिए हुए काम को पूरा करने की अपनी योग्यता में भी सन्देह करने लगते हैं तो मुझे बड़ा दुख होता है। जो लोग यह सोच-सोचकर रुक जाते हैं कि काम करें या न करें, उन्हें मैं भगोड़ा समझता हू, कामचोर समझता हू।

यह कामचोर लोग कभी भी अपने लक्ष्य पर नहीं पहुच सकते। कहीं भी नहीं पहुंच सकते। किसी भी काम को नहीं कर सकते। यह लोग अपनी नाव को किसी सुनिश्चित बन्दरगाह में नहीं मोडते और सदा मंझधार में ही डूबते हैं।

आज असख्य लोग ऐसे हैं जो विलक्षण योग्यता होने पर भी मध्यम कोटि के ही बने रह गए। उन्हें उनके सशय ने ही पगु बना दिया है। यदि वह सशय उनमें न होता तो वे भारी सफलता भी प्राप्त करते और महान व्यक्ति भी कहलाते। इसमें कोई सन्देह नहीं, परन्तु दुख यही है कि उनमें यह विश्वास ही नहीं जम पाया कि उनमें योग्यता है।

संशय पर विजय तभी पाई जा सकती है, जब पूरे संकल्प के साथ यह विश्वास जमा लिया जाए कि मैं यह कार्य कर सकता हूं। मैं जो कार्य करना चाहता हूं, उसे पूरा करने की शक्ति मुझमें है। मैं उसे कर सकता हूं और यह कार्य मेरे करने योग्य है।

यह निश्चय करना चाहिए कि आप जो भी कार्य कर रहे हैं आपको उसका महान पारितोषिक प्राप्त होगा व आप उस पारितोषिक को अवश्य प्राप्त करेंगे। इस प्रकार के विचारों से आपकी हिम्मत बढ़ती है, आपका साहस बढ़ता है। न केवल बढ़ता है, बल्कि दुगुना हो जाता है। इसी प्रकार के विचार शक्तिवर्द्धक रसायन का काम करते हैं।

हमें सदा ही यह चेतना जाग्रत रखनी चाहिए कि हम जो काम कर रहे हैं, उसका फल मिलने ही वाला है। यह चेतना ही हमारे उत्साह को बढ़ाती है। इससे हमारा उत्साह बढ़ता है, विश्वास बढ़ता है। इस प्रकार की प्रेरणा से ही हम उस कार्य को पूरा करने के लिए अत्यधिक शक्ति लगा देते हैं और उत्कृष्टतम कार्य करने में सफल होते हैं।

प्रायः यह होता है कि अधिकाश लोग कार्य में अपने सर्वोत्तम प्रयत्न नहीं लगा पाते। वे काम तो आधे मन से करते हैं और आशा पूरे फल की करते हैं। ऐसा करना सरासर गलत तो है ही, लाभदायक भी नहीं है। यह तो ठीक ऐसा ही है जैसे दूसरे दर्जे का टिकट लेकर पहले दर्जे में यात्रा करना, जो एक अपराध है।

विश्वास राजा है। वह निश्चयपूर्वक जो कुछ कहेगा, उसे पूरा करना ही होगा। विश्वास से ही असम्भव कार्य भी सम्भव हो जाते हैं और उन्हें पूर्ण करने में विशेष कठिनाई भी नहीं आती।

सन्देह या सशय घातक है। यह हमारे प्रयत्नों की हत्या कर देता है। संशय उत्पन्न होते ही हमारे प्रयत्नों पर रोक लग जाती है। किसी मनुष्य के मन में जब संशय भर जाता है तो वह सर्वोत्तम प्रयत्न तो कर ही नहीं सकता। उसमें शक्ति ही नहीं रह जाती।

अधिकाश व्यक्ति सन्देह से भरे हुए ही अपना काम आरम्भ करते हैं। उन्हें अपने भविष्य के बारे में सदा सन्देह बना रहता है, सदा अनिश्चितता सताती रहती है। वे अपने भविष्य के प्रति सन्देहशील और भयभीत रहते हैं। उस समय वे जो भी कार्य करते हैं वह उनको मजबूरी के कारण होता है, आदर्श की प्रेरणा से नहीं, जबकि उन्हे चाहिए कि वे पूर्ण विश्वास और उत्साह से काम करें।

वस्तुतः सन्देह हमारा द्रोही है और हमें भी द्रोही बना देता है अर्थात हम अपने ही आदर्शों के स्वय शत्रु बन जाते हैं, उनके ही विरुद्ध खडे हो जाते हैं और उनकी पूर्ति के मार्ग में रोडा अटकाते हैं। जिन आदर्शों को हमे स्वय पूर्ण करना था, हम अपने मन में सशय के बीज बोकर स्वय उनके शत्रु बन जाते हैं। सशय हमारे दृढ निश्चय को, हमारी आकाक्षाओं को हमारी आशाओं को नष्ट कर देता है और हमारी योजनाओं में पलीता लगा देता है।

सबसे अधिक दुख देने वाली बात तो यह है कि अपने इन सन्देहों के जन्मदाता स्वय हम हैं। हम स्वय अपने शत्रु पैदा करते हैं और उन्हें पाल-पोसकर बडा बनाते हैं। फिर वही शत्रु एक दिन देत्याकार रूप धारण करके हमारे सम्मुख आ खडे होते हैं और वे हमारी राह ही नहीं रोकते, हमारे अस्तित्व को भी मिटा डालने का प्रयत्न करते हैं।

हमें चाहिए कि जिस समय भी संशय हमारे मन में घुसे, उसी समय हम उसे धकेलकर बाहर निकाल दें और उसके लिए अपने मन का द्वार सदा के लिए बन्द कर लें। सशय ऐसा शत्रु है जो मन में आने के बाद हमारे लिए महान घातक बन जाता है।

जब आपके मन मे सशय भरा हुआ हो तो आप क्या काम कर पाएगे? कोई भी रचनात्मक या मौलिक कार्य आप कर ही नहीं सकेंगे। आपको चाहिए कि आप अपने इस शत्रु को मन से बाहर निकाल दें। ऐसा करने के बाद ही आप कोई अच्छा और मूल्यवान कार्य कर सकेंगे। जिसके मन में सन्देह भरा हुआ होगा, उसकी बड़ी-से-बडी साहसपूर्ण प्रवृत्ति भी नष्ट हो जाएगी।

जब आप किसी कार्य के सम्बन्ध में उसके सब पहलुओं पर विचार करके यह निश्चय कर लेते हैं कि आपको क्या करना है और आप अपना मार्ग भी निर्धारित कर लेते हैं, तब आपको चाहिए कि सशय को मन में प्रविष्ट न होने दें। कोई भी निषेधात्मक विचार अपने मन में न आने दीजिए, उससे अपनी योजना को नष्ट मत होने दीजिए। किसी भी कार्य के लिए प्रयत्न आरम्भ करने से पूर्व ही उसके सब पहलुओं पर सावधानीपूर्वक विचार कर लीजिए और एक बार मन में निश्चय कर लेने पर कि कार्य किस प्रकार करना है, अपना कार्य करते जाइए और निरन्तर करते जाइए। जिन लोगों ने अपने मन में सशय को स्थान नहीं दिया, वे ही इतिहास में अपनी अमिट छाप छोड गए हैं। वे ही महत्वपूर्ण ऐतिहासिक कार्य कर गए। इतिहास उन्हीं के गुण गाता है।

प्रत्येक मनुष्य के दो स्वरूप होते है परन्तु उसका विश्वास स्वरूप सदा ही छिपा रहता

है, क्योंकि वह अपने आपको छोटा ही समझता रहता है। साधारणतया लोग उसके लघु स्वरूप को ही जानते हैं। वे उसके विशाल स्वरूप की कल्पना भी नहीं कर सकते क्योंकि अब तक स्वय भी वे वैसे ही थे। वे नहीं जानते थे कि उनके अन्दर एक देव है, जो अब तक प्रकट नहीं हुआ था और अब यदि प्रकट हो गया तो उसकी महत्ता ससार स्वीकार करेगा। भय के कारण वह अब तक अन्दर ही दबा रहा। अपनी कायरता के कारण, अपने सकोच और लज्जा के कारण हमने उसे दबाए रखा। उसे प्रकट ही नहीं होने दिया। हमने कभी उसे प्रकट करने की वीरता ही नहीं दिखाई, बाह्य ससार पर उसे प्रकट ही नहीं किया। हम स्वयं उससे डरते रहे, लेकिन अब वह समय आ गया है कि अपने अन्दर के उस सर्वशक्तिमान देव को प्रकट करें।

किसी भी कार्य को आरम्भ करने से पूर्व जब आप अपने ऊपर सन्देह करते हैं तो आप स्वय ही अपने आपको असफलता का प्रमाण-पत्र दे देते हैं। आप स्वयं यह घोषणा करते हैं कि आप एक अयोग्य व्यक्ति हैं।

क्या आप नहीं जानते कि संशय करके आप स्वय अपने मार्ग मे रोड़े अटकाते हैं, पत्थरों के ढेर लगाकर मार्ग को बन्द कर देना चाहते हैं?

क्या आप नहीं जानते कि जिस कार्य को पूर्ण करने की आपकी कामना है, सशय द्वारा आप उसी को नष्ट करते जा रहे हैं?

क्या आप नहीं जानते कि सशय द्वारा आप उसी वस्तु को अपने से दूर कर रहे हैं जिसे आप अपनी ओर आकृष्ट करना चाहते थे, जिसे अपनी ओर आकृष्ट करने की आपकी उत्कट अभिलाषा थी?

आपको यह अच्छी तरह जान लेना चाहिए कि आपका संशय ही आपकी आशाओं को खण्डित करता है। वही आपके मनोरथों और आपकी आकांक्षाओं को नष्ट करने वाला है। जितनी बार आप सशय करते हैं, उतनी ही बार अपने आपको निरुत्साहित करते हैं, अपनी अयोग्यता को स्वीकार करते हैं। आप उस कार्य को करने की असमर्थता को स्वीकार करते हैं, जिसे आपने स्वय आरम्भ किया था।

आप नहीं जानते कि आप स्वयं पर संशय करके एक सरल कार्य को भी अपने लिए कितना कठिन और दुरूह बना लेते हैं। जितनी बार भी आप निरुत्साहित होते हैं, उतनी ही बार मानो युद्ध के मैदान में अपनी बन्दूक को नीचे रखकर अपनी पराजय को स्वय ही आमन्त्रित कर रहे होते हैं।

रचनात्मक क्षणों में आपने ही जिसे बनाया, जिसकी रचना की, उसे आप संशय के क्षणों में स्वयं भूमिसात कर देते हैं।

आप जो भी कार्य आरम्भ करें, उसके लिए अपनी योग्यता अथवा शक्ति के बारे में कतई सशय न करें, सशय को अपने मन में न आने दें। अपनी प्रवृत्तियां सदा रचनात्मक रखें, अपनी सफलता पर भरोसा रखें, अपनी विजय पक्की समझें। ऐसा करने पर ही आपकी विजय होगी। अपने मन में सदा विजयी भाव ही धारण करें, हीन-भावना को अपने पास मत आने दें। सदा अपनी सफलता व अपनी विजय की भविष्यवाणी करें।

असफलता के बारे में सोचे भी नहीं। यह न कहें कि आप असफल रह जाएंगे। आप में कार्य करने की जो शक्ति है, उसकी प्रशंसा करें। अपने को दोषी न मानें।

आपको अपनी प्रशंसा से बहुत प्रसन्नता होगी। यह प्रसन्नता वैसी ही होगी जैसी बच्चों को होती है। अपने आपको प्रोत्साहित करें, निरुत्साहित नहीं। जितनी बार भी आप अपनी शिकायत करेंगे, अपनी लानत-मलामत करेंगे, उतनी ही बार अपने आपको हानि पहुंचाएंगे उतनी ही बार उस बकरी की तरह मुह का खाना गिराएंगे जो मैं-मैं करती रहती है।

कभी भी अपने प्रति दीनता की बातें न करें। कभी भी गिरावट की बात न सोचें। कभी तुच्छ बाते न करें। सदा उन्नति और प्रगति की ही बातें करें। आगे बढने की बात करें। सदा अपने और संसार के कल्याण की बातें करें, आनन्द की बातें करें। रोने और निरुत्साहित करने वाली बाते सदा-सदा के लिए छोड दें।

मन में सदा आकांक्षा के उज्ज्वल चित्र आंकें। आशा व विश्वास के गौरवशाली और सुन्दर चित्रों की कल्पना करें। कभी भी अन्धकारपूर्ण, निराशा से भरी हुई, दिल को गिराने या कमजोर करने वाली बाते न करें। सदा अपनी सफलता की बातें करें। उसी की भविष्यवाणी करें। सदा यही आशा रखें कि आप जो प्रयत्न कर रहे हैं, आपको उनका सर्वोत्तम फल प्राप्त होगा। अपने विराट और विशाल भविष्य की कल्पना करें और दूरदृष्टि से उसी को निहारें। कभी भी ऐसा संशय न करें कि आप सफल होंगे या नहीं।

डेवी क्रोकेट ने कहा था—यह निश्चय रखकर कि आप ठीक मार्ग पर चल रहे हैं, आगे बढते जाइए। सारा दिन दुविधा, संशय और सन्देह करने में मत गवाइए।

जो लोग द्रुत निश्चयी नहीं होते वे सदा दुविधा में ही पडे रहते हैं।

जो लोग द्रुत निश्चय नहीं कर पाते और सदा दुविधा में ही पड़े रहते हैं, जिन्हें अपने मन की सही स्थिति का ही पता नहीं चलता, जिनमें स्थिति निश्चय करने की शक्ति नहीं, उन्हें सदा ही सकट घेरे रहते हैं। उन पर संकट आते ही रहते हैं। उन पर विपत्तियों के बादल मंडराते ही रहते हैं, क्योंकि उनका संशय उन्हें यह निश्चय ही नहीं करने देता कि उन्हें किस ओर कदम बढाना है।

ऐसा देखा गया है कि जिन व्यक्तियों ने ससार में महान कार्य किए वे द्रुत निश्चयी ही नहीं, दृढ निश्चयी भी थे। उन्होंने अपना बहुमूल्य समय झिझकने या किसी बात को बार-बार सोचने में कभी नहीं लगाया, व्यर्थ नहीं गंवाया। जो व्यक्ति सदा तर्क-वितर्क—ऐसा करू या ऐसा न करू—के ऊहापोह में फंसे रहते हैं, उनके कदम आगे बढ ही नहीं पाते। वे प्रश्नों और समस्याओं के दोनों पहलुओं को तोलने और जांचने में ही अपना सारा समय लगा देते हैं। जो व्यक्ति सदा अनिश्चय और उलझन में फसे रहते हैं उनकी स्थिति उस व्यक्ति के समान होती है जो किसी सभा में बैठा वक्ताओं के भाषण सुन रहा होता है और जो भी वक्ता भाषण करता है, वह उसी के विचारों को सही और युक्तियुक्त मान लेता है अर्थात यदि किसी सभा में तीन व्यक्तियों ने भाषण किए तो पहले वह प्रथम वक्ता के विचारों से सहमत हो जाएगा, परन्तु जब विपक्ष का कोई दूसरा व्यक्ति अपने विचार रखेगा तो वह उसे ही युक्तियुक्त मानने लगेगा। अनिश्चित मन वाले व्यक्ति की स्थिति सदा ऐसी ही होती है, वह किसी एक बात पर टिका नहीं रह सकता। वह सभी वक्ताओं के विचारों के साथ बहता रहता है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि उसका अपना कोई निश्चित मत नहीं होता।

जांच-पड़ताल और निरीक्षण करने से यह निश्चय हो गया है कि जो व्यक्ति छोटी-छोटी बातों का निर्णय करने में भी तर्क-वितर्क और ऊहापोह में फंसा रहता है, वह कभी भी कोई महान कार्य नहीं कर सकता।

सशयमना लोगों में एक विशेष बात यह भी होती है कि वे जो भी निश्चय करते हैं, उससे कभी भी सन्तुष्ट नहीं होते, उन्हें उस निश्चय पर दुख होता रहता है। वे सदा ही सोचा करते हैं कि जो कुछ उन्हें जानना है, कल उन्हें उसकी जानकारी हो जाएगी और तभी वे कुछ निश्चय कर पाएंगे। परन्तु वह कल कभी भी नहीं आता और इस प्रकार अगले कल के लिए उनका निश्चय टलता जाता है। इस प्रकार लाभ उठाने का समय उनके हाथ से निकल जाता है, पर अब पछताए होत क्या जब चिड़िया चुग गई खेत।

आत्मविश्वास तो व्यक्ति की आकृति से ही टपकता है। सन्देही व्यक्ति को प्रवृत्ति और दृढ़ता से सदा डर लगता है। उसे आत्मविश्वास से भी डर लगता है। सन्देह सदा कायर व्यक्ति पर ही आक्रमण करता है। वह उन्हीं पर आक्रमण करता है जिन्हें अपनी शक्तियों का ज्ञान नहीं होता। आत्मा से दुर्बल व्यक्ति ही सशय के शिकार होते हैं। जिन व्यक्तियों को भरोसा होता है, सन्देह या सशय उन पर कभी भी आक्रमण नहीं करता, क्योंकि उसे यह भी पता होता है कि यदि आत्मविश्वासी एव दृढ़ निश्चयी व्यक्ति पर आक्रमण किया तो वह मारा जाएगा, बुरी तरह कुचल दिया जाएगा। संशय को दृढ़ संकल्प और उत्कट महत्वाकांक्षी व्यक्ति से बड़ा भय लगता है। वह कमजोर दिल वालों और कायर लोगों को ही ढूंढता है और

उन्हीं का पीछा करता है। ऐसे लोग फौरन ही उसक चगुल में फस जाते हैं, उसके शिकार बन जाते हैं और ऐसे ढेरों शिकार उसे जहां-तहा प्रतिदिन मिल जाया करते हैं।

सशय का यह नियम है कि प्रतिदिन लाखों लोगों को अपना निश्चय छोड़ देने, प्रयत्न न करने और कार्य आरम्भ करना छोड़ देने के लिए उकसाता रहता है। यदि यह सशयकारी बला न होती तो लाखों लोग अपने किए हुए निश्चय के अनुसार ही कार्य करते और उसमें सफल होते, क्योंकि उनमें कार्य करने की शक्ति थी, योग्यता थी। परन्तु इस सशय ने ही उन्हें अपने मार्ग से विचलित किया, उनकी टांग खींची।

हम जब भी कोई असाधारण कार्य आरम्भ करते हैं तो संशय हमारे सामने आकर खड़ा हो जाता है। यह हमें सावधान रहने, फूंक-फूककर कदम रखने का परामर्श देता है, धीरे-धीरे चलने की बात कहता है। यह कहता है कि इस कार्य में पहले भी अनेक योग्य व्यक्ति असफल हो चुके हैं। यह कहता है कि तुम अपनी शक्तियों का गलत अनुमान लगा रहे हो, अपनी योग्यता को अधिक समझते हो। यह कहता है कि तुम स्वयं अपने को धोखा दे रहे हो। तुम्हें और अधिक पूंजी जमा हो जाने तक रुक जाना चाहिए। इस प्रकार जो व्यक्ति इसके चगुल में फंस जाता है, वह कार्य आरम्भ ही नहीं कर पाता और यदि कर भी देता है तो उसमें सफल नहीं होता। परन्तु यदि आप चाहें तो सशय को बडी सरलता से नष्ट किया जा सकता है, पूर्णत. समाप्त किया जा सकता है। यदि इस दैत्य ने आपको घेर लिया है तो फौरन इससे अपना पिण्ड छुड़ाइए, इसे समाप्त कर दीजिए। इसे एक दिन भी जीने मत दीजिए। फौरन स्पष्ट शब्दों में कह दीजिए—तुमने मुझे बहुत सता लिया, बहुत कष्ट दे लिया, अब मैं तुम्हारे चंगुल में न फंसूगा। तुम्हारा-मेरा रास्ता अलग-अलग है। मैंने तो तुम्हारे परामर्श से बहुत हानि उठाई। तुमने अब तक मुझसे विश्वासघात किया। जब-जब मुझे सुअवसर मिले, भाग्य ने मेरा द्वार खटखटाया, मैंने उस समय तुम्हारी बात मानकर अपना अहित ही किया। एक बार मुझे वह महान सौभाग्य प्राप्त होने ही वाला था जिसके लिए मैं बरसों से उत्सुक था, पर जब मैं उसे ग्रहण करने के लिए आगे पग बढ़ाने ही वाला था कि तुमने मेरी बांह पकड़कर मुझे रोक लिया और कहा—यह काम तुम्हारे लिए ठीक नहीं, यह खतरनाक काम है। अच्छा होगा कि तुम किसी और अच्छे अवसर की प्रतीक्षा करो। यदि उस समय मैं तुम्हारी बात न सुनता, तुम्हारी अवहेलना कर देता तो अवश्य ही आज एक महान व्यक्ति होता, क्योंकि उस समय मैं अपनी आकांक्षाओं के अनुकल कार्य आरम्भ करता और उसमें अवश्य सफल होता, पर मैंने तुम्हारी बात सुनकर ही अपना भविष्य बिगाड लिया और प्राप्त सुअवसर को हाथ से निकल जाने दिया। यद्यपि मेरे यौवन के दिन बीत चुके हैं, पर फिर भी आज मैं तुम्हारा साथ छोडकर एक नवीन जीवन आरम्भ कर रहा हूं और जीवन के इस अन्तिम भाग में ही सही, अपनी चिरपोषित महत्वाकांक्षाओं को पूर्ण करके ही दम लूंगा।

निराशा ही मौत का दूसरा नाम है

जिस व्यक्ति के स्वभाव में ही निराशा भरी हुई हो और जो सदा निरुत्साहित रहता हो, वह स्वयं अपने ही विचारों के कारण मरा हुआ होता है। ऐसे व्यक्ति की आयु के कई वर्ष कम हो जाते हैं, क्योंकि नकारात्मक मनोवृत्ति से आयु कम ही होती है। यही फल निष्क्रियतापूर्ण मनोवृत्ति का भी होता है।

यह कितने आश्चर्य की बात है कि हम संसार में स्वास्थ्य को सबसे बड़ा वरदान मानते हैं, परन्तु इसके बावजूद हम सदा अपने स्वास्थ्य नाश की बात करते रहते हैं।

क्या यह आश्चर्य की बात नहीं कि जब हम प्रसन्न रहना चाहते हैं, प्रसन्नता के लिए लालायित होते हैं, मन की शान्ति पाना चाहते हैं, उसके लिए हमें उत्कण्ठा होती है और हम सुखी होना चाहते हैं, उस समय हम निराशा-भरे विचारों का इस प्रकार स्वागत करते हैं जिस प्रकार किसी प्रिय अभ्यागत का किया जाता है। निराशा हमारी प्रसन्नता, सुख और शान्ति को ही नष्ट नहीं करती, वह हमारे उन संकल्पों को भी नष्ट कर डालती है जो हमने कुछ सत्कर्मों को करने के लिए किए थे। निराशा हमारी आशाओं और आकांक्षाओं को भी नष्ट कर डालती है। हमारे मन और शक्ति का इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि जिन बातों का एक पर प्रभाव पडता है, उनका दूसरे पर भी प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। यदि मन में निराशा आती है तो हमारा शरीर भी शिथिल हो जाता है, रुग्ण हो जाता है।

आपको यह जान लेना चाहिए कि जितनी बार भी आपको निराशा घेरती है, जितनी बार भी आप निरुत्साहित होते हैं, उतनी ही बार आप में निष्क्रियता आती है, उतनी ही बार आपकी शारीरिक शक्ति नष्ट होती है। जितनी बार भी निराशा आपको घेरती है, उतनी बार ही आपका मन विषाक्त होता है और उतनी ही बार आपका मस्तिष्क भी दूषित हो जाता है।

बहुत-से व्यक्ति यह नहीं समझते कि निषेधात्मक, नकारात्मक और विध्वंसात्मक विचार वह सब कुछ नष्ट कर डालते हैं जिसे हमने बड़े यत्न से सजोया था, जिसके लिए बडी आकाक्षाएं पाली थीं, आशाएं पाली थीं। लोग यह नहीं समझते कि वे अपनी

दूषित करके अपनी प्रसन्नता को नष्ट करते हैं, अपने आदर्शों को नष्ट
इससे उनका अपना जीवन बिगड़ता और नष्ट होता है।
प्रचित्र तथ्य है कि हमारे बहुत-से महान व्यक्तियों में भी निराश। के भाव
ार इसी निराशा की काली रेखा के कारण उनमें से अनेक मानसिक रोगों
और उनकी महान सफलताओं मे बाधा पहुची।
रन्तर निराशा के विचार आने से, अनुत्साह से व्यक्ति की आकाक्षाए ही
ाती, वरन कार्य के लिए जागृति भी मन्द पडती है, आदर्श स्पष्ट नहीं रहते,
ागते हैं और मानसिक शक्ति भी प्राय नष्ट हो जाती है।
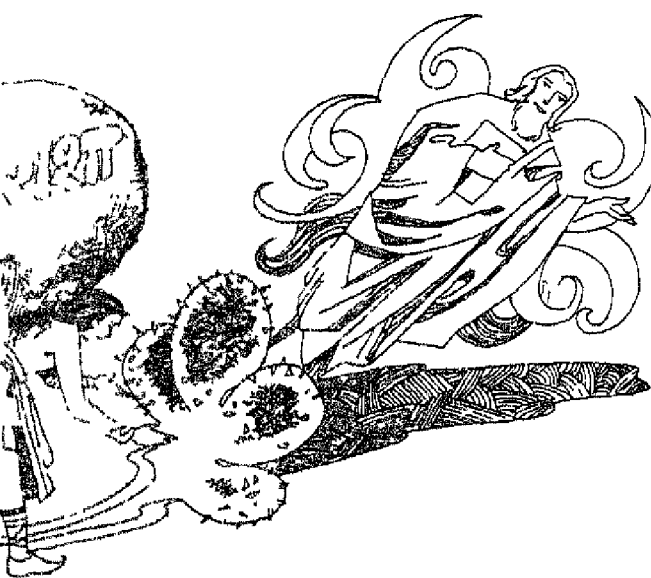
निराशा के भार से दबा मनुष्य बड़ी जल्दी घुटने टेक देता है।

ह स्मरण रखना चाहिए कि जितनी बार भी आप निराशा के आगे घुटने
नी बार अनुत्साहित होते हैं, उतनी ही बार आप अपनी उन आशाओं के
त करते हैं, जिन्हें आपने बड़े श्रम से बनाया था। जितनी बार आपकी
क्षाएं धराशायी होती हैं, उतनी ही बार आपकी मानसिक शक्तिया कार्य के
अथवा आप उन्हें कार्य के अयोग्य और निकम्मा बनाते हैं। जो मन निरुत्साहित
भी प्रकार का निर्माण कार्य कैसे करेगा? वह तो रचनात्मक रह ही नहीं
वह तो नष्ट करने में लगा हुआ है, ध्वस करने में लगा हुआ है।
यही है कि यदि आप निराशा के भाव अपने मन में आने देते हैं तो
कि अपने हाथों अपना विनाश कर रहे हैं।

सभवत आपको ज्ञात नहीं कि दस मिनट की निराशा और अनुत्साह आपके कई दिन के प्रयत्नपूर्वक बनाए गए कार्यों को समाप्त कर देती है, नष्ट कर देती है। मानसिक रूप से नीचे गिरना आसान है। ध्वसात्मक होना बहुत सरल है, जिस प्रकार मकान को गिराना बहुत सरल काम है, परन्तु उसे बनाना बहुत कठिन और श्रमसाध्य है। पर्वत की चोटी से नीचे उतरना सरल है, बहुत तीव्र गति से नीचे उतर सकते हैं, परन्तु चढना कितना दुसाध्य और कठिन है और उसमें समय भी कितना लगता है?

यदि लोगों को यह पता होता कि गन्दे विचार और दूषित भावुकता उनके जीवन को कितनी हानि पहुचाती है तो वे उन्हें कभी अपने पास न फटकने देते, कभी अपने पास न आने देते। बुरी भावनाएं, गन्दे विचार मनुष्य की प्रसन्नता और उसकी कार्यकुशलता के शत्रु हैं। निगेटिव अथवा निषेधात्मक विचार और दुर्भाग्यपूर्ण मनोवृत्ति से हमारा मन और चरित्र दुर्बल होता है और स्वास्थ्य नष्ट होता है। हम जिन कार्यों को करना चाहते हैं, जिनमें हम सफल होना चाहते हैं, ऐसे विचार उन्हें बिगाड़ देते हैं। वे हमारे किए-कराए प्रयत्नों पर पानी फेर देते हैं।

ऐसे शत्रुओं को मन में स्थान देना तथा उन्हें संजोकर रखना क्या खतरनाक नहीं?

बहुत-से लोग प्राय- हर समय निराशा से ही घिरे रहते हैं। इससे कठोर श्रमपूर्वक किए गए प्रयत्न भी नष्ट हो जाते हैं। यह सब काम अनजाने में वे स्वय ही करते हैं। वे जीवन भर निराशा से घिरे रहते हैं। उन्हें यह बात समझ में ही नहीं आती कि ईमानदारी से काम करने के बावजूद उन्हें आशानुरूप फल क्यों नहीं प्राप्त होता। वे यह नहीं समझ पाते कि उनके निषेधात्मक विचार ही, उनके निराशा भरे विचार ही, उनके हाथों बनाए मकान को गिराते रहते हैं। ऐसी स्थिति में उन्हें आशा के अनुरूप फल कैसे प्राप्त होगा?

जब हम स्वयं अपने को निरुत्साहित होने देते हैं तो हमें यह पता ही नहीं चलता कि हम क्या कर रहे हैं। वास्तव में हम उस समय अपने शरीर और भविष्य के साथ खिलवाड़ कर रहे होते हैं। उस समय निराशा की अन्धकारपूर्ण काली छाया हमारी चेतना पर अत्यन्त गहरी छाप छोड़ती है, उसे भयंकर रूप से कुंठित करती है। उस समय उसे दूर रखना हमारे लिए बहुत कठिन हो जाता है।

वस्तुत हमारे शत्रु भी यही काम करते हैं। निराशा हमारी इसी प्रकार की भयंकर शत्रु है। जब भी हम पर निराशा का आक्रमण होता है अथवा भय हमें निरुत्साहित करता है तो यह प्रत्यक्ष रूप से अपने प्रति किया गया हमारा अपराध ही होता है।

निराशा और निरुत्साह ऐसे शत्रु हैं जो हमारी सफलता और प्रसन्नता में निरन्तर बाधाएं डालते हैं, उन्हें नष्ट करने का यत्न करते हैं। यदि हम उन्हें अपने ऊपर आक्रमण करने देते हैं, अपने ऊपर हावी होने देते हैं तो यह हमारा अपने प्रति ही द्रोह है।

हमें चाहिए कि बच्चों को छोटी अवस्था में ही यह बता दें कि कौन-से मित्र भाव हैं और कौन-से शत्रु भाव। उन्हें यह पता होना चाहिए कि किन विचारों, मनोवृत्तियों और

भावनाओं को वे अपने मन में स्थान दें। उन्हें यह भी ज्ञात होना चाहिए कि कौन-से भाव रचनात्मक हैं तथा जीवन को अधिक उन्नत व अधिक कार्य-कुशल बनाते हैं। इसके साथ ही उन्हें यह भी मालूम होना चाहिए कि कौन-से भाव हमारे शत्रु हैं, कौन-से भाव हमें पीछे धकेलते हैं, हमारी उन्नति में रोड़ा अटकाते हैं, हमारी शक्तियों को घुन के समान अन्दर-ही-अन्दर खोखला कर देते हैं, हमारी सामर्थ्य को नष्ट करके हमारे भविष्य को चौपट कर देते हैं तथा उसे अन्धकारमय बना देते हैं।

बच्चों को बाल्यकाल में ही यह भी सिखा देना चाहिए कि वे अपने विचारों, अपनी मनोवृत्तियों और अपनी भावनाओं को किस प्रकार वश में रखें।

प्रायः ऐसा माना जाता है कि युवक और युवतिया अधिक आशावान होते हैं, परन्तु सूक्ष्म रूप से देखा जाए तो पता चलेगा कि युवावस्था में निराशा शीघ्रता से आ घेरती है। कई बार सुनने में आता है कि अमुक युवक अथवा युवती ने निराशा से तग आकर आत्महत्या कर ली अथवा बेकारी से ऊबकर या परीक्षा में सफल न होने के कारण अपने जीवन का अन्त कर लिया। यदि उन युवकों अथवा युवतियों को अपने भावी जीवन की सफलताओं या सफलता की सभावनाओं में विश्वास होता तो वे कभी भी अपने इस अमूल्य जीवन को इस प्रकार नष्ट न कर देते।

युवक मित्रो! तनिक सोचो, विचार कर देखो कि आपके भविष्य में क्या है?

आप अपने सुन्दर भविष्य के लिए सर्वोत्तम साधनों से सम्पन्न हैं, सभी सर्वोत्तम साधन आपके पास हैं? आप यह सोचिए कि आप स्वर्ग के समान इस सुन्दर संसार में आ गए हैं। यहां आपकी सफलताओं की अद्भुत सभावनाए हैं। क्या जाने भविष्य में आप कितनी महान प्रगति कर जाएं? यदि आपके हाथ काम करने के लिए उद्विग्न हैं, आपके मन में काम करने की चाह है, तो आप क्या नहीं कर सकते? आप बडे-से-बडा कार्य करने में समर्थ होंगे। संसार में ऐसा कौन-सा दुर्लभ पदार्थ है जो आपको प्राप्त नहीं हो सकता?

ऐसी स्थिति में निराशा और निष्क्रियता को अपने पास आने देना या उन्हें अपने मन में स्थान देना एक अपराध है, एक ऐसा जघन्य अपराध जिसका परिणाम आपको स्वयं भुगतना पड़ता है।

हां, यह बिल्कुल ठीक है कि यदि आप निराशा से घिर गए, आपके मन में निराशा ने स्थान बना लिया और उसके बाद आपने कार्य करना बन्द कर दिया, अपने मार्ग पर बढ़ना रोक दिया तो आपको मनोवांछित पदार्थ कभी भी प्राप्त न हो सकेंगे। आपके मनोरथ भी पूर्ण न हो सकेंगे। इस प्रकार आप स्वयं निराश होकर दूसरों के जीवन पर भी निराशा की मनहूस छाया डालेंगे। दूसरों के सुख और आनन्द को भी नष्ट कर डालेंगे।

जब भी कभी निराशा आप पर आक्रमण करे, आपको अभिभूत करना चाहे तो आप अपने मन को दृढ़ रखिए, निराशा के आगे उसे झुकने मत दीजिए। अपनी इच्छाशक्ति

को प्रबल कीजिए। अपने आदर्श को सदा सर्वोच्च रखिए। निराशा की भावना को, निरुत्साहपूर्ण विचारों को, मन में आने से पूर्व कुचल डालें तो फिर उन्हें टिकने के लिए स्थान प्राप्त न होगा। जब आपके मन में निराशा विरोधी विचार प्रबल होंगे, मजबूत होंगे तो वे आपके मन पर विजय प्राप्त न कर सकेंगे, आपके मन में स्थान न बना सकेंगे।

मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हू, जो कभी-कभी बड़े ही गौरवपूर्ण ढंग से व्यवहार करता है, खूब मनोरंजनपूर्ण बातें करता है। ऐसा दीखता है कि वह बहुत बुद्धिमान और तेजस्वी है। वह बहुत ही भद्र पुरुष प्रतीत होता है। यह उसका बहुत ही विशिष्ट और उत्तम स्वरूप होता है, पर दूसरे ही दिन उससे बात करें तो वह ठीक ढंग से बात भी नहीं करेगा, बुरी तरह झल्लाएगा। इसका कारण यह होता है कि उसकी मानसिक दशा इतनी परिवर्तित हो चुकी होती है, उस पर निराशा का इतना भयंकर आक्रमण हो चुका होता है कि उसे बात करने का उत्साह ही नहीं होता।

मैं एक ऐसी नवयुवती से भी परिचित हू जो बहुत ही अस्थिरचित्त है। पल भर में उसकी मनोदशा बदल जाती है। उसका 'मूड' इतना परिवर्तित हो जाता है कि आप अनुमान भी नहीं कर सकते कि दूसरे ही क्षण वह क्या कर बैठेगी, क्या कहेगी। उसने कभी भी अपनी इस भावुकता पर काबू पाने का यत्न नहीं किया। पल भर में ही फूल की तरह कोमल हो जाएगी और दूसरे ही क्षण बिजली की-सी तेजी से ऊल-जलूल बातें करने लगेगी। जिस समय उसका मूड बिगड़ जाता है उस समय वह अपने सामने वाले व्यक्ति को क्या कह बैठेगी अथवा क्या कर देगी, इस बात का अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता। कभी-कभी तो उसका इस प्रकार का मूड दो-दो, तीन-तीन दिन तक भी चलता है और कभी उसमें कुछ ही घंटों में परिवर्तन हो जाता है, लेकिन इस प्रकार का अस्थिरचित्त व्यक्ति भी किस काम का जो सदा ही निराशा के झूले में झूलता रहे।

उस युवती को यह ज्ञात नहीं कि उसका इस प्रकार से अस्थिरमति होना उसके स्वार्थ के कारण है। इसका कारण उसकी विकृत मनोदशा ही है। वह अपने इस दोष से छुटकारा पाने का प्रयत्न भी नहीं करती। वह यह नहीं जानती कि इससे उसे कितनी हानि होती है। इससे उसकी आयु घटती है तथा उसकी कार्य-कुशलता भी समाप्त होती है। यह दोष उसकी महत्वाकांक्षाओं में भी बाधक है।

मानव यन्त्र तभी तक प्रभावशाली ढग से काम करता है, जब तक वह सामंजस्यरहित न हो, उसके हर यन्त्र में एकरसता हो, तारतम्य हो। निराशा की छोटी-सी रेखा भी मानसिक यन्त्र को उसी प्रकार बेकार और निकम्मा बना देती है, जिस प्रकार धूल का छोटा-सा कण या छोटा-सा बाल चलती हुई घडी को बन्द कर देता है।

कहने का तात्पर्य यही है कि हमें अपनी मनोदशा इस रूप में रखनी चाहिए कि जिन कामों को हम कर सकते हैं, जिन्हें करने की हममें शक्ति है, उन्हें हम सर्वोत्तम रूप में करें। हमें महान कार्यों को करना है और हमारी प्रवृत्ति भी यही होनी चाहिए, न कि

तुच्छ कामों का करने की। हमें बढ़िया और उच्च स्तर के कार्य करने हैं, निम्न स्तर के नहीं। हमें ऐसे कार्य करने हैं जो स्तुत्य हों, प्रशंसनीय हों, न कि निन्दनीय कार्य।

हमें अपनी मनोदशा इस प्रकार रखनी चाहिए कि हम प्रथम कोटि के, श्रेष्ठ कार्य के करने के योग्य हैं, हममें ऐसी योग्यता है कि हम श्रेष्ठ कार्य कर सकते हैं। जब हम बढ़िया ढंग के, उत्तम स्तर के काम कर सकते हैं, हममें वे कार्य करने की क्षमता है तो हम छोटे या घटिया कामों से सन्तुष्ट क्यों हों, तब हम दूसरे अथवा तीसरे दर्जे के घटिया काम क्यों करें?

इसका अर्थ यह है कि व्यक्ति को हर समय, प्रत्येक स्थिति में उच्च स्तर पर ही रहना चाहिए। उसे सर्वोत्तम स्तर ही अपनाना चाहिए, परन्तु यदि निराशा ने उसके मन में घेरा डाल लिया है अथवा वह निरुत्साहित हो चुका है तो उसके लिए उच्च स्तर पर, सर्वोत्तम स्तर पर रहना असम्भव हो जाएगा।

संसार में सदा निराश रहने या अपने आपको निरुत्साहित अनुभव करते रहने से बढ़कर और बुरी बात कोई नहीं, अपनी मनोवृत्ति को आशा से भरिए, उसका इलाज कीजिए और प्रयत्न कीजिए कि जीवन के प्रति आपका दृष्टिकोण ही बदल जाए। यदि आप अपनी मनोवृत्ति को बदल देंगे तो जीवन के प्रति आपका दृष्टिकोण स्वय ही बदल जाएगा और तब आप सफलता की सीढ़ियों पर चढ़ते चले जाएंगे।

निरन्तर निराश रहने वाले व्यक्ति अपने कार्यों के सम्बन्ध में मन से अपनी कल्पना द्वारा भद्दे चित्र अंकित करने लगते हैं। अपने ही किए के परिणामों के भद्दे चित्र अंकित करने से मन में निराशा जड़ जमा लेती है और निराशा के बाद व्यक्ति चिन्तित रहने लगता है।

जो व्यक्ति बीमार होने पर निराशा के जाल में उलझ जाता है, उसे यही विश्वास होने लगता है कि उसकी हालत दिनों-दिन बिगड़ती जा रही है। वह यह धारणा बना लेता है कि उसका रोग असाध्य हो रहा है और इसका परिणाम कभी भी अच्छा नहीं होता। वह मौत से डरता तो है, परन्तु अपनी भ्रष्ट कल्पना द्वारा मौत को सदा ही अपने सम्मुख खड़ी हुई देखता है।

वस्तुतः मनुष्य की कल्पना बुरी बातों का अनुमान बहुत जल्दी लगा लेती है, उसके चित्र बड़ी प्रवीणता से बनाती है, जबकि अच्छे चित्र बनाने का उसे अभ्यास कराना पड़ता है। व्यक्ति को चाहिए कि अपनी कल्पना को अच्छे चित्र बनाने का अभ्यास कराए।

हमारे मन की जैसी हालत होगी, हमारी जैसी मनोदशा होगी, जीवन के प्रति हमारा दृष्टिकोण भी वैसा ही हो जाएगा, क्योंकि मनोदशा के साथ ही जीवन के प्रति दृष्टिकोण भी बदलता रहता है। जब हमारी मनोदशा अच्छी होती है, उसमें कोई निराशा या चिन्ता नहीं होती तो उस समय हमें हर वस्तु सुन्दर दीखती है। प्रकृति का हर रंग मनमोहक और सुन्दर लगता है।

कई बार ऐसा होता है कि आप रात्रि को पूर्ण निद्रा के बाद प्रसन्न मन से सैर को

जाते हैं शीतल समीर के मन्द झोंके आपको यह अनुभव कराते हैं कि आप पूर्ण स्वस्थ हैं। आप प्रसन्न होते हैं। निराशा की कोई झलक आपके मन पर नहीं होती। आपको चारों ओर प्रसन्नता-ही-प्रसन्नता दिखाई देती है। आपको चहचहाते पक्षी सुन्दर मालूम होते हैं, सूर्य का पीला गोला बड़ा लुभावना लगता है, घास का हरा कालीन मखमली प्रतीत होता है, पेड-पौधे और फूल भी अपनी निराली छटा से शोभित दिखाई देते हैं और सम्भवत दूसरे ही दिन जब आप उसी स्थान पर प्रातःकाल भ्रमण के लिए जाते हैं तो अपनी परिवर्तित मनोदशा के कारण आपको वही स्थान मनहूस दिखाई देने लगता है, चहचहाते पक्षी किसी कष्ट में कराहते दिखाई देते हैं, सूर्य का चमकदार गोला उदास दिखाई देता है और घास का हरा मखमली कालीन मैला-कुम्हलाता हुआ प्रतीत होता है अर्थात सब कुछ पहले दिन की अपेक्षा परिवर्तित दीखता है। उस समय आपको उनमें सौन्दर्य नहीं दीखता। यह सब आपकी मनोदशा के कारण ही होता है।

इसका अर्थ यही है कि हम अपनी मनोदशा के अनुरूप ही संसार के सब पदार्थों को देखते और अनुभव करते हैं। वस्तुत: परिवर्तन हमारी मनोदशा में होता है, सांसारिक पदार्थों में नहीं।

इन बातों से सिद्ध है कि मनुष्य के लिए अपनी मनोदशा को स्वस्थ और शुद्ध रखना कितना आवश्यक है। इसलिए मन:स्थिति को आशा से पूर्ण रखिए, उसे निर्मल और स्वच्छ रखिए, उसे सत्य से ओतप्रोत रखिए। यदि आप वस्तुओं को उनके वास्तविक स्वरूप में देखना चाहते हैं, यदि आप प्रकृति के प्रत्येक पदार्थ में उसको बनाने वाले का स्वरूप देखना चाहते हैं, उसमें सत्यम्, शिवम्, और सुन्दरम् के दर्शन करना चाहते हैं तो आपको अपनी मनोदशा को भी सही स्थिति में रखना होगा, उसमें निराशा को निवास नहीं करने देना होगा।

सत्य तो यह है कि हम प्रकृति को जो कुछ भी देते हैं, वह उसी वस्तु को हमें प्रतिदान में देती है। रस्किन ने गौरवयुक्त दैवी भावों का प्रतिदान किया। यदि आपकी मनोदशा श्रेष्ठ एव दिव्य है तो प्रकृति भी आपको दैवी भाव ही प्रतिदान में देगी। यदि आपमें दिव्य गुण और दिव्य विचार होंगे तो दिव्य पदार्थ आपके पास स्वय चलते आएंगे। प्रकृति हमारे विचारों, हमारे मूड के अनुरूप ही हमसे बातें करती है।

जिस समय हमारी मन:स्थिति सही नहीं होती, दबी हुई होती है, जिस समय हमारे मन में निराशा होती है, ईर्ष्या के भाव होते हैं, उस समय हम वस्तुओं और घटनाओं को उनके यथार्थ रूप में देखने में असमर्थ रहते हैं। उस समय वे सब चीजें विकृत रूप में दिखाई देती हैं, उस समय हमें उनमें कोई सौन्दर्य दृष्टिगोचर नहीं होता। हमें चाहिए कि हम अपनी मनोवृत्तियों को इस प्रकार से अनुप्रेरित और प्रशिक्षित करें कि वे हर समय जीवन में सौन्दर्य का अनुभव करती रहें।

सम्भवतः हम नहीं जानते कि यदि हम अपनी मनोवृत्तियों, मनोदशा अथवा मन:स्थिति

को ठीक रख सकें तो हम क्या चमत्कार कर सकते हैं . यदि हम सर्वोच्च आकाक्षा के स्तर पर अपनी भावनाओं को स्थिर रख सकें तो हमें सभी प्राकृतिक पदार्थों से प्रसन्नता प्राप्त होगी। ऐसा प्रतीत होगा कि प्रकृति हम पर एक अद्‌भुत चमत्कार प्रकट कर रही है, क्योंकि हम जानते हैं कि प्रकृति हमसे जो कुछ प्राप्त करती है, वही बदले में देती भी है। यदि मन सर्वोच्च स्थिति या स्वाभाविक स्थिति में रहता है तो हमें अपार हर्ष और आनन्द प्राप्त होगा, पर कठिनाई यही है कि हमें यह ज्ञात ही नहीं कि ससार हमें अपनी मानसिक स्थिति के अनुरूप ही दिखाई देता है। यदि हमारी मानसिक स्थिति रंगीन है तो यह ससार हमें रगीन ही दिखाई देगा। यदि हमने मन पर निराशा का काला लबादा डाल रखा है तो संसार भी हमें निराशा से घिरा हुआ ही दिखाई देगा। यह कैसे हो सकता है कि अपनी आंखों पर तो हमने काला चश्मा लगा रखा हो और हमें सफेद दिखाई दे।

बहुत-से लोगों का विचार है कि मानसिक स्थिति पर अपना अधिकार नहीं होता अर्थात मनोदशा हमारी अपनी इच्छा के अनुरूप नहीं हो सकती। इन लोगों का कहना होता है कि हमें निराशाजनक मानसिक स्थिति अपने बाप-दादा से विरासत में मिली है। हम इसमें परिवर्तन कैसे कर सकते हैं, पर वास्तव में ऐसा सोचना हमारी भूल है, ऐसा कहना गलत है। हम अपनी मानसिक स्थिति को बदल सकते हैं। अपनी मनोदशा में ठीक उसी प्रकार आमूल-चूल परिवर्तन कर सकते हैं, जिस प्रकार हम अपने वस्त्रों को, अपनी पोशाक को, अपनी वेशभूषा को बदल सकते हैं।

आप घोर-से-घोर निराशा की भावना को भी दूर कर सकते हैं, निरुत्साह को दूर भगा सकते है और निष्क्रियता को तिलाजलि दे सकते हैं, बशर्ते कि आप इनके विरोधी भावों को जगाएं और वे विरोधी भाव हैं—उत्साह, साहस और कर्मठता।

ज्यों ही आपके मन में निराशा का संचार हो, आपका मन उदास हो, आप सन्देह और भय से आक्रान्त हों, चिन्तित हों, आपको सब ओर सूना-सूना प्रतीत हो, उसी समय इनकी विरोधी भावनाओं को मन में जन्म दें।

आज से आप यह प्रण कर लीजिए कि आप अपने मन में निराशा की भावना न आने देंगे। यदि ऐसी निराशाजनक भावना आए तो फौरन भाप जाइए कि यह ध्वंसात्मक भावना है, अनिष्ट करने वाली भावना है। उसी समय अपने मन में रचनात्मक विचार लाइए, फौरन ही अपने मन में पॉजिटिव विचार लाइए। ऐसा करने पर ही आप निराशारूपी घातक शत्रु का सामना करने में समर्थ हो सकते हैं।

अपने विचारों में परिवर्तन लाना कुछ भी कठिन नहीं है। इसमें सीखने जैसी कोई बात नहीं है। हमारी मानसिक स्थिति हमारी इच्छाशक्ति के वश में होती है और हम अपनी मानसिक स्थिति को जैसा चाहें वैसा बना सकते हैं। जो मनुष्य प्रेमी है, प्रेम करना जिसका स्वभाव है, वह सब कुछ प्रेममय देखता है, उसके लिए ससार का स्वरूप ही बदल जाता है। उसके लिए सभी पदार्थ सुन्दर बन जाते हैं, गौरवमय हो जाते हैं, क्योंकि उसकी मानसिक स्थिति वैसी है।

यह कहना सर्वथा गलत है कि निराशा की भावना हमें विरासत में मिली है। वास्तव में हम अपने द्वारा अपने समाज का ढांचा खड़ा करते हैं, अपने समाज की रचना करते हैं। हम जिन भावों का चुनाव करते हैं, उन्हीं के अनुरूप हमारा संसार भी बनता है और यह भावों का चुनाव सर्वथा हमारे अपने वश की बात है, इसके लिए हम स्वतन्त्र हैं।

जिस प्रकार एक क्षार दूसरे क्षार को निष्क्रिय कर देता है तथा जिस तरह सूर्य की किरणें धुन्ध को नष्ट कर देती हैं, उसी प्रकार आशा और उत्साह के स्पर्श मात्र से निराशा और निष्क्रियता से भरी मनःस्थिति में परिवर्तन आ जाता है।

जिस प्रकार सूर्य की किरणें धुंध को नष्ट कर देती हैं उसी प्रकार उत्साह निराशा को मिटा देता है।

आइए, हम अपनी मानसिक स्थिति को स्वस्थ बनाएं, उसे सुधारें, उसमें परिवर्तन करें। यदि उस पर निराशा के विषाक्त कीटाणुओं ने आक्रमण कर उसे रुग्ण बना दिया है तो रचनात्मक विचारों की औषधि से उसे स्वस्थ बना दें। रचनात्मक ढंग से सोचें, ध्वंसात्मक या निषेधात्मक दृष्टि से नहीं। ऐसा करके ही हम जीवन के प्रति अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन ला पाएंगे। जीवन के प्रति हमारा दृष्टिकोण पूर्ण रूप से बदल जाएगा। यदि हम बंजर भूमि को उपजाऊ बना सकते हैं तो क्या अपने मन से निराशा के झाड़-झंखाडों को उखाड़कर वहा पर सुन्दर फूल नहीं खिला सकते?

उत्साहहीनता घातक रोग है

चिन्ता और लगातार चिन्ता करने से शारीरिक स्वास्थ्य पर जितना अधिक बुरा प्रभाव पड़ता है, उतना शायद और किसी बात से नहीं पड़ता। उत्साह भग होने से स्वास्थ्य पर भी बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। वास्तव में उत्साह भंग होना और चिन्ता या निराशा दोनों अन्योन्याश्रित हैं। दोनों का ही प्रभाव हानिकर है।

रस्किन का कहना है--दिल डूबा तो नाव डूबी। मैं उत्साह भग होने के अतिरिक्त ऐसी किसी दूसरी बात को नहीं जानता जो अकेली ही मनुष्य को इतनी अधिक हानि पहुचा सकती है। उत्साह भग होने से आशाएं धुधली पड जाती हैं, आकाक्षाए गौण होकर नष्ट होने लगती है और कार्य करने की शक्ति समाप्त हो जाती है।

कहा भी है—जब तक सास तब तक आस। जब आशा ही नष्ट हो जाती है तो जीवन में रह ही क्या जाता है? जब सारा उत्साह ही ठण्डा पड जाय तो सब कुछ सूना-सूना और फीका-फीका लगने लगता है, सब कुछ आनन्दहीन हो जाता है।

बन्धु! क्या आपने कभी यह भी सोचा है कि जब आप उत्साहहीन होते हैं तो आप स्वय अपने साथ क्या करते हैं? आप अपने मन को ही निषेधात्मक बना देते हैं, जबकि उसे विधेयात्मक, रचनात्मक या पॉजिटिव होना चाहिए। उस समय वह ध्वसात्मक बनकर आपकी कार्यशक्ति को नष्ट कर देता है, जबकि उसे रचनात्मक होना चाहिए था, क्योंकि केवल रचनात्मक या विधेयात्मक मन ही रचना कर सकता है, ध्वसात्मक मन नहीं।

जो व्यापारी सदा बुरे दिनों और घाटे की बात ही सोचता रहता है, वास्तव में वह मन्दी के बुरे दिनों को ही अपने पास बुला रहा होता है। उत्साह भग होने से जो घबराहट होती है, उससे बहुत अनर्थ होता है। यह घबराहट फैलते-फैलते कई बार जगल की आग की तरह फैलकर बहुत हानि पहुंचाती है व उसके परिणाम भी बहुत भयंकर होते हैं। जिस सेना के हौसले पस्त हो जाते हैं, उत्साह भंग हो जाता है, वह तो मानो स्वय ही पराजित हो गई, वह तो युद्धक्षेत्र में जाने से पूर्व ही पिट गई, हार गई।

कुछ लोग तो इतने कोमल और नाजुक होते हैं कि यदि उनका उत्साह भंग हो जाए

तो अपने आप पर काबू नहीं रख सकते। एक तो असफलता उन्हें ले डूबती है। उसके बाद वे प्रयत्न करना ही बन्द कर देते हैं। इस बात का परिणाम यह होता है कि वे मध्यम दर्जे के व्यक्ति रह जाते हैं, जबकि उनमें योग्यता उत्तम या प्रथम श्रेणी का मनुष्य बनने की थी। उन्होंने चूंकि ऊपर उठना बन्द कर दिया, जीवन की बुलन्दियों पर चढ़ना बन्द कर दिया, इसलिए वे नीचे ही रह गए, उन्होंने अपनी उन्नति रोक दी।

वे लोग यह भूल जाते हैं कि जीवन की उन्नति किसी एक प्रयत्न की सफलता पर आधारित नहीं, वरन वह तो निरन्तर श्रम के आधीन है। जीवन की उन्नति के अवसर सतत परिश्रम, निरन्तर अध्यवसाय और अचल निष्ठा से ही आते हैं।

अपने मस्तिष्क को निरन्तर उत्साहित करते रहिए. इससे आपका शरीर सदा सक्रिय रहेगा, सदा काम में लगा रहेगा और उसी के द्वारा आपके जीवन का अभ्युदय होगा।

कई बार व्यक्ति परिश्रम तो कर रहा होता है, परन्तु उसे उसका फल नहीं मिलता। वह इस पर आश्चर्य करता है, परन्तु इसमें आश्चर्य करने जैसी कोई बात ही नहीं, क्योंकि वह काम को अपनी ही आशाओं व आकांक्षाओं के विरुद्ध कर रहा होता है। वह जिस वस्तु को पाना चाहता है, परिश्रम उससे उल्टा कर रहा होता है। ऐसी स्थिति में उसको मनोवांछित फल कैसे मिल सकता है?

वह यह नहीं जानता कि उसे उसके प्रयत्नों का ही फल तो मिल रहा है, परन्तु वह जैसे फल की कामना करता है वैसा फल नहीं निकल रहा। क्या वह नहीं जानता कि बोए पेड़ बबूल के तो आम कहां से होय? वह प्रयत्न तो करता है, परन्तु बीच में निराशा आ घेरती है, सन्देह पैदा हो जाता है, उसके मन में भय आ बैठता है और धीरे-धीरे उसका आत्मविश्वास नष्ट हो जाता है। उस समय वह ठीक ढंग से काम नहीं करता और ठीक ढंग से काम न होने से ठीक फल कैसे प्राप्त होगा?

हममें से बहुत-से लोगों की यह आदत होती है कि हम निरन्तर अपने विचारों को दूषित करते रहते हैं, उन्हें विषमय बनाते रहते हैं। हम अपने मन में ध्वंसात्मक विचार लाते हैं और अपनी शक्ति को तुच्छ समझकर मन में हीन भावनाओं को प्रश्रय देते रहते हैं।

उत्साहहीनता एक ऐसा घातक रोग है जिससे हमारा मस्तिष्क विषमय होकर हमारी योग्यता नष्ट हो जाती है। इससे कार्य के प्रति उत्साह नहीं रह जाता तथा काम में मन भी नहीं लगता। यदि आप रचनात्मक कार्य नहीं करते तो समझ लीजिए कि आप ध्वंसात्मक कार्य कर रहे हैं।

यदि आपका मनरूपी ब्राडकास्टिंग स्टेशन यह घोषणा करता है—मैं सम्पन्नता की, सफलता की कामना तो करता हूं, परन्तु वह मेरे भाग्य में नहीं। मैं सम्पन्नता के लिए कठोर परिश्रम तो करता हूं, परन्तु न जाने क्यों मुझे विश्वास नहीं होता कि मुझे सफलता मिलेगी भी या नहीं। मैं व्यापार से धन तो इकट्ठा करना चाहता हूं, परन्तु चूंकि मेरा जन्म बुरे ग्रहों में हुआ है इसलिए मैं धनी नहीं बन पाऊंगा. मैं जीवन भर साधारण और निर्धन ही बना रहूंगा।

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जीवन की सफलताएं तो अन्य लोगों के लिए ही हैं तो ऐसी स्थिति में निश्चय ही जानिए कि सम्पन्नता के द्वार आप अपने आप बन्द कर रहे हैं, जबकि आपका कर्तव्य था कि आप सम्पन्नता के लिए तथा पूर्ण सफलता के लिए प्रयत्न करते।
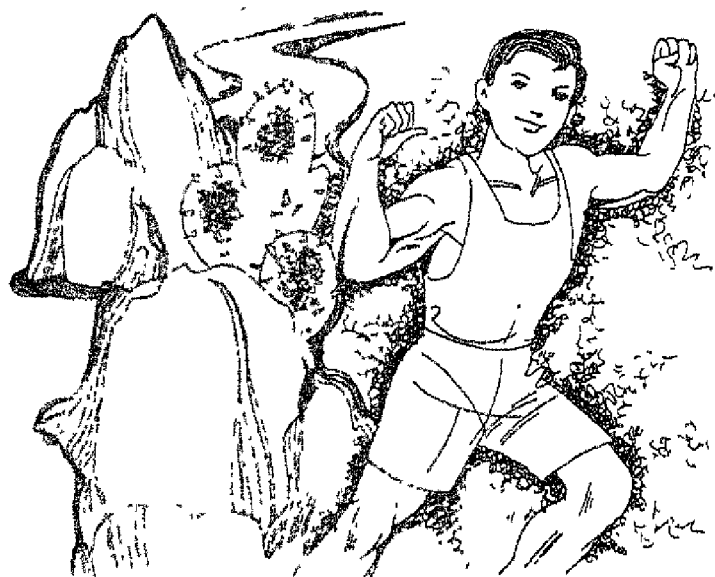
यदि विजयी होना है तो मनोवृत्ति में विजयी भाव होने चाहिए।

यदि आप जीवन में विजयी होना चाहते हैं तो आपकी मनोवृत्ति में भी विजयी भाव होने चाहिए। आपको अपने काम-धन्धे के प्रति विजय की भावना रखनी चाहिए। आपको चाहिए कि आप अपने आपको अपने साथियों से हीन न समझें, अपने आपको उनके समान स्तर का ही समझें। आप अपने साथियों में जाएं तो विजयी भाव लेकर ही जाएं, तभी आप विजयी हो सकेंगे।

यह मान लीजिए कि जनरल ग्रांट का अपनी सेनाओं को इकट्ठा करके उन्हें यह समझाना कि युद्ध में सफलता की आशा नहीं, विजय की आशा नहीं, शत्रु अधिक बलवान है, फिर भी मैं यह आशा करता हूं कि हम अपना पूरा बल लगाएंगे और कहने के साथ ही अपनी सेनाओं से यह आशा रखना कि वे खूब डटकर लड़ाई करेंगे, का क्या फल होगा? यदि ग्रांट अपने सैनिकों में पराजय की, डर की भावना अथवा विजय के प्रति थोड़े-से भी सन्देह की आशंका से जाता तो वह शत्रु की तोप का पहला गोला चलते ही पराजित हो जाता। सेनाएं तुरन्त उस भावना को ग्रहण कर लेती हैं जो उनके सेनापति के मन में होती है।
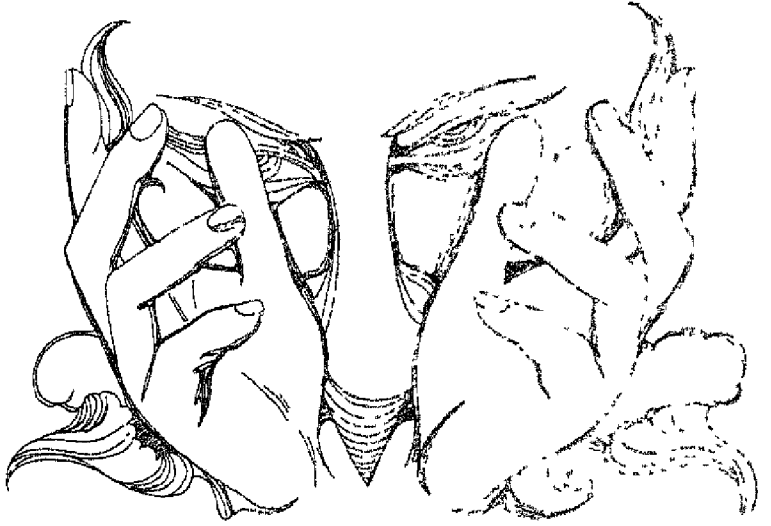
उत्साह आपके दोनों हाथों में सफलता की कुंजी पकड़ाता है।

यह माना, कहा और समझा जाता है कि युद्धभूमि में नेपोलियन की केवल उपस्थिति मात्र से ही उसके सैनिक यह अनुभव करने लगते थे कि मानो उनकी सहायता के लिए नई कुमुक आ पहुंची हो। उसने अनेक युद्ध—भयंकर व आमने-सामने के युद्ध—केवल इसलिए जीत लिए थे कि वह पराजय अथवा उत्साहहीनता को जानता ही नहीं था, उसका नाम भी न लेता था।

उत्साह और विश्वास की देन है सम्पन्नता

जितनी बार आपका उत्साह टूटता है, जितनी बार आप अपनी योग्यता पर सन्देह करते हैं, जितनी बार निराशा आपको घेरती है, उतनी ही बार आप अपने आदर्श से विमुख होते हैं और उस वस्तु को अपने से दूर धकेल देते हैं जिसे आप पाना चाहते हैं। अतः ध्यान रखिए, उत्साह और विश्वास की देन है सम्पन्नता।

आप अपने चारों ओर निर्धनता हीनता और तुच्छता का वातावरण पैदा करके सम्पन्न नहीं हो सकते। निर्धनता, गरीबी और भय के विचार सम्पन्नता के मार्ग में बाधक हैं, उसकी प्राप्ति में रुकावट डालते हैं।

हम यह सोच भी नहीं सकते कि हमारे सन्देह, भय की भावना या उत्साहहीनता हमारी आशा-आकांक्षाओं को किस प्रकार तिरोहित कर देते हैं। इनसे हमारा रक्त ठण्डा पड जाता है, उसकी गरमी जाती रहती है। ये हमारे दृढ निश्चय को धरातल की ओर ले जाते हैं। ये हमें सीधे पराजय का मुंह दिखाते हैं।

जब हम किसी कार्य को उच्च अभिलाषाओं से आरम्भ करते हैं तो हमारा लक्ष्य हमारे सामने होता है, हमारी दृष्टि साफ तौर पर अपने लक्ष्य को देख रही होती है। उस समय हमारी नस-नाड़ियां आदि सभी सस्थान खूब सशक्त होते हैं, परन्तु जब हमारा मन अस्थिर होता है तो पहले हमारा पग पीछे पड़ता है। उस समय हमें सन्देह होने लगता है कि क्या हम ठीक मार्ग पर चल रहे हैं? हम जो महान साहस का कार्य कर रहे हैं, क्या उतनी शक्ति हममें है?

यही कमजोरी की, दुर्बलता की ध्वनि है। हम इस अन्तर्ध्वनि को जितना अधिक ध्यान से सुनते हैं, यह ध्वनि उतनी ही ऊंची होती जाती है और अन्त में इसी ध्वनि के कारण—जो हमें पीछे खींचती है—हम वह काम करना बन्द कर देते हैं।

आप तनिक विचार कर देखिए कि यह कितनी दयनीय स्थिति है। हम ईश्वर द्वारा प्रदत्त शक्तियों को भी दुर्घटना का शिकार होने देते हैं और इसी कारण वह काम उस रूप में आगे नहीं बढ़ता जिस रूप में हम चाहते थे

मैं नहीं कर सकता—असफलता के इस विचार ने अनेक तेजस्वी व्यक्तियों को कहीं का नहीं छोड़ा, उन्हें नपुंसक बना डाला। इस प्रकार के घृणित एवं गिरे हुए विचारों ने ही अनेक प्रतिभावान स्त्री-पुरुषों को आत्महत्या के लिए बाध्य कर दिया। वे इस लोक से कूच कर गए।

हमारा मस्तिष्क ही विभिन्न अवस्थाओं का जन्मदाता है।

उत्साहहीनता के कीटाणु महामारी के समान होते हैं, इनसे बचिए, इनसे दूर रहिए। उत्साहहीन व्यक्तियों से मेल-जोल रखना खतरनाक है। जो व्यक्ति अपने जीवन में असफल रहे हैं, जिन्हें अपने कार्यों के संबंध में ही पता नहीं, जिनका कोई लेखा-जोखा नहीं, उनसे मिलना खतरनाक है। निराशावादियों से मत मिलो। ये लोग यह नहीं जानते कि उत्साह और आकांक्षाओं की तरगें हमें ईश्वर की ओर ले जाती हैं। इस तरह के मनहूस वातावरण में रहने वाले लोगों से मिलने तथा उनके साथ उठने-बैठने से आपका मस्तिष्क भी नकारात्मक और निषेधात्मक बन जाएगा और आप भी अपनी शक्तियों के प्रति सन्देह के गुणगान में उनके स्वर में स्वर मिलाने लगेंगे। उस समय आपका आगे बढ़ना रुक जाएगा और यदि आप निरन्तर इस प्रकार के वातावरण में रहेंगे तो आपकी महत्वाकांक्षाएं नष्ट हो जाएंगी, मर जाएंगी।

आपको यह ज्ञात होना चाहिए कि मूर्ख लोग ही मूर्खों की संगति करते हैं और सफ

व्यक्ति सफल व्यक्तियों से ही मिलना चाहते हैं। जिस प्रकार पक्षी अपने साथी पक्षियों के झुण्डों में ही उड़ते रहते हैं, मृग मृगों के साथ ही विचरण करते रहते हैं, गौए अपने झुण्ड में ही घूमना पसन्द करती हैं, उसी प्रकार यदि आप भी सफलता की कामना करते हैं और मिलते-जुलते असफल व्यक्तियों से हैं तो आपकी सफलता में रुकावट पड़ जाएगी।

आपको सदा उत्साही मनोवृत्ति ही धारण करनी चाहिए। इस मनोवृत्ति के कारण आप अपनी महत्वाकांक्षा की ओर बढ़ते जाएंगे। इससे आपका अपने प्रति उत्साह बढ़ेगा। यदि आपने निराशात्मक मनोवृत्तियां अपना लीं तो आपकी शक्तियां कम होने लगेंगी। साहस के बिना आपकी गति मन्द पड़ जाएगी और एक दिन बिना पैट्रोल की कार की तरह ही ठप्प हो जाएगी।

जिस समय आपका मन निरुत्साहित होता है, उस समय आप अपनी महत्वाकांक्षा की विपरीत दिशा में चल रहे होते हैं। उस समय आप उस लक्ष्य को, उस पदार्थ को अपने से दूर कर रहे होते हैं, जिसकी आपको कामना होती है। उस समय आप अपने विरोधियों को आमन्त्रित कर रहे होते हैं। वस्तुतः उस समय आप उन सब पदार्थों को अपनी ओर आकृष्ट कर रहे होते हैं, जिन्हें आप बिल्कुल भी पसन्द नहीं करते, जिन्हें आप कतई अपने पास नहीं आने देना चाहते।

आप प्रकृति के इस नियम को तो जानते ही हैं कि जो चीज आपके मन में भरी होगी उसे ही आप बड़ी तेजी से अपनी ओर आकृष्ट करेंगे। यदि आपका मन दरिद्रता के भय से भरा हुआ है तो समझ लीजिए कि आप बड़ी तेजी से दरिद्रता को अपनी ओर आकर्षित कर रहे हैं, वह आपको अवश्य ही प्राप्त भी होगी, लेकिन यदि आपका मन विश्वास, आशा और अधिकारपूर्ण योग्यता से भरा हुआ है तो आपके सब भण्डार भरे रहेंगे। आपको वह सब कुछ प्राप्त होगा जो आप चाहते हैं।

आशा स्वय में एक बहुत शक्तिशाली वस्तु है और आशा को मन में संचित भी किया जा सकता है। हम चाहें तो आशा को बढा भी सकते हैं और चाहें तो घटा भी सकते हैं। मानव को नष्ट होने से बचाने के लिए आशा ही अन्तिम सहारा है। जब तक आपके मन में आशा जीवित है, आपको कोई भी नष्ट नहीं कर सकता। मनुष्य कितना भी रोगी क्यों न हो, परन्तु यदि उसमें आशा है तो उसे रोगमुक्त होने में बहुत सहायता प्राप्त होती है, क्योंकि आशा स्वयं में रोगनिरोधक शक्ति है। वह जीवन का यान है, एक जहाज है और उसका कप्तान है आशा। जीवनरूपी जहाज से आशारूपी कप्तान सबसे बाद में उतरता है और जब आशा पहले विदा ले लेती है तो जीवनरूपी जलयान धरातल में समाधि ले लेता है अर्थात डूब जाता है।

आशा में कार्य करने की इतनी शक्ति है जिसका अनुमान लगाना भी कठिन है। सभी जानते हैं कि बलवती आशा वाले व्यक्ति ही प्रायः सफल होते हैं। निर्बल आशा वाले व्यक्ति असफल रह जाते हैं।

आशा वो एकमात्र रास्ता है जो हमें उन्नति की राह पर ले जाता है।

प्राय लोगों की मुखाकृति से ही यह ज्ञात हो जाता है कि वे कैसा जीवन व्यतीत कर रहे हैं। उनका भी पता चल जाता है जो जीवन को वास्तविक रूप में जी रहे हैं और उनका भी बडी सरलता से पता लग जाता है जो विवशता का जीवन जी रहे हैं, जिन्हें इस ससार में कोई आशा नहीं रह गई। निराश लोगों की मनहूस सूरतें ही सब कुछ कह देती हैं। उनके विचारों का ढिंढोरा उनकी शक्ल ही पीटती रहती है। उनकी मुखाकृति ही उनके विचारों का विज्ञान होती है। किसी के लिए यह आवश्यक नहीं कि वह फटे-पुराने कपडे पहनकर ही कहे कि वह अपने जीवन में असफल रहा है। उसका चेहरा ही सारा हाल बता देगा। उसके झुके हुए ढीले कन्धे, उसकी शक्ल-सूरत, उसके इशारे, उसकी भाव-भंगिमा, चेष्टा या बातचीत का ढंग ही यह बता देगा कि वह क्या है, कैसा है तथा कैसा जीवन बिता रहा है।

निरुत्साहित होना सबसे बुरी स्थिति है और अनुत्साह हमारे जीवन को सबसे बडा धोखा देता है। इसी के कारण हमारे मन में यह विश्वास बैठ जाता है कि हम अयोग्य हैं, हममें योग्यता की कमी है, जबकि मनुष्य में योग्यता का अथाह भण्डार भरा होता है। इससे हमारे मन में तरह-तरह के सन्देह भर जाते हैं। जब हम कोई विशिष्ट और महान कार्य करने लगते हैं, तब यह निरुत्साह करने वाली प्रवृत्ति हमें उसे करने से रोकने लगती है और जो इसका शिकार हो जाता है, उसकी जो दुर्दशा होती है, उसका वर्णन करना बडा ही कठिन है। पहले तो उस व्यक्ति के मन में कार्य आरम्भ करने की क्षमता ही नहीं रहती, पर तब वह बची-खुची शक्ति भी समाप्त हो जाती है जो कार्य करने के लिए आवश्यक होती है।

निरुत्साह अथवा उत्साह की कमी हमारी उन्नति के मार्ग मे सबसे बडी रुकावट है, बाधा है। इसलिए अपने पर विश्वास रखो।

एक नवयुवक ने एक सुप्रसिद्ध विश्वविद्यालय मे स्नातक की उपाधि प्राप्त की। उसके बाद वह नौकरी की खोज मे लग गया। कई महीनो तक उसे नौकरी नहीं मिली और वह निराश हो गया। उसमें स्वाभिमान कूट-कूटकर भरा था। उसने विश्वविद्यालय की शिक्षा भी अपने प्रयत्नों से, अपने श्रम से खर्च चलाकर पूरी की थी और अब उसके पास कुछ भी पूंजी जमा न थी।

पैसे समाप्त हो जाने के कारण उसे दो दिन से खाना भी नहीं मिल पाया था और किराया न दे पाने के कारण उसके रहने का कमरा भी छूट गया था। वह कई रातें बाग में बेंच पर सोया। बेंच पर वह सोता तो क्या, लाचारी से करवटें बदलते हुए रात काटता। उसे यह अनुभव होने लगा कि उसके लिए धरती और आकाश सब उलट गए हैं। उसे अपना जीवन ही व्यर्थ प्रतीत होने लगा। वह नौकरी के लिए जहा भी जाता, नौकरी न मिलती। आखिर निराश होकर उसने नौकरी खोजना ही छोड दिया। उसे ऐसा प्रतीत होने लगा कि उसके भविष्य में प्रकाश की एक भी रेखा नहीं बची। उसे इस भय ने जकड़ लिया कि वह निकम्मे और बेकार लोगों की श्रेणी में धकेल दिया गया है। उसके कपड़े फटने आरम्भ हो गए। अब उसकी यह दशा हो गई थी कि वह भद्र वेश में किसी के सामने न जा सकता था। अव्वल तो वह कहीं जाने का उत्साह ही न जुटा पाता था और कहीं जाता भी तो उसे धिक्कारकर बाहर निकाल दिया जाता। बहुत प्रयत्न करने पर उसे एक रद्दी होटल में बर्तन माजने की नौकरी मिल गई। इसमें उसकी रोटी तो जैसे-तैसे चलने लगी, परन्तु सोने के लिए उसे अब भी बाग में पड़ी बेंच पर ही जाना पड़ता था।

एक रात वह इसी दुर्दशा में बेंच पर पड़ा था कि अचानक उसे एक नई दृष्टि प्राप्त हुई। उसे आकाश में मोटे-मोटे, आग जैसे लाल अक्षरों में दिखाई दिया—अपने पर विश्वास रखो।

उस रात वह सो न सका। बेचैनी से प्रभात होने की प्रतीक्षा करने लगा। प्रभात होते ही उसने अपने मन में यह बात फिर से दोहराई—अपने पर विश्वास रखो। वह उठा और नदी पर गया। वहां जाकर उसने अपने हाथ-मुह धोए। खूब अच्छी तरह दाढ़ी साफ की। उसके बाद वह एक मोची के पास गया और मीठी-मीठी बातें करके उसे अपना मित्र बनाया और उससे बूट-पॉलिश मागकर अपने हाथों से बूटों पर पॉलिश की। तब मन में दृढ निश्चय करके, दृढ़ सकल्प के साथ नौकरी की खोज करने लगा। रात्रि को प्राप्त हुई चेतना और नई दृष्टि उसके लिए रक्षक कवच का-सा काम कर रही थी। अब वह किसी कार्यालय में जाता तो उसकी आवभगत होती। अब वह चोर प्रतीत नहीं हो रहा था। उसके कपड़े विशेष अच्छे नहीं थे, परन्तु उसके मुख-मण्डल पर आत्मविश्वास की झलक थी, आशा की एक चमक थी। अब वह चोर न समझा जाता था। वह जो कुछ बोलता, उससे भी आत्मविश्वास टपकता था। सौभाग्य देखिए कि उसे उसी दिन नौकरी मिल गई।

यह ठीक था कि नौकरी उतनी अच्छी न थी, जैसी वह चाहता या इच्छा करता था, पर फिर भी काफी अच्छी थी। सबसे अच्छी बात तो यह थी कि वह अपनी समस्या को सुलझाने मे सफल हो गया था। उसने वह महान और महत्वपूर्ण पाठ पढ़ लिया था, जो अपने पर भरोसा करना सिखाता है, जो अपनी शक्तियों पर विश्वास करना सिखाता है। उस रात्रि में प्राप्त हुई वह दृष्टि ही उसके लिए सफलता का मूल मन्त्र बन गई। उस युवक का कहना है कि उसकी उन्नति का कारण वही दृष्टिकोण है—अपने पर विश्वास रखो। आज वह युवक इतने ऊंचे पद पर पहुच गया है कि उसे देखकर ईर्ष्या होती है। उसके बाद वह कभी भी निराशा का शिकार नहीं हुआ। कभी उसके मन में निराशा का सचार ही नहीं हुआ, कभी उसने निषेधात्मक विचारों को अपने मन में स्थान नहीं दिया और कभी उसने अपने उत्साह को भंग नहीं होने दिया।

आप भी यदि चाहें तो इसी आशा, आकांक्षा और आत्मविश्वासरूपी मूलमन्त्र के द्वारा संसार को अपनी उन्नति से चकित कर सकते हैं।

आत्मविश्वास से आत्ममुक्ति

चिन्ताग्रस्त रहने वाले व्यक्तियों में प्रायः आत्मविश्वास का अभाव होता है। चिन्ता से मुक्त होने के लिए आत्मविश्वास जाग्रत करना अत्यन्त आवश्यक है। युद्ध में सैनिक नहीं, सैनिक का आत्मविश्वास ही लड़ता और जीतता है। आत्मविश्वास को जाग्रत करना ही हमारी जीत है, आत्ममुक्ति है।

ऐसे कुछ व्यक्तियों के जीवन-सम्बन्धी कारनामे सुनकर अत्यन्त आश्चर्य होता है कि वह व्यक्ति अपने आपको अत्यन्त साधारण कोटि का समझते थे। ऐसी ही कुछ घटनाएं विश्व महायुद्ध के समय सुनने को मिलीं। एक नवयुवक ने, जो अपने विद्यार्थी जीवन में कोई भी प्रशंसनीय कार्य कभी न कर पाया और सम्भवत. कभी उत्तीर्ण भी न हो पाता, परन्तु सेना में भर्ती होने के बाद भयानक युद्ध-क्षेत्र में उसने ऐसे साहस का प्रदर्शन किया, जिसे सुनकर बहुत आश्चर्य होता है। वही युवक कुछ समय पूर्व तक अयोग्य और अकर्मण्य माना जाता था। उससे कभी किसी महत्वपूर्ण कार्य की आशा नहीं की जा सकती थी, परन्तु सेना में भर्ती होने के बाद उसने जलते हुए बम को उठाकर खदक से बाहर फेंक दिया और भयंकर गोली–वर्षा में भी, अपनी जान की परवाह न करते हुए, सकट में पड़े हुए अपने एक साथी की रक्षा की।

ऐसे नवयुवक जो अचानक किसी कार्य में महान सफलता प्राप्त कर ससार को चकित कर देते हैं, उनमें भले ही दूसरों से कम योग्यता होती है, परन्तु जिस समय उनमें आत्मविश्वास जाग्रत होता है तो वही व्यक्ति सफलता के शिखर पर जा पहुचता है। सफलता के उच्च शिखर पर पहुंचने के लिए आत्मविश्वास ही सबसे बड़ा सहायक सिद्ध होता है। आत्मविश्वास के द्वारा ही असभव दिखाई देने वाले जटिल-से-जटिल कार्य भी सरल और सभव बन जाते हैं।

प्रभु ने व्यक्ति को चिन्तित और निराश रहने का शाप नहीं दिया। उसने तो सभी को चिन्तामुक्त रहने और आत्मविश्वास का वरदान दिया है। मनुष्य चिन्ताग्रस्त होता है, क्योंकि वह अपना मूल्यांकन दुर्बलताओं के आधार पर करता है। उसमें विजय की नहीं

वरन् पराजय की भावना रहती है अधिकाश व्यक्ति किसी कार्य में सफलता अथवा विजय की भावना को एक स्वप्न समझते हैं। वे आत्मविश्वास को अपने जीवन का आवश्यक अग नहीं बना पाते। जबकि आत्मविश्वास ही प्रत्येक प्रकार की सफलता के लिए आवश्यक और अनिवार्य है। इस ससार में आगे बढ़ने की प्रेरणा देने वाली शक्ति आत्मविश्वास ही है, चिन्ता तो उसे सदा पीछे की ओर ही खींचती है। यदि यह कहा जाए तो अधिक उचित होगा कि मानव स्वय आगे नहीं बढ़ता, बल्कि उसका आत्मविश्वास ही उसे आगे बढाता है।

मनुष्य की शक्तिया तो साधनमात्र हैं, वास्तविक सामर्थ्य तो आत्मविश्वास से उत्पन्न होता है। आत्मविश्वास की विद्यमानता से ही मनुष्य असभव को सभव बना पाता है। इतिहास में ऐसे अनेक उदारहण भरे पड़े हैं कि सामर्थ्य होते हुए भी आत्मविश्वास के अभाव के कारण लोग असफल रह गए। एक योद्धा का कथन है--युद्ध में बन्दूकें नहीं लडतीं, सैनिक युद्ध नहीं करते, वरन सैनिक का हृदय और उसका आत्मविश्वास ही रण मे जीतता है।

आत्मविश्वास के अभाव में यदि किसी व्यक्ति के पास बन्दूक भी है, तब भी वह लाठी वाले साहसी व्यक्ति का मुकाबला नहीं कर सकता। युद्ध के दिनों में एक व्यक्ति अपनी बन्दूक लेकर मकान की छत पर जा बैठा, परन्तु जब एक सामान्य सैनिक ने--जिसके हाथ में एक टूटा हुआ भाला था--उसे ललकारा तो बन्दूक वाले व्यक्ति के हाथ काप उठे और बन्दूक नीचे गिर पडी तथा उस सैनिक ने उसी बन्दूक की गोली से उसका काम तमाम कर उसे युद्ध की विभीषिका से मुक्त कर दिया।

गोलियथ ने जब इजराइलियों के शिविर में पहुचकर उन्हें लड़ने के लिए ललकारा तो वे काप उठे। एकदम से किसी का साहस न हुआ कि जो गोलियथ से जाकर लड़े। जब गोलियथ ने दुबारा चुनौती दी तो डेविड नाम के साधारण युवक ने उससे जूझने की ठानी। जब डेविड अपने से बड़े सैनिकों की आज्ञा लेकर आगे बढ़ा, तब उन्होंने उसे कई शस्त्र दिए, परन्तु डेविड ने वह शस्त्र लौटा दिए और कहा--मुझे इन शस्त्रों के प्रयोग की आदत नहीं। मैं अपने ही हथियारों से युद्ध करूगा। उसने मार्ग से एक भारी पत्थर उठा लिया। गोलियथ ने जब डेविड को इस प्रकार पत्थर उठाते देखा तो वह बोला--आओ, मैं तुम्हारे शरीर के टुकड़े करके चील-कौओं के आगे डाल दू, परन्तु डेविड ने जो अनुपम साहस भरा उत्तर दिया, वह स्वर्णाक्षरों में लिखने के योग्य है। वह बोला--तुम मेरे सामने ढाल-तलवार लेकर खड़े हो, परन्तु मैं एक ऐसा अपराजेय शस्त्र लेकर आया हूं, जिसके द्वारा आज और अभी मैं तुम्हें यमलोक पहुंचा दूंगा और वह है इजराइल का दृढ आत्मविश्वास। डेविड ने वह पत्थर भरपूर शक्ति से उठाकर गोलियथ के माथे पर दे मारा और उसका वहीं काम तमाम हो गया।

आत्मविश्वास के बल पर ही एक सैनिक अनेक सैनिकों से जूझ सकता है। इतिहास

ऐसी अनेक मिसालें हैं। आत्मविश्वास ही सफलता की कुजी है। अपने मन और मस्तिष्क । चिन्ताओं को दूर करके अपने आत्मविश्वास को दृढ़ कीजिए तो सफलता आपके पैरो र लोटेगी। आप किसी भी विजेता की ओर ध्यान दीजिए, उसकी विजय का रहस्य उसके टल आत्मविश्वास मे ही मिलेगा। ससार में सबसे बडा चमत्कार आत्मविश्वास द्वारा । करके दिखाया जा सकता है। मनुष्य की सम्पूर्ण सफलताए आत्मविश्वास की ही शिला र टिकी हैं। आत्मविश्वास के द्वारा असभव कार्य भी सम्भव हो सकते हैं।

आत्मविश्वास सफलता की असली कुजी है।

जो व्यक्ति आत्मविश्वास को जाग्रत कर लेते हैं, उनकी शक्तिया भी द्विगुणित हो जाती हैं। सोई हुई शक्तिया जाग्रत हो उठती हैं। इतना ही नहीं, आत्मविश्वास से पूर्ण थोडे से शब्द भी हजारों-लाखों लोगों के मन में शक्ति और आत्मविश्वास का सचार कर सकते हैं। आत्मविश्वास ही वह शक्ति है जिससे मनुष्य भयानक-से-भयानक संकट में भी हिमालय के समान अटल रह सके, परन्तु इसके लिए आवश्यक है कि उसका उस सर्वशक्तिमान प्रभु में भी अटल विश्वास हो। इस विश्वास के अभाव में मनुष्य की आकाक्षाओं की पूर्ति नहीं हो सकती और न ही वह कदापि अपने उस लक्ष्य तक पहुच पाता है, जिसकी प्राप्ति की कामना उसे होती है। आत्मविश्वास एक ऐसा घातक शस्त्र है, जिसके द्वारा सफलता की सारी संभावना नष्ट हो जाती है। जिस प्रकार धरती से ऊपर फेंका हुआ पत्थर अतरिक्ष में कभी नहीं पहुच सकता, उसी प्रकार अविश्वासी व्यक्ति

जीवन में उच्च लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर सकता। जिस प्रकार पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के नियम को तोड़ना कठिन है, उसी प्रकार अपनी सफलता पर सन्देह या भरोसा न करना जीवन के नियम को तोड़ना है।

आत्मविश्वास से रहित और अन्धविश्वासी व्यक्ति में आकाश-पाताल का अन्तर है। आत्मविश्वास से रहित व्यक्ति को ही जीवन में असफलताओं और पराजय का मुंह देखना पड़ता है, जबकि आत्मविश्वासी व्यक्ति विजय की ओर अग्रसर होता रहता है। संसार में जितने भी महान कार्य हुए, वह सब आत्मविश्वास के बल पर ही सम्पन्न हुए। जिस व्यक्ति को अपनी शक्तियों पर ही विश्वास नहीं, उसे बाहरी शक्तियों का सहारा मिलना कठिन है और उसका किसी कार्य में सफलता प्राप्त करना भी असम्भव है।

संशय, आत्मविजय एवं शक्ति का एक स्पष्ट उदाहरण वह नवयुवती है जिसने अपने पत्र में एक बार लिखा था—मैंने अपने जीवन में बहुत-सी भूलें की हैं, मुझे प्रत्येक कार्य में असफल रहना पड़ा है, मुझे कभी अपने ऊपर भरोसा ही नहीं हुआ और शायद भविष्य में भी न हो सकेगा। इस नवयुवती का सदा असफल रहना उसमें आत्मविश्वास के अभाव का द्योतक है। सदा चिन्ताओं से ही घिरा रहने वाला और संशययुक्त व्यक्ति कभी भी सफल नहीं हो सकता। सफलता का बीज सबसे पहले हृदय में ही अंकुरित होता है। जब आपके हृदय में ही सफलता जड़ न जमा सकी तो संसार की कोई भी शक्ति आपको सफलता तक पहुंचाने में सहायक नहीं हो सकती।

आत्मविश्वास के अभाव में चिन्ताओं से घिरा रहने वाला व्यक्ति अपने जीवन को नष्ट कर डालता है। सम्भवत: इस संसार में दो प्रतिशत व्यक्ति ही ऐसे होंगे जिन्हें अपनी योग्यता पर विश्वास होता है। यदि सिकन्दर और नेपोलियन में विश्वास न होता तो वे भी इतनी बड़ी सफलताएं कभी प्राप्त न कर पाते।

सफलता की पहली शर्त है—अपनी विजय में अटल विश्वास तथा अपनी शक्तियों में अटूट निष्ठा। जेन एडम्स ने जिस समय कॉलेज छोड़ा उस समय वह इतनी निर्बल थी कि उसे डॉक्टरों ने देखकर कहा था कि वह शायद ही छह मास जीवित रह सके, परन्तु उसने अपने आत्मविश्वास और दृढ़ निष्ठा के बल पर ही वह कार्य छह मास में ही पूर्ण कर दिखाया जो वह करना चाहती थी। इसके साथ ही वह अनेक वर्षों तक जीवित भी रही और मानव-कल्याण के अनेक कार्य करने में सफल हुई। उसकी सफलता के आधारस्तम्भ आत्मविश्वास और ईश्वर के प्रति सुदृढ़ भावना ही थे।

एक व्यक्ति बहुत ही दुर्बल और क्षीणकाय था। एक मनोवैज्ञानिक ने सम्मोहन द्वारा उसमें ऐसा आत्मविश्वास जाग्रत किया कि वही व्यक्ति आठ व्यक्तियों को अपने शरीर पर बिठा सकने में सफल हुआ। यह विचार करने की बात है कि उस दुर्बल देह वाले व्यक्ति में इतनी असीम शक्ति कहां से आई। उस मनोवैज्ञानिक ने उसमें जो विश्वास की भावना भर दी थी उसी के बल पर वह ऐसा कर सका। उसी व्यक्ति को जब यह कहा गया कि तुममें इतना बोझ उठाने की सामर्थ्य नहीं तो वह विश्वासहीन होकर तुरन्त धरती पर गिर पड़ा।

कोई भी व्यक्ति चिन्ताओं के भरोसे प्रगति के पथ पर कभी आगे नहीं बढ़ सकता। आगे बढने के लिए तो उसे आत्मविश्वास का सहारा लेना पडेगा। मनुष्य के सकुचित विचार ही उसे अपनी सीमाओं में बाधे रखते हैं। जब तक वह उन्हें लाघकर आत्मविश्वास के क्षेत्र में पग नहीं बढ़ाता, तब तक अपनी आशा-आकाक्षाओं के स्वप्न को भी पूरा नहीं कर सकता।

सम्मोहन करने वाला किसी व्यक्ति में आत्मविश्वास कहां से भर देता है अथवा यू कहिए कि उसकी बात को ठीक मानने की शक्ति कहा से आती है? क्या सम्मोहन करने वाला उस व्यक्ति में शक्ति डाल देता है? ऐसा कहीं नहीं होता। शक्ति तो मनुष्य में निहित होती है। सम्मोहन करने वाला अथवा मनोवैज्ञानिक तो उस शक्ति को प्रकट भर कर देता है। मल्लयुद्ध करने वाले की शक्ति, केवल उसकी रगों में, पुट्ठों में नहीं होती, वह तो उसके अन्दर होती है। यदि उसके मन से उन रगों और पुट्ठों का सम्बन्ध काट दिया जाए तो उसमें शक्ति का दस प्रतिशत अंश भी न रह पाएगा। इसलिए स्पष्ट है कि ज्यों-ज्यों आत्मविश्वास में वृद्धि होती है, त्यों-त्यों कार्य करने की शक्ति सफल होती है। यदि आपके आत्मविश्वास का बर्तन ही छोटा है तो कार्यसम्पन्नता की दैवी शक्ति भी उसमें कम ही समा पाएगी।

अब्राहम लिंकन बहुत ही नम्र व्यक्ति थे। अहकार या गर्व उन्हें छू भी नहीं गया था, लेकिन जब अमरीका में गृहयुद्ध छिड़ा और राष्ट्रपति का चुनाव सिर पर आ गया तो उनके हृदय में ऐसी प्रेरणा उत्पन्न हुई कि अमरीका की बागडोर मैं ही क्यों न संभाल लू। वह राष्ट्रपति पद के लिए उम्मीदवार बने। उन्होंने अपने भाषणों द्वारा राजनीतिज्ञों पर यह प्रकट कर दिया कि उनमें देश की बागडोर संभालने की शक्ति है और उन्होंने यह विश्वास भी प्रकट किया कि वह चुनाव में भी अवश्य विजयी होंगे। लिंकन की इन बातों में अपनी प्रशंसा का पुट न था, वरन अपने आत्मविश्वास के कारण वह अमरीका के राष्ट्रपति बनने में सफल हुए।

संसार में जितने भी व्यक्तियों के नाम अमर हैं, उन सभी का यह दृढ़ विश्वास था कि वह अपने स्वप्नों को अवश्य ही साकार कर पाएंगे। चिन्ताओं को पीछे धकेलकर, आत्मविश्वास के बल पर ही वे निरन्तर आगे बढ़ते चले गए और अपनी मजिल तक पहुंच गए। जिन्हें अपने लक्ष्य का पता होता है, संसार उनके लिए अपने आप मार्ग प्रशस्त कर देता है।

प्रबल आत्मविश्वास के बल पर ही जोन ऑफ आर्क जैसी महिला फ्रैंच सेना में उच्च पद प्राप्त करने में सफल हुई। उसमें यह पूर्ण निष्ठा थी कि प्रभु ने उसे देश की सेवा के लिए संसार में भेजा है। फिर भी यदि उसमें इतना आत्मविश्वास न होता तो वह फ्रैंच सेना के नेतृत्व का महत्वपूर्ण पद प्राप्त न कर सकती। आत्मविश्वास के बल पर ही वह चार्ल्स को यह समझाने में सफल हुई कि उसके ही नेतृत्व में फ्रैंच सेना विजय प्राप्त करेगी और उसका आत्मविश्वास फ्रांस के लिए वरदान सिद्ध हुआ। वस्तुत देखा जाए तो वह युद्ध-सचालन के प्रारम्भिक नियमों को भी न जानती थी, परन्तु उसकी दृढ़ और अजेय

आत्मविश्वास से पूर्ण शक्ति ने एक परास्त सेना को विजयी के रूप में बदल दिया। उसके मार्ग में जितनी भी बाधाएं आईं, वह उन सबकी अवहेलना करके आगे बढ़ती गई और केवल आत्मविश्वास के भरोसे ही यह अशिक्षित बालिका विजयश्री का वरण कर सकी।

उत्तरी ध्रुव की खोज करने वाले पियरी के दृढ़ आत्मविश्वास की केवल कल्पना ही की जा सकती है। उसके समुद्री जहाज टुकड़े-टुकड़े हो गए, सभी संगी साथी बिछुड़ गए, परन्तु वह अपने लक्ष्य के प्रति अविचलित रहा, उसके हृदय में केवल उत्तरी ध्रुव ही था। उसने ईश्वर को क्षण भर के लिए भी अपने से अलग नहीं किया और अन्तत: उसने उत्तरी ध्रुव की खोज कर ही ली। आत्मविश्वास की शक्ति पहाड़ों को भी हिला सकती है। एक बार आत्मविश्वास जाग्रत हो जाने पर बड़े-से-बड़े असम्भव कार्य भी सम्भव हो जाते हैं।

अनेक व्यक्ति जीवन भर छोटे-छोटे पदों पर काम करते रहते हैं। वह अपने अनेक अफसरों से अधिक योग्य होते हैं, समझदार और कार्यकुशल भी होते हैं, परन्तु आत्मविश्वास के अभाव में वे छोटे-छोटे पदों पर ही बैठे रहते हैं, परन्तु जब भी कभी उन्हें किसी उच्चाधिकारी के स्थान पर अस्थायी रूप से काम करने का अवसर मिलता है तो वे स्वयं अपने इस कार्य पर चकित रह जाते हैं कि जिस कार्य को करने में वे अभी तक अशक्त थे और जिसे करना वे असम्भव समझते थे, उसी कार्य को करने की शक्ति उनमें कहां से आ गई। जब उनमें ऐसी भावना जागृत हो जाती है तब उन्हें उच्च पद प्राप्त करने में कोई कठिनाई नहीं होती।

आपका जीवन भी उसी प्रकार का बनेगा जैसा आपमें विश्वास होगा। इसलिए आवश्यक है कि आप अपने जीवन में आशा, स्फूर्ति और उल्लास को जगाएं। फिर कोई भी कार्य करना आपके लिए कठिन नहीं रह जाएगा। आप सफलतापूर्वक उस कार्य की ओर बढ़ सकते हैं। आत्मविश्वास के अभाव में तथा चिन्ता और संशय से घिरे रहने से जीवन नष्ट हो जाता है। अपने मन से चिन्ता अथवा सन्देह की बात को तुरन्त बाहर निकाल फेंकिए। जब आप स्वयं अपने कार्य करने की शक्ति पर सन्देह करने लगते हैं तो आप अपनी योग्यता पर ही कुठाराघात करते हैं और असफल होते हैं। जीवन को वास्तविक रूप में जीने की कला तो आत्मविश्वास से ही प्राप्त होती है। आत्मविश्वास के द्वारा ही मनुष्य की शक्ति के रुके हुए प्रवाह का द्वार खुलता है। किसी व्यक्ति की सफलता का मूल्यांकन उसके आत्मविश्वास द्वारा ही होता है। डिजराइली ने यह कितनी तथ्यपूर्ण बात कही है कि मानव जीवन का सबसे बड़ा आश्चर्य चिन्ताओं से घिरे रहना और चिन्ताओं को ही सब कुछ मान लेना है।

किसी भी देश के राष्ट्रीय ध्वज को बहुत ऊंचा स्थान प्राप्त होता है। वह उस देश की जनता की शक्तियों का प्रतीकचिन्ह होता है, परन्तु राष्ट्रीय पताका का सम्मान भी वहीं तक आगे बढ़ सकता है जहां तक उस देश की जनता अपने सम्मान को आगे बढ़ा

पाती है। यही बात आपके विषय में भी सच है। जहां तक आगे बढ़ने का विचार आप अपने मन को दिला सकते हैं वहीं तक आप आगे भी बढ़ सकते हैं। ससार आपको वही समझता है जो आप अपने आपको समझते हैं। किसी भी व्यक्ति का मूल्य और महत्व उसमें विद्यमान आत्मविश्वास के अनुरूप ही आका जा सकता है।

आपका मन एक साम्राज्य है, परन्तु इस विशाल साम्राज्य की सेना का स्वामी आपका आत्मविश्वास ही है। मानव देह की सारी शक्तिया उसी की आज्ञा का पालन करती हैं। आत्मविश्वास जितनी आज्ञा देता है, आगे बढने की जितनी प्रेरणा देता है, वह शक्तिया वहीं तक बढ़ती हैं। जब तक सेनापति युद्ध के मैदान में अटल और स्थिर रहता है, सेना भी तभी तक युद्ध के मैदान में आगे बढ़ती रहती है। जब सेनापति के ही पैर उखड जाते हैं तो सेना कैसे टिकी रह सकती है। आप उस परम शक्तिसम्पन्न ईश्वर के अश हैं। आपका अपना विश्वास ही उससे संबध जोडता है और सबंध जुडते ही ससार की सारी सफलताएं आपके चरण चूमने लगती हैं। सुदृढ़ आत्मविश्वास चिन्ताए नहीं जगाता, क्योंकि उसे निश्चित रूप से ज्ञात है कि वही जीवन का नेता है, अगुआ है। वह कभी भी पथभ्रष्ट नहीं होगा और न कभी उसे कोई पथभ्रष्ट कर सकेगा।

संसार में अनेक मत-मतान्तर चले और प्राय सभी की आलोचना हुई, परन्तु सबसे अधिक आलोचना ईसाई मत की हुई। बाइबल की शिक्षाओं का उलट-फेर करने और उन्हें मिटाने के सबसे अधिक यत्न हुए, परन्तु फिर भी आज ससार में बाइबल ही सबसे अधिक प्रचलित है। अटल विश्वास के कारण ही यह मत आज तक जीवित रहा और खूब फला-फूला। रोमन साम्राज्य से टक्कर लेने वाले उन नि.शस्त्र ईसाइयों की वीरता की केवल कल्पना ही की जा सकती है, जिन्होंने उस अजेय शक्ति का मुकाबला किया। अनेक वीरों को प्राणदण्ड दिया गया, अनेक नौजवानों को हिसक पशुओं के आगे डाल दिया गया और बेशुमार लोगों को जीवित जलाकर राख कर दिया गया, परन्तु अन्तत रोम जल गया और वे वीर विजयी हुए। आत्मविश्वास की सफलताओं को आंकना कठिन है, उनकी गणना करना भी संभव नहीं है। अनेक वैज्ञानिकों तथा आविष्कारकों ने अनेकानेक कष्ट सहे, परन्तु वह अपने उद्देश्य से कभी भी विमुख न हुए, क्योंकि उन्हें अपने आत्मविश्वास से अलौकिक शक्ति प्राप्त होती रही।

बर्बर युग में भी मानव सभ्यता निरन्तर आगे बढती रही है, उसका कारण मानव का आत्मविश्वास ही है। आपमें भी जितना प्रबल आत्मविश्वास होगा, उतनी ही सफलता प्राप्त करने की सामर्थ्य आपको प्राप्त होगी।

ससार में सबसे कठिन कार्य अपनी छिपी सामर्थ्य को खोजकर अपने मन में आत्मविश्वास को जगाना है। जब मनुष्य को अपनी शक्तियों का पता चल जाता है, चिन्ताएं और सन्देह मिट जाते हैं और उसके अन्त करण में विश्वास अपनी जगह जमा लेता है तब उसकी सारी सोई हुई शक्तियां जाग उठती हैं।

जब मनुष्य को अपनी शक्ति का अहसास हो जाता है तब सब चिन्ताएं मिट जाती हैं।

बाइबल में सबसे अधिक इसी महिमा का गुणगान किया गया है। इसी के बल पर ही लिंकन अपने गौरवपूर्ण लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हुआ। ओल्ड टैस्टामेंट में सभी पैगम्बरों ने विश्वास की शक्ति का गुणगान किया है। ईसा ने अनेक बार कहा है - तुम अपने विश्वास के अनुसार ही बन पाओगे। विश्वास और प्रभु के प्रति श्रद्धा को ही सबसे ऊंचा पद दिया गया है। ईसा के ये शब्द मनुष्य के मन पर जादू का-सा असर डालते हैं। ईसा ने बार-बार कहा कि 'जो मुझ पर विश्वास रखता है, वह मुझसे भी बढ़कर गौरवमय कार्य कर सकता है।' अन्धकार में प्रकाश दिखाने वाली ज्योति आत्मविश्वास ही है। आत्मविश्वास की कमी को व्यक्ति स्वयं अपने विचारों और सुझावों द्वारा ही दूर कर सकता है। जैसा कि हमने पहले कहा कि मनुष्य प्रभु की सन्तान है और प्रभु अपनी सन्तान को निर्बल नहीं देखना चाहता। उसने आपको एक सफल जीवन व्यतीत करने के लिए ही जन्म दिया है। सन्देह द्वारा अपनी उच्चाकांक्षाए नष्ट न कीजिए। संसार को अपने रहने के योग्य समझिए। अपना निराश चेहरा अपने साथियों के सामने मत ले जाइए। ये मत समझिए कि आप जो उच्च कार्य करना चाहते हैं, उसके विषय में प्रभु को ज्ञान नहीं। उसकी शक्ति द्वारा ही आप अपनी उच्चाकांक्षाएं पूर्ण कीजिए। किसी कार्य की प्रेरणा प्राप्त करने के लिए आत्मविश्वास का पल्ला पकड़िए। अपने अस्तित्व का अहसास होना अहंकार नहीं। यह तो प्रभु की सत्ता को प्रकट करना है, परन्तु आपको यह याद रखना चाहिए कि संदेहपूर्ण आत्मविश्वास किसी काम का नहीं। इससे यही प्रतीत होता है कि आपका विश्वास कच्चा है। जिस प्रकार विष मनुष्य के लिए घातक है, उसी प्रकार डर, निराशा, संदेह और चिन्ताएं भी आपके जीवन के लिए विष के समान घातक हैं। आत्मविश्वास जीवन का अमृत है। आत्मविश्वास के सहयोग से ही आप अपनी उच्चाकांक्षाए पूरी कर सकते हैं। अत. आत्मविश्वास को प्राप्त करने का यत्न कीजिए, चिन्ताओं को दूर भगा दीजिए और बस, अपने भाग्य को बदल डालिए।

साधारण बातें भी कभी-कभी बहुत महत्त्वपूर्ण होती हैं

संसार में छोटी-छोटी बहुत-सी बातें होती हैं, जिनसे मनुष्य का जीवन बदल जाता है। फिलिप्स का कहना है—एक-दो शब्दरूपी धागों पर ही समूचे राष्ट्र का भविष्य स्थिर रहता है। एक धागा तोड़ दो, सारा ताना-बाना बिखर जाएगा। इसी प्रकार थोड़ी-सी आशा बड़ी-से-बड़ी निराशा दूर कर सकती है।

सान फ्रासिस्को के एक समाचार-पत्र 'पोस्ट' में एक समाचार प्रकाशित हुआ। एक बडी भारी फर्म का एक एकाउटेंट तीन सप्ताह तक सो न पाया। उसके हिसाब में कुछ अन्तर था। उसने बहुत प्रयत्न किया, परन्तु वह निकलने में ही नहीं आ रहा था। उसके हिसाब में 900 डॉलर का अन्तर था अर्थात उसके हिसाब में 900 डॉलर कम पड रहे थे, एकाउंटेंट बार-बार जोर लगाता था, पर परिणाम वही निकलता। तीन सप्ताह तक न सोने के कारण उसकी स्थिति पागलों की-सी हो गई। आखिरकार हारकर दुकान के मालिक से परामर्श किया गया और नए सिरे से सारे हिसाब की चैकिंग हुई। खोज करने पर 1900 डॉलर की एक प्रविष्टि मिली। मालिक आश्चर्य से बोला—यह तो 1000 की होनी चाहिए, 1900 कैसे बन गया। खोज करने पर पता चला कि कैशबुक लिखने के बाद बन्द करते समय, वहा एक मक्खी मर गई और 1000 की बिन्दी पर उसकी टांग से 9 का अक बन गया और इस प्रकार रकम 1000 से 1900 हो गई।

आरम्भ में जब समय बताने वाली घडी का आविष्कार हुआ और उसका निर्माता हैनरी फ्रास के सम्राट चार्ल्स पंचम के पास उसे उपहारस्वरूप ले गया तो सम्राट ने घडी को देखकर कहा—ये चलती तो ठीक है, परन्तु इसके डायल पर जो अंक लिखे हैं वे सही नहीं लगते।

भाप शक्ति की खोज करने वाला जेम्स वॉट उस समय छोटा-सा बालक था। वह अगीठी के पास बैठा पानी की प्रतीक्षा कर रहा था। अगीठी पर रखी देगची में कुछ पक रहा था। सारा ससार इस छोटी-सी अमान्य घटना के लिए जेम्स वाट का सदा के लिए ऋणी रहेगा। यदि उस समय वाष्पशक्ति की खोज न की जाती तो रेलगाडिया या भाप से चलने वाले जहाज

और हजारो उद्योग-धन्धों का क्या परिणाम होता? यदि भाप पहिए को न चलाए अथवा आग पानी से भाप को उत्पन्न न करे तो संसार की क्या स्थिति होगी?

बातें बहुत छोटी-छोटी होती हैं, परन्तु जीवन के निर्माण में उनका बहुत महत्व होता है। बातें छोटी होने पर भी अनेक बार बहुत कठिनता से समझ में आती हैं। बड़ी-बड़ी और महत्वपूर्ण घटनाए तो हमारे-आपके जीवन मे कभी-कभी घटती हैं, परन्तु जिन बातों का हमारे जीवन में बहुत अधिक महत्व होता है वे बहुत ही छोटी-छोटी होती हैं, जिनकी संभवत याद भी बहुत ही धुधली रह पाती है, परन्तु उन्हीं से उत्पन्न चिन्ताए अनेक बार मनुष्य के जीवन को पशु बना देती हैं, अत छोटी घटनाओं को सामान्य समझना मूर्खता है।

आपको पता है कि होमर द्वारा विश्वप्रसिद्ध महाकाव्य की रचना कैसे हुई? इसका कारण यह था कि ट्राय का राजकुमार यूनान के एक अन्य नगर की रानी पर मोहित हुआ और उसे अपने साथ भगा लाया। ट्राय का किला बहुत सुदृढ़ था और दस वर्ष तक उसकी घेराबन्दी रही। वह सुन्दर रानी, उसकी मोहक मुस्कान और ट्राय की 10 वर्षीय घेराबन्दी ही होमर की उस विश्वप्रसिद्ध रचना के कारण हैं।

मोडेला नामक एक लोकतन्त्री साम्राज्य था। एक दिन वहां के सैनिक बोड़ोन के सरकारी कुए से पानी निकालने वाला बर्तन उठाकर ले गए। वह बर्तन एक अथवा डेढ़ रुपए से अधिक का न होगा, परन्तु उस बर्तन के कारण ही 24 वर्ष तक विनाशकारी संग्राम जारी रहा।

इंग्लैंड, फ्रांस, टर्की तथा रूस में क्रीमिया का युद्ध हुआ। इसमें धन-जन की अपार क्षति हुई, परन्तु इसका कारण क्या था? एक चाबी देने से इनकार कर देना। यरुशलम के एक गिरजाघर पर यूनानियों ने धावा बोला और उस पर ताला लगाकर चाबी देने से इनकार कर दिया। बस, इतनी-सी बात पर क्रोध की ज्वालाएं फूट पड़ीं और बात यहा तक बढ़ी कि रूस ने तुर्की से गिरजाघर की मरम्मत की मांग की। तुर्की ने इस बात को मानने से इनकार कर दिया। इस पर इंग्लैंड भी तुर्की का सहायक बन बैठा। अतः उसने युद्ध की घोषणा कर दी और फ्रांस को भी अपने साथ लपेट लिया। चार देशों का यह युद्ध एक गिरजाघर पर लगे ताले की कुंजी न प्राप्त होने के कारण हुआ।

फ्रास की राज्य-क्रांति ससार के इतिहास में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इस राज्य-क्राति ने वहा के राज्य-परिवार को ही सिंहासन से नहीं उतारा वरन् समूचे देश भर में मार-काट की एक लहर पैदा कर दी। इसका कारण क्या था? शराब का एक अतिरिक्त साधारण प्याला। ड्यूक ऑफ आर्लियन्स सम्राट लुई का पुत्र था। अपने मित्रों के साथ नाश्ता करते समय उसने शराब का एक प्याला अधिक ले लिया। जब वह वहा से विदा होकर अपनी घोड़ा-गाडी में चला तो घोड़े बिदक उठे, जिस पर ड्यूक ने छलाग लगा दी। नशे में पाव लड़खड़ा उठे और उसका सिर सड़क पर जा टकराया। परिणाम यह हुआ कि एक प्याला शराब ने सुदृढ साम्राज्य के उत्तराधिकारी के प्राण ले लिए। राज-परिवार को स्वदेश से भागना पडा।

ससार में ऐसी अनेक छोटी छोटी साधारण बातें होती रही हैं जो अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं का कारण बनीं। सभी देशों के इतिहास में इस प्रकार की अनेकानेक घटनाए मौजूद रही हैं।

इग्लैंड के एक अधेड़ व्यक्ति ने विवाह रचाने की इच्छा प्रकट की, परन्तु उसके सिर पर सामने की ओर कुछ सफेद बाल उग आए थे। उसकी मगेतर को यह अच्छा न लगा। उसे प्रसन्न करने के लिए उसने वह दो-चार बाल उखडवा दिए। बाल उखडने से माथे पर थोडी-सी सूजन आ गई और उस व्यक्ति की उपेक्षा के कारण सारा माथा सूज गया। उसने विशेषज्ञ से सलाह ली। बहुत प्रयत्न किया गया, परन्तु सप्ताह के अन्दर ही वह दो-चार बाल उसकी मृत्यु का कारण बन गए।

इग्लैंड की एक राजकुमारी के बच्चे को डिप्थीरिया था। बच्चे ने मा का चुम्बन लेने का आग्रह किया। मां ने चुम्बन तो दिया, परन्तु बच्चे के रोगग्रस्त कीटाणुओं के कारण मा को कुछ ही दिन में प्राण त्याग करने पडे।

एक लडका बहुत देर से दियासलाई से खेल रहा था। खेलते-खेलते दियासलाई के एक तिनके से आग लग उठी। आग का कारण केवल एक तिनका था, परन्तु उससे 231 मकान जलकर भस्म हो गए तथा सैकडों परिवार बेघरबार होकर विपत्ति में पड गए।
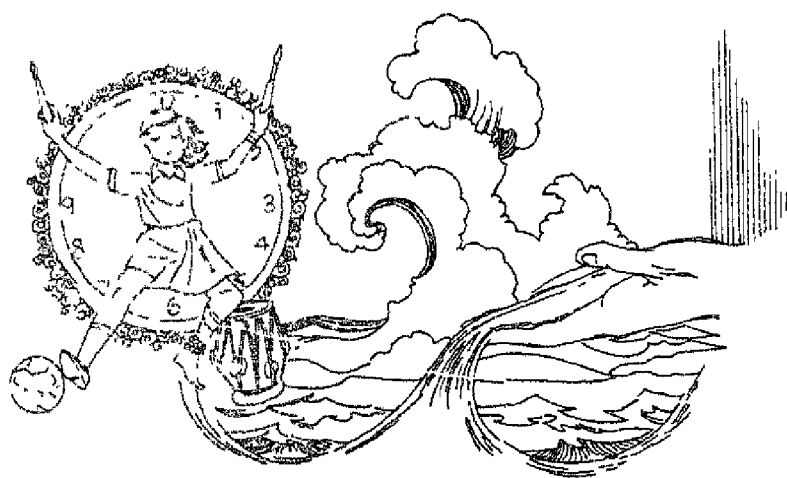
ससार में छोटी-छोटी घटनाएं ही बड़ी-बड़ी बातों को जन्म देती हैं।

इन छोटी-छोटी बातों की ओर बहुत सावधानी से विचार करना चाहिए। यह साधारण-सी दिखने वाली बातें वास्तव में बड़ी महत्वपूर्ण होती हैं। जो व्यक्ति छोटी-छोटी परेशानियों की चिन्ता नहीं करता, वह अनेक बार उस व्यक्ति से भी महान होता है जो बडी-बडी बाधाओं को पार कर जाता है।

अपनी पुस्तक ऑल दी ईयर राउण्ड में चार्ल्स डिकन्स ने लिखा है किसी न प्रश्न किया कि हम बुद्धिमान किसे कहें तो उसे उत्तर मिला जो व्यक्ति छोटी-से-छोटी साधारण बातों पर भी ध्यान दे, उसे ही बुद्धिमान कहा जा सकता है।

चश्मा बनाने वाले एक व्यक्ति के बच्चे आपस में खेल रहे थे। खेलते-खेलते एक लड़के ने दो शीशों को इकट्ठा करके गिरजाघर की बुर्जी की ओर देखा। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि गिरजाघर बिल्कुल निकट आ गया है। उनके लिए यह सब एक तमाशा था। सब भाई-बहनों ने मिलकर यह तमाशा देखा। वे भी आश्चर्यचकित हुए। सब पिता के पास पहुंचे। पिता ने देखा तो वह भी आश्चर्य में डूब गया, परन्तु उसके मन में एक विचार उठा कि इसी पद्धति पर बडी आयु के लोगों के लिए क्यों न कोई खिलौना बनाया जाए। उसने गेलीलियो से विचार किया। गेलीलियो ने इस विचार की उपयोगिता को समझ लिया कि इससे तारे अधिक निकट दिखाई देने लगेंगे और उसने इसी आधार पर एक सूक्ष्मदर्शक यन्त्र बनाया, जिसके द्वारा उसने नक्षत्रों के सम्बन्ध में वह निर्णय किए जो नक्षत्र-विज्ञानवेत्ताओं के लिए आज तक मार्गदर्शक हैं।

एक और बहुत ही साधारण-सी घटना है। एक दिन एक लंगड़ा व्यक्ति बाजार में चला जा रहा था। वर्षा हो चुकी थी। मार्ग में कीचड़ भरी थी। चलते-चलते लंगड़े व्यक्ति का पैर फिसल गया, वह गिर पड़ा और उसकी टोपी एक लड़के के पांव के पास जा गिरी। लड़के ने ठोकर मारकर टोपी को उछाल दिया और टोपी किसी दूसरे लड़के के पास जा गिरी। दूसरे लड़के ने वह टोपी उठाकर उस लगड़े व्यक्ति को दी और उसे सहारा देकर पास के होटल में ले गया। उस व्यक्ति ने उस लड़के का नाम पूछा। लिखकर संभालकर रख लिया और सहायता के बदले उस बालक का धन्यवाद किया। उस घटना के एक माह बाद उस लड़के के पास एक हजार डालर की हुंडी पहुंची। बच्चे ने कोई ऐसा बड़ा काम नहीं किया था, लेकिन कार्य बहुत सामान्य होने पर भी पुरस्कार बहुत असामान्य और बड़ा था।

मधुर और मीठे बोल बोलना बहुत ही सरल कार्य है, परन्तु उनकी सहायता से अनेक निराश और चिन्ताग्रस्त व्यक्तियों की आकृति ही बदल जाती है और बहुत-सी आत्माएं भटकने से बच जाती हैं।

किसी पत्रिका में एक सत्य घटना प्रकाशित हुई थी। समाज के बहुत निम्न वर्ग की बच्चियों ने श्रीमती गेल नामक महिला का इसलिए आभार माना, क्योंकि उस महिला ने बालिकाओं के विचार में उनके लिए बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य किया था। बालिकाओं ने आभार प्रकट करते हुए उस महिला से कहा—श्रीमती जी! हम आपका सम्मान करते हैं। जब आपके पति घर से बाहर जाने लगे थे तो आपने उन्हें उनका हैट लाकर दिया था और उस समय उन्होंने झुककर 'थैंक्यू डियर' कहा था। श्रीमती जी! हमने आज तक किसी पुरुष को ऐसी मधुर वाणी में बातें करते नहीं सुना। घर पहुचकर हममें से एक लड़की ने पूछा था कि क्या श्रीमान गेल का व्यवहार प्रशंसनीय नहीं था और हम सबने

है कि हम भी अपने परिवार में इसी प्रकार का व्यवहार किया करेंगे।
मेरे पिताजी घर आए तो उन्होंने पूछा कि खाना तैयार है? तब मैंने
ाजी, खाना तैयार है। पिताजी ने मेरी ओर विचित्र दृष्टि से देखा,
ों। मेरे पिताजी को माताजी से प्रेम तो था और उनका व्यवहार भी
मैंने कभी उन्हें इस प्रकार मीठी बात कहते हुए न सुना था। मैंने
ग अपने भाई से भी अपनाया तो उसने भी बड़े स्नेह का प्रदर्शन
ेरा एक मित्र टॉम भी है, वह जब भी कुछ पूछता तो मैं उसे सदा
दों में उत्तर देती। उसका प्रभाव यह हुआ कि हमारे घर में इस प्रकार
होने लगा, जिससे सभी को मानसिक सुख और सन्तोष प्राप्त हुआ।
ने अनुमान भी न लगाया होगा कि वर्ष भर में गेहूं का एक दाना
ता है और 15 वर्ष तक यदि उसी गति से फसल उत्पन्न होती रहे
ा समूची सृष्टि के लोगों के लिए शताब्दियों तक काम दे सकता है।
का घेरा आठ लाख छयासी हजार मील का है, लेकिन यदि किसी
ऐसी दूरबीन से देखने का प्रयत्न किया जाए, जिसके शीशे के आगे
हुआ हो तो सूर्य दिखाई ही नहीं देगा।
से आप यह अनुमान लगा सकते हैं कि ये छोटी-छोटी साधारण-सी
रखती हैं। छोटी-सी एक भूल और थोडी-सी चिन्ता, लेकिन यदि
न दिया जाए तो मनुष्य के जीवन को बर्बाद कर सकती है।
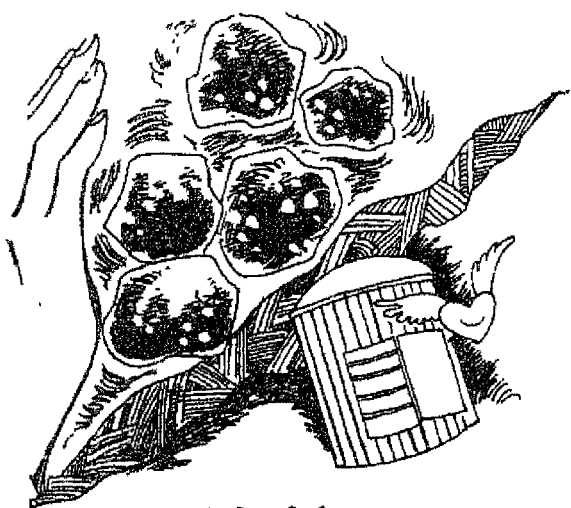
छोटी-छोटी भूलों को अपने जीवन
में आने से रोकिए वर्ना पछताएंगे।

प्रसन्नता का महत्त्व

जीवन में प्रसन्नचित्त रहना ही आपकी लोकप्रियता का कारण है। जिस बीमारी का इलाज बड़ी-से-बड़ी दवा नहीं कर सकती—उसका इलाज यह सस्ती औषधि कर देती है—जब भी सम्भव हो, हंसिए। प्रकृति की यह अनमोल सौगात हमारे जीवन में उत्साह का नया प्रकाश फैला देती है। अतः सदैव प्रसन्न रहिए।

सैनेका का कथन है—जो दुख उठाने से पहले ही दुख मान बैठता है, व आवश्यकता से अधिक दुखी होता है।

एडीसन ने कहा है—चिन्तामुक्त और प्रसन्नचित्त जीवन के सिवा और कोई असल जीवन नहीं है।

जार्ज वरनाल्ड का कहना है—पवित्र आमोद-प्रमोद का मेरी दृष्टि में वही सम्मान जो बाइबल के दस आदेशों का है।

मैथ्यू ने लिखा है—चिन्तामुक्त एवं मोहक स्वभाव तथा विनोदपूर्ण प्रकृति ही सफल की आत्मा है।
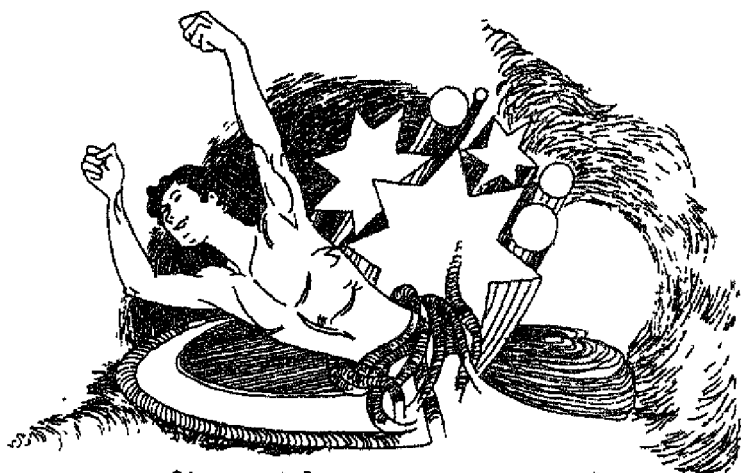
चिंतामुक्त एवं मोहक स्वभाव सफलता की आत्मा है।

सोलोमन का आदेश है—मधुर वाणी उस मीठे शहद के समान है, जो आत्मा को मधुर लगता है और अस्थियों को स्वस्थ रखता है।

नेकी अथवा भलाई के पश्चात केवल मनोरजन ही एक ऐसी वस्तु है, जिसके बिना मनुष्य का निर्वाह नहीं हो सकता।

एक किसान के बेटे ने अपने पिता से पूछा--पिताजी, प्रसन्नचित्त होने का क्या अर्थ है? पिता बोला—बेटा, यह तो तुम जानते ही हो कि मैं अधिक पढ़ा-लिखा नहीं हू और बहुत-से शब्दों के अर्थ नहीं बता सकता। इसका अर्थ भी मुझे नहीं आता, परन्तु इसका अभिप्राय मैं समझाता हूं। सम्भवत. तुम्हें याद होगा कि तुम्हारे एक ताऊ थे। मेरे विचार में ससार में यदि कोई प्रसन्नचित्त व्यक्ति हुआ है तो वह तुम्हारे ताऊ ही थे। उन्हें कभी भी किसी काम को पूर्ण करने में कोई कठिनाई नहीं हुई वरन् कठिन कार्य तो उनके अधिक अनुकूल हुआ करते थे। उदाहरण के लिए खेत में गेहूं की कटाई का काम मेरे लिए पूरा जानलेवा होता था और मैं सदा इससे कतराता था, परन्तु वे धूप में भी प्रसन्नता से कटाई करते रहते थे। यदि वह कभी देखते कि मैं पीछे रह गया हू तो वह कहते—शाबाश भैया, गेहूं की इन दो कतारों के काटने के बाद ऐसी केवल अठारह कतारें और रह जाएंगी तो आधा काम खत्म हो जाएगा।

यह बातें वह इस ढग से कहते थे कि मेरे अन्दर उत्साह और आनन्द भर जाता था। उनकी बातें सुनते ही मैं सारा काम बड़ी प्रसन्नता से करने लगता था। गेहूं की कटाई से भी एक और कठिन काम था—खेत में से कंकड़-पत्थर अलग करना। हमारे पुराने खेत में ककड़ों-पत्थरों की भरमार थी। पत्थरों को निकाले बिना अच्छी फसल असम्भव थी। जब कभी कोई दूसरा काम न होता तो खेत से पत्थर निकालने का ही काम करना होता था। हम जब भी हल चलाते, पत्थरों की तहों की तहें ऊपर आ जातीं और तब हमें ऐसा अनुभव होता कि यह काम हमें फिर नए सिरे से करना होगा। बेटा! यदि तुमने इस सम्बन्ध में अपने ताऊ की बातें सुनी होतीं तो तुम इस काम को ही इस दुनिया में सबसे अच्छा और मनोरजक खेल समझते। वह काम को जिस दृष्टिकोण से देखते थे, मैंने आज तक उस तरह देखने वाला अन्य दूसरा व्यक्ति नहीं देखा।

लोगों की फसल की कटाई हो चुकी थी, अभी घास काटने लायक नहीं हुई थी। मेरे विचार से खेत में कोई विशेष कार्य भी न था। तभी हमारे पिताजी ने खेत के पश्चिमी हिस्से से पत्थर निकालने की आज्ञा दी। मैंने तो ऐसा अनुभव किया कि मैं रो ही दूगा, परन्तु तुम्हारे ताऊ बोले—भाई आओ! मुझे पता है कि खेत के अमुक स्थान पर सोने के बहुत-से ढेर जमा हैं। उसका अर्थ यह था कि वह खेत के उस हिस्से को सोने की खान ही समझ लेते थे। वह मुझे वहां ले गए और मुझे ऐसा लगा कि जैसे मैंने सारा दिन सोने की खानों में ही गुजार दिया। सारा समय हंसी-खुशी में कट गया। दिन भर काम करने के बाद तुम्हारे ताऊ कहा करते थे—सोने के इन ढेरों से धनी बनने का एक

ही उपाय है कि इन्हें अपने अधिकार में रखने की अपेक्षा दूर फेंक दो। मैं उनकी उस बात का तर्क तो न समझता, परन्तु यह काम मुझे खेल प्रतीत होता और खेल में से पत्थर कम हो जाते। मैं तुम्हें पहले ही कह चुका हूं कि प्रसन्नचित्त का शाब्दिक अर्थ तो मैं नहीं बता सकता, परन्तु इतना कह सकता हूं कि तुम्हारे ताऊ यदि प्रसन्नचित्त नहीं थे तो फिर कौन प्रसन्नचित्त हो सकता है?

एक गोरे साहब ने एक हब्शी से पूछा—"मियां काले खां, तुम्हारी आयु कितनी है?"

हब्शी बोला—"श्रीमान्! यूं तो मेरी उम्र पच्चीस वर्ष है, पर यदि आप इसका अनुमान प्रसन्नता, सैर-सपाटे और खेल-कूद से लगाते हैं तो मैं कहूंगा कि मैं सौ साल का हूं।"

स्वर्गीय चार्ल्स डेन अपने काम की प्रसन्नता में सदा खिला रहता था। वह अपनी आयु के अन्तिम क्षण तक प्रतिदिन कार्यालय जाता रहा। एक बार एक व्यक्ति ने उनसे पूछा—"मिस्टर! मेरी समझ में नहीं आता कि आप इतना कठिन काम कैसे करते हैं?"

उत्तर में डेन साहब बोले—"श्रीमान्! शायद आपने गलती की, मुझे तो इस काम में खेल-तमाशे के सिवा और कुछ अनुभव ही नहीं होता।"

मिस्टर डेन को भी प्रेजिडेंट रूजवेल्ट की तरह 'बुली' शब्द बहुत पसन्द था। अत्यन्त प्रसन्न होने पर वह प्राय: इस शब्द का प्रयोग करते थे। वह प्रसन्नता चाहे किसी सैर-सपाटे से प्राप्त हुई हो, क्यूबा या मैक्सिको की यात्रा से प्राप्त हुई हो अथवा किसी समाचार-पत्र में कोई बढ़िया खबर पढ़कर प्राप्त की गई हो। एक बार उन्होंने एक असयत-से बूढ़े व्यक्ति से पूछा—"आप तो अपने आपको बहुत बूढ़ा और दुर्बल बनाए चले जा रहे हैं, क्या आप उपन्यास आदि नहीं पढ़ते, बिलियर्ड आदि नहीं खेलते सैर-सपाटे के लिए नहीं जाते?"

बूढ़े व्यक्ति ने बहुत ही उदास उत्तर दिया—"नहीं भाई, मैं इन कामों के योग्य नहीं हूं।"

डेन महोदय बच्चों की तरह खुशी से खिलखिलाकर बोले—"मैं तो उपन्यास भी पढ़ता हूं, बिलियर्ड भी खेलता हूं, सैर-सपाटे भी किया करता हूं और प्रायः दिन निकलने से लेकर दिन छिपने तक खेल-तमाशे में लगा रहता हूं।"

एक नौजवान ने उदास और दुखी रहने वाले अपने एक मित्र से कहा—"तुम हर बात का उज्ज्वल पक्ष देखा करो।"

मित्र ने उदासी भरे हुए मन से उत्तर दिया—"मेरे जीवन में तो कोई उज्ज्वल पक्ष है ही नहीं।"

तब वह नवयुवक बोला—"यदि ऐसी ही बात है तो अन्धकार के पक्ष को ही पालिश लगाकर चमका दिया करो।"

एक और महान व्यक्ति ने कहा है—संसार को और भी अधिक श्रेष्ठ और उज्ज्वल बनाया जा सकता है। करना केवल इतना है कि लोगों को यह सिखा दिया जाए कि प्रसन्न रहना उनका कर्तव्य है और कर्तव्यपूर्ति के पश्चात कितना सुख मिलता है। स्वयं प्रसन्न रहने से दूसरों की प्रसन्नता में अपार वृद्धि होती है।

प्रसन्नता की पारसमणि को पाकर स्क्रूज की आंखों में हर्ष के आसू छलक उठे। वह बोले—"मैं अपने आपको पंख के समान हल्का अनुभव करता हू। उत्तीर्ण होने पर जिस प्रकार विद्यार्थी प्रसन्न होता है, मैं उसी प्रकार पुलकित हो जाता हूं। शराबी के समान मस्ती में सराबोर रहता हू। मैं दैवी फरिश्ते के समान अपने आपमें मग्न रहता हू। नहीं जानता कि ऐसी स्थिति में मैं क्या करूं? मैं चाहता हूं कि प्रत्येक व्यक्ति को प्रसन्नता ही प्रसन्नता उपलब्ध हो। मैं सारी सृष्टि को नववर्ष की शुभकामनाएं देता हूं।"

डेविड नाम का एक दुकानदार था। एक दिन उसने उदासी में भरकर कहा—"ये भी कोई दुकान है. यह तो एक ऐसा अंधेरा सुराख है जिसमें गरमी हो या सर्दी, कभी सूर्य का प्रकाश ही नहीं दिखाई दिया।"

तभी उसके सामने एक देवता की-सी आकृति प्रकट हुई। वह उससे बोली—"मैं तुम्हें बताती हू कि प्रकाश को कैसे पकड़ा जा सकता है। प्रकाश को पकड़ने वाला जाल तो चमकदार और पवित्र होना चाहिए। उसमें साहस, आत्मसम्मान, परिश्रम, निष्ठा और दृढ़ सकल्प का दाना पड़ा होना चाहिए। डेविड! बस तुम इतना करो और तुम्हें ये कहने का अवसर नहीं मिलेगा कि सूर्य का प्रकाश तुम तक नहीं पहुचता और तुम्हारे जीवन में खुशी नहीं भरता।"

डेविड ने इसके बाद जो सबसे पहला काम किया, वह था मकान को झाडना-बुहारना और उसने साबुन से रगड़कर मकान के सारे दरवाजों का मैल उतारा। तब सूर्य की किरणें तो क्या, किरणों का एक मेला-सा ही लग गया।

विली ब्रेक का स्वभाव बहुत विचित्र था। वह सदा हर्षोल्लास में मस्त रहना अपना धर्म समझता था। उसकी इस असीम आत्मिक प्रसन्नता से बहुत-से लोगों को कुढ़न भी होती थी। एक दिन लोगों ने उसे धमकी दी कि यदि सभी सम्मेलनों में ईश्वर का गुणगान बन्द न किया तो तुम्हें ढोल में बन्द कर दिया जाएगा। ब्रेक बोला—"तो क्या हुआ, मैं ढोल के मुंह में से ही ईश्वर के गुणगान किया करूगा।"

लार्ड हैडिंग के प्रसन्नता से चमकते हुए चेहरे को देखकर रोजर्स ने कहा था—वह खाने की मेज पर इस तरह आ बैठता है, मानो अचानक सौभाग्य ही साक्षात रूप धारण करके आ बैठा हो।

आलिवर वैल्डर ने एक स्थान पर लिखा है—बहुत वर्ष पुरानी बात है, एक पहाड़ी पर घूमते हुए, जहा पास में एक कब्रिस्तान भी था, मैंने एक कब्र देखी। उस कब्र पर सगमरमर का एक बहुत ही साधारण-सा टुकड़ा लगा था। आसपास की कब्रों पर भी बहुत सुन्दर पत्थर लगे हुए थे और बहुत सुन्दर शब्दों का प्रयोग किया गया था, परन्तु उस कब्र पर केवल चार शब्द ही लिखे थे—वह बड़ी हंसमुख थी। इस एक ही वाक्य में किसी महिला के सम्पूर्ण जीवन की मधुरता टपकती जान पड़ती थी। उस महिला के जीवन के विषय में अन्य कुछ जानने की आवश्यकता नहीं रह जाती। अवश्य ही वह

महिला बडे जीवट की रही होगी, जिसने स्वर्ग तक की अपनी यात्रा को प्रसन्नतापूर्वक जीवन की महक से भर दिया।

मिस चीयरफुल को कदापि सुन्दरी नहीं कहा जा सकता था। कोई भी अज्ञात व्यक्ति पहली दृष्टि में उसे देखकर यही कहता था, क्या सपाट चौखटा है, फिर भी उससे मिलने वाले अथवा जान-पहचान वालों का ध्यान इस बात की ओर कभी नहीं गया। जिस स्कूल में वह सुपरिंटेंडेंट थी, वहां के विद्यार्थी अथवा अध्यापकगण उसे बडी श्रद्धा से देखते थे, क्योंकि वह जहां भी विद्यमान रहती, वहा प्रसन्नता की जगमगाहट-सी भरी रहती। किसी सामूहिक चित्र में भी वह स्पष्ट तथा पृथक नजर आती। अनेक चेहरों के बीच भी आखें बरबस उस चेहरे पर जा टिकतीं। क्या आप बता सकते हैं कि ऐसा क्यों था? ये सब इसलिए था कि उसके अधरों पर सदैव ही मन्द मुस्कान दिखाई देती थी और वह जादुई मुस्कान ही सबको अपनी ओर आकृष्ट करती रहती थी।

कार्लाइल ने एक स्थान पर लिखा है—हमें ऐसा व्यक्ति बनना चाहिए कि हम चहकते हुए अपने काम में जुटे रहें और थोड़े ही समय में अधिक काम न निपटा लें वरन् अधिक कुशलता से निपटा लें। हममें अधिक देर तक कार्य में जुटे रहने की शक्ति होनी चाहिए। जो होंठ गुनगुनाते रहते हैं, उन्हें श्रम की थकान का अनुभव नहीं होता। कहते हैं—सितारे भी तो असंख्य वर्षों से अपनी कक्षा में परिक्रमा कर रहे हैं, पर गुनगुनाते रहने के कारण ही थकान अनुभव नहीं कर पाते। चकहते हुए मन में आश्चर्यजनक शक्ति होती है। उसकी सहनशक्ति का अनुमान लगाना सामान्य बात नहीं है। अपने ही प्रयत्नों से यदि स्थायी रूप से लाभ उठाने की चेष्टा करनी हो तो यह आवश्यक है कि मन में हर्ष भरा हुआ हो, चेहरे पर प्रसन्नता का प्रकाश हो और हमारे प्रयत्नों में उमंग भरी हो।

स्टर्ड ने लिखा है—दुर्बलताओं और अन्य बुराइयों से बचने के लिए मैं सदैव प्रसन्नता का सहारा लेता हू। मुझे विश्वास है कि जो व्यक्ति प्रसन्न रहकर मुस्कराता रहता है, उसकी जीवनी शक्ति में बहुत बढ़ोतरी होती है और जब वह खिलखिला उठता है तब यह वृद्धि और भी अधिक पैनी हो उठती है।

हंसमुख लोगों को चिरकाल तक भुलाया नहीं जा सकता। उदासीनता की अपेक्षा प्रसन्नता अधिक समय तक याद रहती है। जब कभी हम अपने अतीत पर दृष्टि डालते हैं तो हमारी स्मृतियां शूरवीर और सदैव प्रसन्न रहने वाले जिन्दादिल लोगों पर ज्यादा आसानी से आ टिकती हैं।

एक और व्यक्ति ने कहा है—प्रसन्न रहने के लिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति के उज्ज्वल पक्ष को ही देखा जाए। उसने कहा है—जब तक मेरे दिन सूर्य की भांति चमचमाते रहेंगे तब तक मैं प्रत्येक वस्तु के उजले पक्ष को ही देखूगा।

जमैका में एक धार्मिक सम्मेलन हुआ था। उसमें किसी आवश्यक कार्य के लिए कुछ चन्दा इकट्ठा होना था। इस सम्मेलन का अध्यक्ष एक पादरी था। उस सम्मेलन में जो

प्रस्ताव पारित हुए उनका स्वरूप इस प्रकार है-

❀ हम सदा चन्दा देंगे।

❀ ईश्वर ने हमें जैसी सम्पन्नता दी है, हम चन्दा भी उसी के अनुसार देंगे।

❀ हम प्रसन्न मन से चन्दा देंगे।

प्रस्ताव स्वीकार होने के बाद चन्दा जमा होना प्रारम्भ हो गया। प्रस्ताव के अनुसार प्रत्येक सदस्य अपने स्थान से उठता और चन्दे की रकम अध्यक्ष को दिखाकर पेटी में डाल देता। एक अत्यन्त सम्पन्न व्यक्ति बार-बार उठने का प्रयत्न करता, परन्तु हिचकिचाकर बैठ जाता। यहां तक कि उसकी हिचकिचाहट लोगों ने भांप भी ली। अन्ततः विवश होकर वह चन्दा जमा कराने उठा तो अध्यक्ष महोदय बोले—"यह पहले प्रस्ताव के अनुसार तो ठीक है, परन्तु दूसरे प्रस्ताव के अनुसार नहीं।" वह व्यक्ति क्रोध में भरकर अपने स्थान पर वापस लौट गया और चन्दा भी वापस ले गया। सम्भवत उसकी अन्तरात्मा ने भला-बुरा सोचने के लिए उसे विवश किया होगा। अन्ततः वह फिर से उठा और चन्दे की रकम दो गुना करके अध्यक्ष महोदय से बोला—"अच्छा, यह लो मेरे हिस्से का चन्दा।" अध्यक्ष महोदय भला कहा चूकने वाले थे? वह बोले—"यह तो पहले और दूसरे प्रस्ताव के अनुकूल हुआ, परन्तु तीसरे प्रस्ताव के नहीं।" उस व्यक्ति ने इस व्यग्य को भी सहन किया और फिर कुछ देर रुककर चेहरे पर हसी बिखेरते हुए चन्दे की और अधिक रकम लेकर आगे बढ़ा। तब अध्यक्ष महोदय ने प्रसन्नता प्रकट की और बोले—"हां, अब यह चन्दा सभी प्रस्तावों के अनुरूप है।"

फादर मिलर ने एक स्थान पर लिखा है—मैं एक रुग्ण महिला को देखने जाया करता था। उस महिला के कमरे की खिड़की में एक गुलाब का गमला रखा रहता था। एक दिन मैंने देखा कि पौधों पर केवल एक ही फूल था और उसका रुख प्रकाश की ओर था। जब मैंने गुलाब के उस फूल के सम्बन्ध में उस रुग्ण महिला से बात की तो उस स्त्री ने बताया कि मेरी बेटी ने कई बार पौधे का रुख अधेरी दिशा की ओर मोडा है, परन्तु फूल हर बार अपना रुख प्रकाश की ओर मोड़ लेता है। फूल अधेरे की ओर रुख करना स्वीकार ही नहीं करता। उस फूल ने मुझे बताया है कि अपना रुख कभी अधेरे की ओर न करना, सदा प्रकाश की ओर ही उन्मुख रहना। ये बातें तो हमारे स्वभाव में होनी चाहिए ताकि चिन्ता और निराशा की भावनाएं हमारे मन-मस्तिष्क में स्थान ही न बना पाए। प्रत्येक कार्य का एक उज्ज्वल पक्ष होता है, जो आलोकपूर्ण होता है। बस, हमें उस उज्ज्वल पक्ष की ही खोज करनी चाहिए, क्योंकि चिन्ताओं और निराशाओं से भय बढते हैं, स्वास्थ्य का नाश होता है और दुर्बलताएं हमें चारों ओर से घेर लेती हैं।

सेल्सबरी के एक गड़रिए से किसी ने पूछा—"कल मौसम कैसा रहेगा?" गडरिए ने कहा—"मौसम! मौसम वैसा ही रहेगा जैसा मैं चाहूंगा।" जब पूछने वाले ने उसके इस उत्तर पर आश्चर्य प्रकट किया तो गडरिया फिर बोला—"मौसम तो वैसा ही रहेगा जैसा

ईश्वर को स्वीकार है और जिस बात में ईश्वर प्रसन्न रहता है उसी में मैं भी प्रसन्न रहता हूं। इसलिए मौसम सदैव मेरे अनुकूल रहेगा।"

जीवन की प्रसन्नता प्राकृतिक तापमान पर निर्भर नहीं करती, परन्तु ऐसा तभी सम्भव होगा जब हम ऐसा निश्चय करेंगे। हमारी आत्मा का प्रकाश कभी भी भौतिक प्रकाश पर निर्भर नहीं करता, वरन् बाहरी प्रकाश से अधिक जगमग प्रकाश मनुष्य के भीतर होता है।

फ्रेंकलिन ने एक घटना का उल्लेख किया है—मेरे दफ्तर के पास ही एक मकान बन रहा था। वहां बहुत-से मजदूर और मिस्त्री काम करते थे, परन्तु उनमें से एक व्यक्ति सदैव हंसता दिखाई देता था। कितनी भी कड़कती सर्दी हो, बादल हों, सूर्य की किरणों का नामोनिशान भी न हो, परन्तु उसके मुखड़े पर हमेशा ही प्रसन्नता नाचती रहती थी। मैं रह न पाया। एक दिन प्रातःकाल ही मैं उससे मिला और उसके प्रसन्न रहने का रहस्य पूछा। उत्तर में उसने कहा—इसमें रहस्य की कोई बात ही नहीं। मेरी पत्नी बहुत ही अच्छे स्वभाव वाली है। प्रातःकाल मैं जब काम पर आने लगता हूं तो वह प्रोत्साहन देने की बात करती है और जब मैं शाम को घर लौटता हूं तो वह मुस्कराहटों के साथ मुझे अपने प्यार में लपेट लेती है। उसके बाद चाय तो मिलती ही है, चूंकि मेरी पत्नी मेरा स्वागत करने और मुझे प्रसन्न रखने के लिए सदैव तत्पर रहती है। मुझे कभी भी क्रोध करने का अवसर ही नहीं मिलता।

एक बार एक दुबला-पतला-सा व्यक्ति भाषण करने के बाद बैठा ही था कि एक हंसोड़ व्यक्ति ने व्यंग्य किया—जो सज्जन अभी-अभी भाषण करके बैठे हैं, उनका मकान तानों और उलाहनों वाली गली में है। मैं भी कुछ समय तक उस गली में रह चुका हूं। जब तक मैं वहां रहा, मेरा स्वास्थ्य भी अच्छा नहीं रहा। गंदी हवा, अस्वास्थ्यकर मकान और अशुद्ध पानी वाली उस गली में कभी पक्षी भी नहीं चहचहाते। जब तक मैं वहां रहा, सदैव उदास और चिन्ताग्रस्त रहा। इसलिए मैं वहां से निकल भागा और सुख-सन्देश देने वाली गली में आकर डेरा लगाया। तभी से मेरे और मेरे परिवार वालों का स्वास्थ्य ठीक चल रहा है। वहां की हवा साफ-शुद्ध है, मकान का वातावरण स्वास्थ्यकर है, दिन भर वहां सूर्य का प्रकाश भी छाया रहता है और पक्षी भी चहकते रहते हैं। मुझे जीवन का आनन्द भी मिलने लगा है। मैं अपने इन भाई को परामर्श दूंगा कि वह भी तानों-उलाहनों वाली उस गली को छोड़कर सन्तोष और आनन्द वाली गली में आ जाएं। वहां बहुत-से मकान भी खाली पड़े हैं।

अमरीका के राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन की मेज की दराज में हास्यरस की एक पुस्तक सदा ही पड़ी रहती थी। जब भी कभी वह थकावट अनुभव करते अथवा चिन्तित हो जाते तो वह उस पुस्तक का एक अध्याय पढ़ लिया करते थे, जिससे उन्हें बड़ी शान्ति प्राप्त होती थी।

सदा प्रसन्न रहने वाले व्यक्ति ही पराजय को विजय में बदल सकते हैं, क्योंकि वह घटना

के उज्ज्वल पक्ष को ही देखा करते हैं, ऐसे व्यक्ति अवश्य ही लोकप्रिय बनते हैं। वे केवल स्वय ही प्रसन्न नहीं रहते, वरन् दूसरों की प्रसन्नता का कारण भी सिद्ध होते हैं।

प्रसन्नचित्त रहने में अनेक सुख हैं। प्रसन्नचित्त व्यक्ति ही अपने मन और आत्मा के द्वार खुले रखता है, जिससे प्रसन्नता की चमक-दमक आत्मा में प्रविष्ट होती है। इससे व्यक्ति स्वय ही प्रफुल्लित नहीं होता वरन् उसमें दूसरों की भलाई करने की शक्ति भी आ जाती है तथा कार्य करने की शक्ति भी विकसित होती है। धन्य हैं ऐसे लोग जो स्वय प्रसन्न रहकर दूसरों को भी प्रसन्न रख सकते हैं। जिस प्रकार किसी बीमारी में औषधि देने से लाभ होता है, उसी प्रकार प्रसन्नचित्त और हसोड़ व्यक्ति निराशा को आशा तथा दुख और विषाद को मुस्कराहटों में बदल देता है।

यदि हम हर समय मुसीबतों के विषय में ही सोचते रहेंगे तो निश्चय ही दुर्बल और कमजोर भावनाए हमारी ओर बढने लगेंगी और उनसे हमारा अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा।

बडी पुरानी बात है कि बोस्टन की गलियों में एक अन्धा और निर्धन व्यक्ति फेरी लगाकर सुई-धागा और बटन बेचा करता था। वहा के एक डॉक्टर को उस पर बड़ा तरस आया और एक दिन उसने साहस बटोरकर उससे उसका हाल-चाल पूछा, पर उसका उत्तर सुनकर डॉक्टर को बहुत आश्चर्य हुआ। वह व्यक्ति अपनी उस स्थिति से पूर्णतया सन्तुष्ट था। उस अन्धे व्यक्ति ने बताया—मेरी पत्नी बहुत ही वफादार है और मेरी आवश्यकताएं पूरी करने के लिए मेरा काम भी ठीक से चल रहा है। यदि मैं अपने भाग्य को कोसने लगू तो केवल अपने को तुच्छ समझने के अतिरिक्त और क्या प्राप्त होगा?

मिस्टर कुक 51 वर्ष की आयु तक लाखों रुपये की सम्पत्ति का स्वामी रहा, परन्तु 52वें वर्ष में प्रवेश करते ही वह कौड़ी-कौड़ी का मुह देखने के लिए तरस गया, परन्तु फिर भी उसने हिम्मत नहीं हारी। नए सिरे से परिश्रम किया और 3000 के लगभग लोगों को कौड़ी-कौड़ी ऋण अदा कर दिया। अपने सभी वचन पूरे किए और एक बार फिर अपार सम्पत्ति का स्वामी बन बैठा। बहुत दिन बाद जब एक परिचित व्यक्ति ने मिस्टर कुक से पूछा कि दुबारा उन्होंने दौलत कैसे कमाई तो उत्तर मिला—यह तो बडी सीधी-सी बात है। अपने माता-पिता से पैतृक सम्पत्ति के रूप में जो स्वभाव मुझे प्राप्त हुआ था, मैंने उसमें कोई परिवर्तन नहीं होने दिया। जब से मैंने होश संभाला है, मेरा स्वभाव सदा आशापूर्ण रहा है। मैंने कभी किसी कष्ट या क्लेश को अपने समीप नहीं आने दिया। मुझे सदैव ही यह विश्वास रहा कि हमारे देश में धन-धान्य की कोई कमी नहीं है, भण्डार भरे पड़े हैं और इसे प्राप्त करने के लिए केवल इतना ही करना पर्याप्त है कि मनुष्य परिश्रम करे और सदैव उज्ज्वल पक्ष पर ही अपना ध्यान केन्द्रित रखे। मेरी सफलता का रहस्य भी यही है।

आप जहां भी काम करते हैं, दुकान हो या दफ्तर, वहां का काम आपको वहीं छोड देना चाहिए। इसे आपको नियम के रूप में अपनाना चाहिए। दफ्तर का काम घर पर

ले जाकर अपने परिवार के लोगों के विश्राम के क्षणों में बाधा नहीं डालनी चाहिए। यदि आप इस नियम को भंग कर देंगे तो जीवन की ताजगी समाप्त हो जाएगी।

फिलिप आर्थर जैसे व्यक्ति अपने को चिन्ताओं से उसी तरह मुक्त रखते हैं जैसे बत्तख पानी में रहते हुए भी अपने को पानी से पृथक रखती है। जब भी आप दुकान या दफ्तर से विदा हों तो काम को वहीं ताले में बन्द करके आएं। जो व्यक्ति ऐसा करते हे वे सदा प्रफुल्लित रहते हैं। जो व्यक्ति हर समय, हर घड़ी और हर जगह काम के बोझ को अपने कन्धे पर उठाए फिरते है, उनके मित्रों और मिलने वालों को उनसे घृणा होने लगती है। यदि आप कष्ट का ही निरन्तर चिन्तन करेंगे तो उसकी छाप आपके चेहरे पर प्रकट हो जाएगी। दफ्तर का काम घर में करने से आपमें साहसहीनता और तुच्छता के विचार पैदा होते हैं। इससे काम हल्का नहीं होगा वरन और उलझनें पैदा हो जाएगी। स्वास्थ्य का तो नाश होगा ही, मित्र और अन्य मिलने वाले व्यक्ति भी आपकी उपेक्षा करने लगेंगे।

रस्किन का कहना है—ईश्वर हमारे द्वारा जो काम कराना चाहता है, उसने वह काम करने की शक्ति और उस प्रकार की सूझबूझ में किसी प्रकार की कमी नहीं रखी।

वाल्टर स्कॉट स्वय बहुत ही हसमुख व्यक्ति था। उसने लिखा है—मुझे ईमानदार और प्रसन्नचित्त व्यक्ति ही पसन्द हैं। वह स्वयं सबके साथ हंसी-खुशी से पेश आता था और दयालुता से व्यवहार करता था। परिणामस्वरूप दूसरे व्यक्ति भी उसे चाहते और प्यार करते थे।

हैनरी के कॉलेज के एक साथी ने एक बार कहा—हैनरी! क्या तुम्हें याद है कि हमारी कक्षा मे क्रासवैल नाम का एक विद्यार्थी हुआ करता था। वह सदा ही गम्भीर और उदास-सा रहा करता था और तुम लोग प्राय मस्ती में आकर उसे सताया भी करते थे। हैनरी ने उत्तर दिया—हां, था तो वह मुर्दादिल और वह मर भी गया। मैं सदा हसता-मजाक करता रहता था, इसलिए अब भी जिन्दा हू। मेरे और उसके सिद्धान्तों में यही अन्तर था।

धर्म का अर्थ उदास रहना नहीं वरन् प्रसन्नता है। ईसा ने मुर्दादिल बने रहकर चेहरा लटकाए रहने की शिक्षा नहीं दी वरन् सदैव प्रसन्न रहने पर बल दिया। ईसा के सिद्धान्त सूर्य का-सा प्रकाश भरने वाले हैं। उन्होंने फूलों की तरह मुस्कराने और महकने की शिक्षा दी है। वे सदा मस्ती से उडने वाले परिन्दों, जन्तुओं और चहचहाते बच्चों की बातें किया करते थे।

हसने से एक और महान उद्देश्य की भी पूर्ति होती है। वह है हमारे भीतरी अंगों का तापमान। व्यायाम से अंगों को भी प्रसन्नता प्राप्त होती है। हंसी का जन्म-स्थल फेफड़े हैं, जिससे कि यकृत, आमाशय तथा अन्य अगों में एक विशिष्ट प्रकार की थरथराहट पैदा होती है। दिल की धड़कन तेज होती है और शरीर में रक्त का संचार तीव्र हो जाता है। इस प्रकार हसी द्वारा सम्पूर्ण प्रक्रिया में एक विशिष्ट चमक और गति उत्पन्न होती है। ठहाका

लगाकर हसने से आखों में चमक जागती है, वक्षस्थल फैलता है और हमारे स्नायुओं मे सन्तुलन पैदा होता है। शरीर में इस प्रकार की क्रियाएं होना ही स्वास्थ्य कहलाता है। एक हसमुख डॉक्टर रोगियों के लिए अपनी डिस्पेंसरी की दवाइयों से अधिक लाभकर है।

एक और महान व्यक्ति भी उस दिन को सर्वथा निरर्थक मानता था, जिस दिन वह हंसा न हो। इग्लैंड के सम्राट एडवर्ड द्वितीय के आलेखों में कुछ ऐसे कागजात हैं जिनमें सम्राट को हसाने के लिए पुरस्कार की बात कही गई है। अब्राहम लिंकन के जीवन में भी प्रसन्नता का वैसा ही महत्व था जैसा अन्य सामान्य व्यक्तियो के लिए। वह प्राय कहा करता था--यदि मेरी खिलखिलाकर हसने की आदत न होती तो मैं मर ही जाता। इसी प्रकार इमर्सन की हसी भी उसके परिचित व्यक्तियों के लिए एक सौभाग्य के समान थी।

हंसी बहुत ही सस्ती औषधि है, अत जब भी सम्भव हो सके हसो। डैनिस सबको यह मन्त्र लिखकर दिया करता था--दोस्तो, शैतान मर चुका है। साहस से काम लो। वह कहा करता था--लोग इस जादू को समझते नहीं हैं, परन्तु उसका प्रभाव अवश्य होता है। एक बार तो लोग जाग उठें। मैं जहां जाता हू, वहा यही सन्देश पहुचाता हू, ताकि जनता के मन में साहस का संचार हो। एक बार उसे रोती हुई एक लड़की मिली, चूंकि उसका घड़ा टूट गया था। डैनिस ने उससे कहा--"बिटिया, हौसला रखो, समझ लो कि शैतान मर गया।" यह वाक्य सुनते ही बालिका के मन से घड़ा टूटने का विषाद समाप्त हो गया और वह चहकती-कूदती एक नया सन्देश सुनाने के लिए घर की ओर दौड पड़ी।

सान फ्रांसिस्को के एक समाचार पत्र में एक रोगी महिला की दास्तान छपी। वह अनेक रोगों की शिकार थी, परन्तु अब उसने उन रोगों से मुक्ति पाने का सकल्प कर लिया था। उसने सबसे पहला एक नियम बनाया कि कैसा भी अवसर क्यों न हो, वह दिन में तीन बार खुलकर अट्टहास अवश्य करेगी। इस प्रकार उसने छोटी-छोटी बातों पर हसने की आदत सी डाल ली। वह अपने कमरे को अन्दर से बन्द कर लेती और अकेली ही हस-हसकर लोटपोट हुआ करती।

इसका प्रभाव यह हुआ कि वह महिला पूर्णतया स्वस्थ हो गई और उसे सब कुछ अच्छा प्रतीत होने लगा। उसका स्वभाव भी बदल गया तथा उसके स्वभाव का उसके पति और बच्चों पर भी अच्छा प्रभाव हुआ। वे सब-के-सब स्वस्थ और प्रसन्न रहने लगे।

पश्चिमी न्यूयार्क में एक व्यक्ति हंसोड़ डॉक्टर के नाम से प्रसिद्ध था। वह सदा मुस्कराता रहता था। प्रसन्नता उसके चेहरे पर नाचती ही रहती थी। उसके प्रसन्न रहने का रोगियों पर यह प्रभाव पड़ता था कि अधिकाश रोगी उसके परामर्श से ही स्वस्थ हो जाते थे। वह दवाइयों का प्रयोग बहुत ही कम करता था, परन्तु जिन्दादिली और आशा से परिपूर्ण परामर्श से रोगी अधिक स्वास्थ्य-लाभ करते थे।

एक नगर में एक रुग्ण व्यक्ति की स्थिति बहुत खराब हो गई तथा ऐसा प्रतीत होने लगा कि वह अवश्य मर जाएगा। उसके सब सम्बन्धी इकट्ठे हो गए, अडोस-पडोस के

लोग भी इकट्ठे होकर यह प्रतीक्षा करने लगे कि कब उस व्यक्ति का दम टूटता है। इतने में ही एक व्यक्ति उससे मिलने आया। उसने आते ही जोर का अट्टहास किया और मुस्कराते हुए उस रोगी से कहा—"तुम तो बिल्कुल स्वस्थ हो और यदि कोई थोड़ा-बहुत कष्ट है भी तो तुम शीघ्र ही स्वस्थ हो जाओगे।" उस व्यक्ति ने यह बात कुछ ऐसे ढग से कही कि मजबूरन रोगी के मुह से भी हसी फूट पडी। हसने के इस प्रयत्न में उसके शरीर की नसों-नाडियों में ऐसा परिवर्तन हुआ कि वह सचमुच ही कुछ दिनों में पूर्ण स्वस्थ हो गया।

इमर्सन ने लिखा है---अपने घर की दीवारों पर कभी भी कोई उदास और चिन्तापूर्ण चित्र न लटकाओ और न ही इस प्रकार की कोई भी बात करो जिनका सम्बन्ध मुसीबतों से हो।

एक और बहुत सुप्रसिद्ध व्यक्ति टालमेज ने लिखा है—अनेक लोगों को इस बात का भ्रम है कि जब वह किसी सकटग्रस्त व्यक्ति से सहानुभूति प्रदर्शित करते हैं और दुख प्रकट करते हैं तो उस दुखी व्यक्ति को सन्तोष होता होगा, परन्तु ऐसा नहीं होता। इसके विपरीत उसकी आत्मा में निराशा का सचार होता है। किसी भग्न-हृदय की मरहम-पट्टी के लिए गरम लोहे की खपची नहीं होनी चाहिए अर्थात उस निराश और सकटग्रस्त व्यक्ति को तो आशा और उत्साहपूर्ण बनाने का प्रयत्न करना चाहिए।

क्रामवैल के बारे में कहा जाता है कि जब सब ओर निराशा व्याप्त होती और आशा की एक भी किरण दिखाई नहीं पड़ती थी, तब वह अकेला ही प्रकाशस्तम्भ के समान दिखाई देता था।

जो लोग सदैव प्रसन्नता से परिपूर्ण एव साहसयुक्त रहते हैं उनकी विजय में कोई सन्देह नहीं, क्योकि अकेली प्रसन्नता का कभी जन्म नहीं होता, उसके साथ विजय का भी गठजोड़ होता है।

एक बच्चे ने अपने बीमार भाई की चर्चा करते हुए कहा—"मैं जब अपने भाई को प्रसन्न करने का प्रयत्न करता हू तो वह हस पड़ता है। इससे मुझे भी प्रसन्नता होती है और मैं भी हंस पडता हू।"

प्रसन्नता एक पच्चीकारी के समान है, जिसमें छोटे-छोटे अनेक रत्न जडे रहते हैं।

दुखी होने की आवश्यकता नहीं है। चेहरा बिगाड़ने की भी जरूरत नही है। हम प्रकाश तक पहुच ही जाएगे। बशर्ते हमारी दृष्टि उच्च लक्ष्य की ओर हो और हम उच्च कार्य करें। धरती में जो बीज पड़ा है उसके विषय में यह सन्देह नहीं किया जा सकता कि वह व्यर्थ है। समय आने पर उसमें कोंपल फूटेंगे और फल-फूल भी अवश्य विकसित होंगे। बीज कभी अपने से प्रश्न नहीं करता कि मिट्टी के ढेर में से वह कैसे बाहर निकलेगा। उसे यह शिकायत ही नहीं होती कि उसके मार्ग में कंकड़-पत्थर हैं, परन्तु वह धीरे-धीरे, जोर लगाकर, अपना नन्हा-सा कोमल सिर ढेलों और पत्थरों में से निकालता हुआ प्रकाश में आता है तथा पत्ते और फल-फूल उत्पन्न करता है। जिन साधनों और

हम अन्धकार से निकलकर महानता की ओर बढ़ते हैं, अज्ञान को दूर करके श्रेष्ठ बनते हैं, वह साधन हमारे चारों ओर इस प्रकार से फैले हुए हैं, जिस की किरणें। रात्रि में ओस, बरसात और बीज के इर्द-गिर्द फैले हुए वह तत्त्व जिसके द्वारा अंकुर फूटकर बाहर निकलता है, उन्हीं शक्तियों से पत्तियां और सुगन्ध फैलाती हैं।
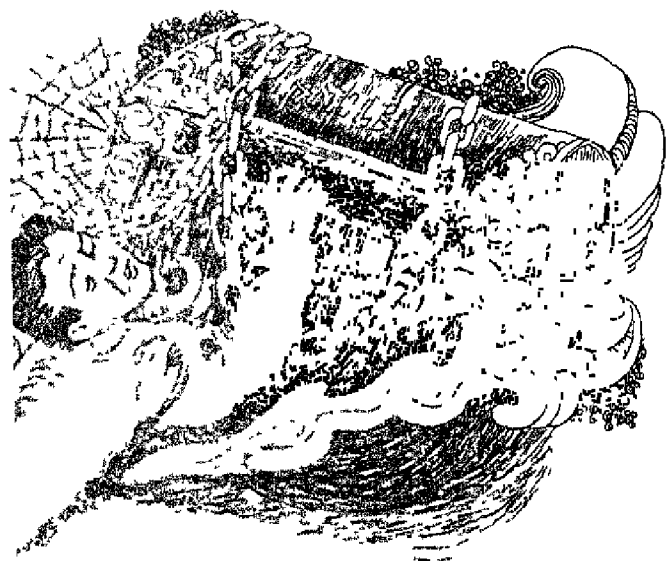
मुस्कराहटों से भरा बॉक्स हर कीमत पर खोलना चाहिए।

यह पता लग जाए कि एक बॉक्स में मुस्कराहटें बन्द हैं तो फिर चाहे वह मजबूत क्यों न हो और कितनी ही जंजीरों से क्यों न जकड़ा हो, मैं उसे खोलकर रहूंगा और फिर उन बन्द मुस्कराहटों को विश्व भर में बिखेर दूंगा ता के लिए बच्चों के मुखड़ों पर अंकित हो जाए। केवल एक उत्साहपूर्ण मुस्कराहट अथवा उत्साहित करने वाला एक शब्द ही भारी-भरकम बोझ को कर देते हैं, जिसे कोई शक्ति कभी हिला भी नहीं सकती।

सन्तुष्ट कैसे रहें

मनुष्य अपने वर्तमान से कभी सन्तुष्ट नहीं होता और सदैव ही किसी बड़े अवसर अथवा किसी अद्‌भुत चमत्कार के होने की आशा लगाए रखता है। इस प्रकार भविष्य के झूठे सपनों में खोया रहकर वह वर्तमान के सुख, सुन्दरता और आनन्द को भी नहीं देख पाता और वे उसकी आंखों से ओझल ही रहते हैं।

एक पहाड़ी पर एक निर्धन युवक टूटी-फूटी-सी झोंपड़ी में रहा करता था, पर झोंपडी में रहते हुए भी वह ऊचे-ऊचे स्वप्न देखा करता था। वह प्रतिदिन उदय होते हुए सूर्य को देखकर सुनहरी कल्पनाए किया करता था। सायकाल जब सूर्य डूबता, तब भी वह सूर्य से रगी हुई पश्चिम दिशा को सोने के महल के रूप में देखा करता था।

एक दिन अपनी निर्धनता और बड़ी-बड़ी कल्पनाओं के विचार ने उसे दुखी कर दिया और वह उस कुटिया को छोड़कर स्वर्णमहल में रहने की लालसा को जगा बैठा। स्वर्णमहल में रहने की उसकी लालसा इतनी प्रबल हो उठी कि मानो उसे स्वर्णमहल नजदीक आने के लिए बुला रहा हो। उस रात वह सो न सका और प्रातःकाल होते ही वह उस ओर चल पड़ा और अनेक कष्ट सहन करते हुए बाधाओं को पार कर जब उसने घाटी पार कर ली तो सूर्य छिपने ही वाला था। अपनी कुटिया में बैठे हुए उसे जो स्वर्णमहल दिखाई दिया करता था, वह वहा कहीं भी न था। उसके सम्मुख एक टूटी-फूटी झोंपड़ी ही थी, जिसकी खिडकिया और दीवारें जीर्ण-शीर्ण थे। वह पूरी तरह से थक चुका था तथा भूख और प्यास के मारे उसका बुरा हाल था। वह चीख-चीखकर रोने लगा। थोड़ी देर के बाद उसे चमकती-सी कोई चीज दिखाई दी। कुछ देर तक ध्यान से देखने के बाद वह फिर चीख उठा—अरे! यह तो मेरी अपनी ही झोंपड़ी है।

इस युवक की तरह ही प्रत्येक मनुष्य किसी-न-किसी प्रकार की मृगतृष्णा में फंसा रहता है। उसके मन में किसी-न-किसी दिन अपने स्वर्णमहल तक पहुंचने की आशा बनी रहती है। वह सदा यही समझता रहता है कि एक दिन ऐसा चमत्कार होगा कि उसके सोने के महल की आशा पूर्ण हो जाएगी, परन्तु दूर से चमचमाने वाले इस सोने के महल तक कोई नहीं पहुंच सका।

[सं]सार में ऐसे असख्य व्यक्ति हैं जो अपने जीवन से निराश हो चुके हैं, क्योंकि उनके [सुनह]री सपने सम्पूर्ण नहीं हो पाए। वास्तव में होता यह है कि जब हम इस प्रकार की दुराशाओं [को ब]ढाते जाते हैं तो वह सुनहरे सपने भी उतने ही दूर होते जाते हैं। सूर्य की किरणों-सी [चम]कती हुई बालू को ही पानी समझकर हिरण उस ओर भागता है, परन्तु वह जितना अधिक [उस] ओर बढता है पानी और अधिक दूर दिखाई देता है। इसी का नाम मृगतृष्णा है।

सन्तुष्ट वही हो सकता है जो मृगतृष्णा को त्याग दे।

व्यक्ति अपने इच्छित पदार्थों की प्राप्ति के लिए निरन्तर कठिन परिश्रम करता रहता [है प]रन्तु यह एक आश्चर्यजनक तथ्य है कि कल तक हम जिस वस्तु के लिए कठोर [परिश्र]म करते रहते थे, उसकी प्राप्ति पर भी हमें प्रसन्नता नहीं होती। होता यह है कि [उस] वस्तु की ओर हमारी रुचि कम हो जाती है और हम किसी अन्य पदार्थ की लालसा [कर]ने लगते हैं। सौभाग्य से जब हम उसको भी प्राप्त कर लेते हैं तब हम अपने आपको [पहले] से भी असन्तुष्ट पाते हैं। इस प्रकार हमारी इच्छाएं कभी तृप्त नहीं हो पातीं। मनुष्य [ने क]भी यह नहीं सोचा कि प्रसन्नता उसकी अपनी परछाई के समान है। जब वह उसके [पीछे] भागता है तो वह आगे-आगे दौड़ती दिखाई देती है और जब वह उससे मुह मोड [लेता] है तो वह उसके पीछे दौड़ने लगती है। कामनाओं की पूर्ति तो कभी नहीं होती और [न] ही उनकी पूर्ति से सुख प्राप्त होता है। सुख की प्राप्ति तो सन्तोष से होती है।

[इ]सी तथ्य को ने अपनी एक कहानी में चित्रित किया है एक भूमिहीन

किसान किसी जमींदार के खेत में नौकरी करता था, परन्तु वह उसमें सन्तुष्ट था और सुख का अनुभव करता था। अचानक किसी कारणवश उसके स्वामी को वह भूमि बेचनी पडी। उस किसान ने इधर-उधर से रुपया ऋण पर लेकर वह भूमि खरीद ली। यहीं से उसकी चिन्ताओं का क्रम आरम्भ हो गया और कठिनाइया बढती चली गईं। दिन-रात उसे यही चिन्ता सताने लगी कि भूमि का विस्तार कैसे हो। वह इन विचारों में खोया रहने लगा कि धन अधिक हो तो और अधिक सुख मिल सकता है। अधिक सुख की प्राप्ति के लिए उसने अनेकानेक झंझट खड़े कर लिए और अन्त में अपनी इच्छापूर्ति की हाय-हाय उसे ही ले बैठी और उसका जीवन समाप्त हो गया।

जिन भौतिक पदार्थों को हम सुख का साधन समझते हैं, प्रसन्नता उनमें नहीं होती। हो सकता है पल भर के लिए हमें सुख मिल जाए, परन्तु आत्मिक सन्तोष और आनन्द उनसे कभी नहीं मिल सकता। जिस प्रकार प्यास लगने पर लेमन, सोडा, चाय या कॉफी आदि पीने पर भी प्यास नहीं बुझती, प्यास शीतल जल से ही शान्त होती है, उसी प्रकार प्रसन्नता का सम्बन्ध भी आत्मा से है, सासारिक पदार्थों से उसका कोई भी सम्बन्ध नहीं। भौतिक पदार्थों की कमी या अधिकता के कारण किसी को सुख प्राप्त नहीं हो सकता। पहनने, खाने और भोग-विलास की वस्तुओं से सुख की प्राप्ति नहीं हो सकती। सुख की प्राप्ति तो जीवन को आदर्शों के अनुरूप चलाने से ही होती है। एक-दूसरे से ईर्ष्या-द्वेष, छल-कपट और लालच आदि से तो सुख कोसों दूर भाग जाता है।

हैनरी का कहना कि ससार के पचास प्रतिशत से अधिक लोग शान्ति की खोज का जो मार्ग अपनाते हैं वह गलत होता है। वे दूसरों से प्राप्त होने वाले सुख को ही सुख मान लेते हैं, परन्तु वास्तविक सुख परोपकार से प्राप्त होता है, हर समय और अधिक प्राप्ति की हाय-हाय से नहीं।

शहद की मक्खियां तिल-तिल कर शहद इकट्ठा करती हैं। उन्हें कहीं से शहद का भण्डार नहीं मिल जाता। उनके छत्ते में जो शहद भरा होता है वह उनके अपने परिश्रम और उद्यम का परिणाम होता है। यही बात मनुष्य के लिए व उसकी प्रसन्नता के लिए भी लागू होती है। यदि आप अपने मन को थोड़ा-थोडा करके सन्तुष्ट करते रहें तो एक समय आप यह देखकर आश्चर्यचकित रह जाएंगे कि आपके पास तो सुख का विशाल भण्डार जमा है। सुख अथवा आनन्द पर किसी एक व्यक्ति का अधिकार नहीं, वह किसी की बपौती नहीं है। मनुष्य जमीन-जायदाद, रुपया-पैसा आदि वस्तुओं से तो दूसरों को वंचित कर सकता है, परन्तु आनन्द और सम्पन्नता को अपने घेरे में नहीं बांध सकता। यह तो जीवन की ऐसी अमूल्य निधि है, जिसे जो चाहे पा सकता है।

उद्यान की शुद्ध वायु से व्यक्ति नीरोग होता है, उसे वह ताजगी और उल्लास प्राप्त होता है जिसे प्राप्त करने के लिए धन की आवश्यकता नहीं होती, परन्तु जो व्यक्ति धन की तृष्णा में परेशान होता है वह धन से आनन्द प्राप्त नहीं कर सकता। यदि मनुष्य

आखें खोलकर देखे तो उसे अनुभव होगा कि अनेक प्राकृतिक सौन्दर्य प्रसन्नता के अटूट भण्डार हैं जिन पर मनुष्य का एक भी पैसा व्यय नहीं होता, परन्तु मनुष्य की प्रवृत्ति यह है कि वह अधिक मूल्यवान वस्तुए खरीदकर प्रसन्नता और आनन्द-प्राप्ति की कोशिश करता है, जबकि यह उसका कोरा भ्रम है, वास्तविकता नहीं।

वानमेकर का कहना है—जब भी सूर्य उदय होता है तो मेरी आत्मा का सूर्य भी आलोकित हो उठता है और उसके उदय होने पर जो विचित्र आनन्द एवं उल्लास प्राप्त होता है, क्या उसके लिए भी कुछ व्यय करना पड़ता है अथवा मूल्य देना पड़ता है? वह तो सबके लिए सुलभ है।

समय एक अमूल्य वस्तु है। संसार के किसी भी निर्धन-से-निर्धन व्यक्ति के पास जितना समय है उतना ही समय धनाढ्य-से-धनाढ्य अथवा किसी राजा-महाराजा के पास भी है। यदि कोई व्यक्ति अपनी सारी सम्पत्ति देकर भी अपने जीवन के लिए कुछ और वर्ष खरीदना चाहे तो यह असम्भव है। एक वर्ष तो क्या, एक क्षण भी अधिक नहीं खरीदा जा सकता। इस सम्बन्ध में क्रिए गए सभी प्रयत्न निष्फल हो जाएगे। संसार में मित्रता, सहानुभूति और प्रेम ऐसी चीजें हैं, जिनसे प्रसन्नता प्राप्त होती है, परन्तु धन से नहीं खरीदी जा सकती।

अब्राहम लिंकन का यह कहना ठीक ही है कि मनुष्य अपने जीवन में जितनी प्रसन्नता प्राप्त करने का इरादा रखता है, उतनी ही प्रसन्नता उसे प्राप्त होती है। हम प्रसन्नता की खोज बाह्य-सांसारिक वस्तुओं में करते हैं, परन्तु वास्तविक प्रसन्नता तो हमारे अन्तःकरण की स्थिति विशेष का ही नाम है। यदि हम किसी वस्तु को सुन्दर मान लेते हैं अथवा यह मानते हैं कि उससे हमें आनन्द प्राप्त होता है तो वह निश्चय ही हमें सुन्दर और आनन्दपूर्ण दिखाई देने लगती है। यदि हम किसी वस्तु को असुन्दर और दुखदायी मान लेते हैं तो वह हमारे जीवन में कुरूप और कष्टदायक प्रतीत होने लगती है। हमें अपने आस-पास का वातावरण अपनी मनोदशा के अनुकूल ही दिखाई देता है। जब हम प्रसन्न होते हैं तो हमें मौसम भी अच्छा लगता है। प्रतिध्वनि हमारी अपनी ही आवाज की होती है, दर्पण में हम अपना ही मुंह देखते हैं। वह उसी प्रकार का दिखाई देगा जैसा वह होगा। इसी प्रकार संसार भी एक दर्पण है, उसमें हमें अपना ही प्रतिबिम्ब दिखाई देता है।

प्रसन्नता और उल्लास से पूर्ण जीवन पर प्रत्येक मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है, परन्तु यह प्रसन्नता और उल्लास बाहर से प्राप्त होने वाली वस्तु नहीं और न ही यह मृगतृष्णा के समान है। यह तो हमारे अन्तःकरण की सम्पत्ति है, उसकी एक अमूल्य निधि है, जिसे हम जब चाहें पा सकते हैं। यह सोचना तो महामूर्खता है कि स्वर्ग में जाने के बाद हमें सुख और आनन्द मिलेगा। स्वर्ग और नरक इसी संसार में हैं और उनकी रचना मनुष्य स्वय करता है।
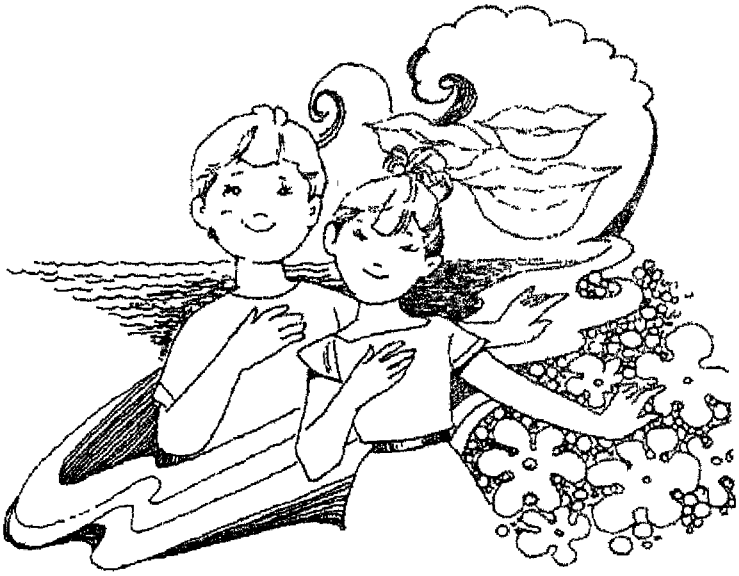
आप जितनी प्रसन्नता प्राप्त करने का इरादा रखते हैं उतनी ही आपको प्राप्त होती है।

पाश्चात्य देशों के प्राचीन विचारक प्रसन्नता को जीवन के लिए आवश्यक नहीं मानते थे। उनका विश्वास गम्भीरता में था। खेल-कूद से प्राप्त होने वाली प्रसन्नता को भी वे त्याज्य मानते थे। वह मनुष्य में खेल-कूद की प्रवृत्ति को स्वाभाविक स्वीकार नहीं करते थे। उनका यह विचार था कि मानव को सदाचारी बनाने के लिए मनोरजन और खेल-कूद आदि पर भी प्रतिबन्ध लगाना चाहिए। धार्मिक गुरुओं द्वारा फैलाए गए इस मिथ्या भ्रम द्वारा उनका जीवन बहुत अस्वाभाविक बन गया था। इस प्रकार कई शताब्दियों तक पोप और पुजारियों ने अन्धविश्वासी लोगों को उत्साहहीन और आनन्दरहित बनाए रखा। उनका विचार था कि शोकपूर्ण और गम्भीर मुखमुद्रा ही पवित्रता का प्रतीक है। इस प्रकार उन लोगों ने मानवता का न जाने कितना अहित किया।

अंधेरी, सीलन भरी कोठरियों में बैठकर स्वाभाविक प्रवृत्तियों को कुचलते हुए उन लोगों ने धार्मिक सिद्धान्तों की रचना की। कृत्रिम जीवन व्यतीत करते हुए इन निकम्मे वीतरागियों ने मानव का कल्याण करने की बजाय उसका जीवन नरक बना दिया।

युग बदलने पर दर्शन और मनोविज्ञान ने मनुष्य के सामने एक नवीन दृष्टिकोण पैदा किया और इस नए दृष्टिकोण में आनन्द को मनुष्य का स्वाभाविक धर्म माना गया तथा भविष्य में सुख-प्राप्ति के सपनों को त्यागकर वर्तमान जीवन को प्रसन्न और सुखी बनाने पर जोर दिया गया। जीवन से अलग स्वर्ग की कल्पना को त्याग दिया गया। आधुनिक विचारकों का मत है कि मनुष्य स्वाभाविक रूप से ही प्रसन्न रहना चाहता है। नए

धर्म चिन्तन में चिन्ता और अन्यविश्वास को दूर करके प्रसन्नता में आस्था रखने पर बल दिया गया। नवीन दर्शन आत्मा को परमात्मा के निकट लाकर मानव जीवन को सम्पूर्ण बनाने का प्रयत्न करता है।

न्यूयार्क में एक नाटक का मंचन हुआ। जनता को वह नाटक बहुत पसन्द आया। उस नाटक की नायिका का कहना था--प्रभु बारम्बार हमें प्रसन्न रहने का सन्देश देता है तथा हमें उसकी आज्ञा का उल्लघन नहीं करना चाहिए।

मनुष्य को अधिक-से-अधिक प्रसन्न रहने का यत्न करना चाहिए। मनुष्य ईश्वर-पुत्र है। उसे अपने मन में उदासीनता नहीं लानी चाहिए। जो व्यक्ति प्रसन्न रहता है, ईश्वर भी उस पर प्रसन्न होता है और उसे अपनी शक्तिया प्रदान करता है। जिस व्यक्ति का सम्बन्ध प्रभु की शक्तियों से जुड़ जाता है उसकी प्रसन्नता को कोई नष्ट नहीं कर सकता। धर्मग्रन्थों में भी मनुष्य को अधिक-से-अधिक प्रसन्न रहने के लिए कहा गया है। वस्तुत' प्रसन्न रहने वाला व्यक्ति ईश्वर की इच्छा को पूर्ण करता है। किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व की सफलता इसी में है कि संघर्ष, विघ्न-बाधाए और असफलताएं उसकी प्रसन्नता को नष्ट न कर दें। कठिनाइयों और असफलताओं द्वारा मनुष्य में अधिक उत्साह तथा कर्मठता आनी चाहिए। तभी जीवन सफल हो सकता है।

एक बूढ़ी स्त्री का स्वभाव था कि वह संकटों में भी सदा प्रसन्न रह करती थी। एक बार किसी व्यक्ति ने उससे इस संबंध में प्रश्न किया। इस पर उसने उत्तर दिया--मेरे पास प्रसन्नता की एक पुस्तक है। बचपन में ही मैंने निश्चय किया था कि प्रसन्नता देने वाले अपने सभी अनुभवों को, रात को सोते समय उस पुस्तक में लिख लिया करूंगी और जब कभी कोई उदासी अथवा सकट मुझे घेरेगा तो उस पुस्तक को पढ़कर अपने मन को प्रसन्न कर लिया करूंगी। घोर संकट के दिनों में मेरी इसी पुस्तक ने मेरा मार्गदर्शन करके मुझे आनन्द प्रदान किया।

जो व्यक्ति अनावश्यक रूप से गम्भीर बने रहते हैं, उनकी मानसिक शक्तिया क्रमश क्षीण हो जाती हैं। कार्यकुशलता और मनुष्य की योग्यता पर भी इसका प्रभाव पड़ता है। यदि आप जीवन में नीरोग रहना चाहते हैं तथा प्रत्येक कार्य में सफल होना चाहते हैं तो आपको चाहिए कि कठोर-से-कठोर परिश्रम करते समय भी आप हसते-मुस्कराते रहें। व्यक्ति का सारा जीवन ही मुस्कानों का उद्यान होना चाहिए। मुस्कान शब्द ही ऐसा है जो दूसरों को मन्त्रमुग्ध कर देता है। जो व्यक्ति हंसते-हसते जीने की कला जानता है, वह अपने कार्य में कभी भी असफल नहीं होता।

प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक वस्तु, घटना, स्थान और मिलने-जुलने वाले प्रत्येक मनुष्य से कुछ-न-कुछ प्रसन्नता प्राप्त करके प्रसन्नता के अपने कोश को बढ़ाते रहना चाहिए। आपके मन और मस्तिष्क में जितनी ही अधिक प्रसन्नता भरती जाएगी उतना ही अधिक आपकी चिन्ताओं का ह्रास होता जाएगा। जीवन में सफलता की सबसे बड़ी कुजी प्रसन्नता ही है।

दृढ़ निश्चय का चमत्कार

व्यक्ति का उद्देश्य कितना भी ऊंचा हो, वह उसे एक दिन अवश्य ही प्राप्त कर सकता है, लेकिन इसके लिए आवश्यकता है अपने उद्देश्य की ओर निरन्तर बढ़ते रहने की। जिस व्यक्ति के सामने कोई उद्देश्य नहीं होता, वह जीवन भर केंचुए की भांति रेंगता रहता है और अन्त में उसी की भांति नष्ट हो जाता है।

जब आप किसी काम के लिए 'हां' कहते हैं तो आप अपने कथनानुसार एक सच्चाई की स्थापना करते हैं, लेकिन जब कोई शब्द आपके सचेतन मन से निकलता है तो एक प्रेरक-शक्ति बनकर आपके जीवनोद्देश्य को साक्षात प्रकट करने में समर्थ हो जाता है, क्योंकि आप जो कुछ भी अपने मन में विचार करते हैं, उसे ही अपने वचनों द्वारा प्रकट भी करते हैं और जो कुछ अपने वचनों द्वारा प्रकट करते हैं, उसे पूर्ण करने के लिए प्रयत्न भी करते हैं। फिर कार्य कैसा भी हो, कुछ भी हो, जब उसके लिए प्रयत्न किया जाएगा तो वह सम्पन्न भी अवश्य होगा। कार्य को सम्पन्न वही व्यक्ति कर सकता है, जिसका यह निश्चय है कि वह उसे अवश्य ही पूरा कर सकेगा। दृढ़-निश्चयी व्यक्ति को संसार स्वय रास्ता दे देता है। दृढ़-निश्चयी व्यक्ति जब अपने उद्देश्यों एव लक्ष्य की ओर अग्रसर होते हैं तो रास्ते में रुकते नहीं, चलते ही जाते हैं और जहां दूसरे लोग रुक जाते हैं, जिन बाधाओं को देखकर अन्य व्यक्ति अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में ढील छोड़ देते हैं अथवा जिन बाधाओं में अटक कर अन्य लोग रास्ते में ही गिर जाते हैं, वहीं दृढ़-निश्चयी व्यक्ति उन बाधाओं को पार करके अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेते हैं।

विश्वास के द्वारा आप कुछ भी प्राप्त कर सकते हैं, क्योंकि विश्वास सब उपलब्धियों का पिता है। विश्वास के द्वारा आपके काम करने की शक्ति दुगुनी-तिगुनी ही नहीं, कई गुना बढ जाती है। इसी के द्वारा आपकी सामर्थ्य, योग्यता एवं मानसिक क्षमता भी विकसित एव परिवर्द्धित होती है। जितना प्रबल आपका विश्वास होगा, उतने ही आपके विचार भी प्रबल होंगे, लेकिन यदि आपका विश्वास ही दुर्बल होगा तो आपके विचार भी दुर्बल होंगे और तब आप जिस काम को भी हाथ लगाएंगे, वह बेकार साबित होगा।

व्यक्ति सिद्ध हो सकता है उस पर एव उसकी कार्यक्षमता पर अवश्य ही विश्वास किया जा सकता है। ऐसा व्यक्ति निश्चित रूप से कर्मठ तो होगा ही, प्रभावशाली भी होगा, क्योंकि वह किसी भी प्रकार की विरोधी विचारधारा से प्रभावित नहीं हो सकता।

यदि आज के नवयुवक को यह पता लग जाए कि दृढ़-निश्चय में और अपने उद्देश्य के लिए अपने निश्चय को दोहराते रहने में कितनी शक्ति है तो इससे उन्हें बड़ा ही बल मिलेगा। तब वह जो बनना चाहते हैं, जो करना चाहते हैं, वह बन सकेंगे, कर सकेंगे। तब उनकी हर आशा-आकांक्षा सर्वोत्तम रूप में सफल होगी, क्योंकि ऐसे व्यक्ति किसी के कहने-सुनने से अपने उद्देश्य को बदलते नहीं और इसलिए उसे प्राप्त कर लेते हैं। सत्य जानिए, दृढ़ निश्चय में इतनी अटूट शक्ति है कि इससे मनुष्य के जीवन में क्रान्ति आ जाती है। मनुष्य अपनी बहुत-सी गलतियों व बुरी आदतों से छुटकारा पा सकता है और उन बुलन्दियों तक जा पहुंचता है, जहां पहुचने की वह कल्पना भी नहीं कर सकता।

कार्य साधारण अथवा असाधारण कैसा भी हो, उसे पूरा करने के लिए दृढ इच्छाशक्ति और आत्मविश्वास की आवश्यकता होती है। किसी भी प्रकार का प्रण अथवा प्रतिज्ञा और कुछ नहीं, इच्छाशक्ति का ही दूसरा नाम है और इसी का दूसरा रूप दृढ़ निश्चय है। अत: जिस व्यक्ति को भी आज आप सफल अथवा महान देखते हैं, उसने पहले अपने कार्य के प्रति अपनी अटूट इच्छाशक्ति एवं दृढ़ निश्चय से ही काम लिया था, क्योंकि जिस व्यक्ति को अपने जीवनोद्देश्य पर अटूट विश्वास है, जिसकी निष्ठा एव सकल्प अटूट हैं, जिसमें अपने कार्य को पूर्ण करने की सामर्थ्य है और जिसमें अपने रास्ते की रुकावटों को हटाने की शक्ति है तथा जो किसी भी प्रकार की परिस्थिति अथवा वातावरण से अधिक शक्तिशाली है, वह किसी भी काम को करने में सफल होगा और अवश्य ही सफल होगा। ऐसे व्यक्ति को सफल होने से संसार की कोई भी शक्ति नहीं रोक सकती। सफलता-प्राप्ति के लिए अपनी योग्यता पर पूर्ण विश्वास होना, दृढ निश्चयी होना एव इच्छाशक्ति का होना बहुत आवश्यक है। तभी व्यक्ति मार्ग में आने वाली बाधाओं को लाघ सकता है, दुर्भाग्य का मजाक उडा सकता है। तब उसकी कार्यशक्ति और भी अधिक सुदृढ़ बन जाती है तथा वह महान उपलब्धियां प्राप्त कर सकता है। इसके साथ ही उसकी ईश्वरप्रदत्त योग्यता तथा शक्तिया अधिकाधिक समर्थ बनकर एवं केन्द्रित होकर उसे उसके लक्ष्य तक पहुचा देती हैं।

ध्यान दीजिए कि अपने विश्वास को बार-बार दोहराते रहने से आपके साहस में अनूठी वृद्धि होती है और साहस ही व्यक्ति के आत्मविश्वास की रीढ़ की हड्डी है। जिस समय कोई व्यक्ति इस प्रकार कहता है कि मैं इस काम को अवश्य पूरा करूगा, तब न केवल उसका साहस बढ़ता है बल्कि उसका आत्मविश्वास और भी सशक्त होता है। जिससे उसके रास्ते में आने वाली रुकावटें हट जाती हैं तथा उसकी रचनात्मक योग्यता और अधिक प्रखर होकर उसकी ध्वंसात्मक विचारधारा को नष्ट कर देती है। सदा यह

याद रखिए कि कठिन-से-कठिन कार्य भी केवल रचनात्मक मंन स्थिति में ही हो सकते हैं, निषेधात्मक मन.स्थिति में नहीं। रचनात्मक मन स्थिति विधेय शक्ति है, इसमें आक्रामक शक्ति होती है, लेकिन इसके लिए उस मन.स्थिति की आवश्यकता होती है जो इसे झेलते हुए प्रयोग में लाए अन्यथा व्यक्ति पिछलग्गू भले ही बन जाए, स्वतन्त्र कार्यकर्ता कभी नहीं बन सकता। नेता और जननायक बनने की तो बात ही नहीं उठती।

स्वतन्त्र कार्यकर्ता, नेता अथवा जननायक बनने के लिए अपने मन से निषेधात्मक विचारों को बाहर निकालकर, उसके स्थान पर विधेयात्मक विचारों को स्थापित करना होगा। सशय तथा अविश्वास के स्थान पर अपने व्यक्तित्व की प्रचण्डता को प्रकट करना होगा। आगे बढकर अपने अधिकारों को छीन लेना होगा और ऐसा सब वही कर सकते हैं, जिनका निश्चय दृढ हो, जिनका निर्णय अटूट हो, जिनका संकल्प दृढ़ हो एव जिनमें रचनात्मक शक्ति हो। यदि आप ससार में कुछ करना अथवा बनना चाहते हैं तो एक क्षण के लिए भी इस विचार को अपने मन में न आने दीजिए कि आप कुछ नहीं कर सकते या कुछ नहीं बन सकते। ऐसा सोचना कि आप अन्य प्राणियों की अपेक्षा भाग्यहीन हैं अथवा कम भाग्यशाली हैं, आपको कभी भी आगे नहीं बढ़ने देगा और यदि कभी ऐसा कोई विचार आपके मन में आ जाए तो उसे तुरन्त कुचल दीजिए। अपने मन को इस प्रकार अनुशासित कीजिए कि उसमें किसी प्रकार के कोई हीन विचार कदापि न घुस सकें। मत सोचिए कि आप शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से दुर्बल हैं। मत सोचिए कि आपमें कोई कमी है। मत सोचिए कि जिसे दूसरे लोग कर सकते हैं, उसे आप नहीं कर सकते। आप ऐसा सोचते हैं तभी तो आप इस वर्तमान स्थिति में रह रहे हैं। बल्कि इसके स्थान पर यह सोचिए या तो मैं इस काम को करूंगा अन्यथा मर मिटूंगा और बडे-से-बड़ा खतरा भी आएगा तो उसका भी हसते-हसते मुकाबला करूगा। केवल करूगा ही न कहिए, कीजिए। आपके शब्दों अथवा आपकी लेखनी से कहीं भी यह प्रकट नहीं होना चाहिए कि आप भाग्यहीन हैं अथवा मजबूर हैं। ऐसे भाव जो आपको किसी बन्धन में बाधते हैं, उन्हें निकाल फेंकिए। इनसे आपकी शक्ति का गला घुट जाता है और तब आपका व्यक्तित्व बौना रह जाता है और भविष्य अन्धकारमय। आप उस परमपिता की सर्वोत्तम रचना हैं जो सर्वशक्तिमान है। उसने आपको इस धरती पर इसलिए नहीं भेजा कि आप अपने आप को भाग्यहीन, अभागा, गरीब अथवा मजबूर समझें। उसने आपको यहा इसलिए भी नहीं भेजा कि आप भाग्य को कोसते हुए दिन काटते रहें। उसने आपको यहा इसलिए भेजा है कि आप हंसें-हंसाएं। स्वय भी प्रफुल्लित रहें तथा औरों को भी प्रफुल्लित रखें। खूब डटकर मेहनत करें और विजय प्राप्त करें। परमात्मा ने आपके रास्ते में कोई रुकावट नहीं बनाई। जिन्हें आप रुकावटें समझते हैं वे आपकी अपनी बनाई हुई हैं। जरा सोचिए कि जब आप उस सर्वशक्तिमान प्रभु की रचना हैं और उस असीम का अंश आप में विद्यमान है, फिर आप स्वयं को सीमाओं में क्यों बाधते हैं, क्यों अपने को भाग्यहीन समझते हैं?
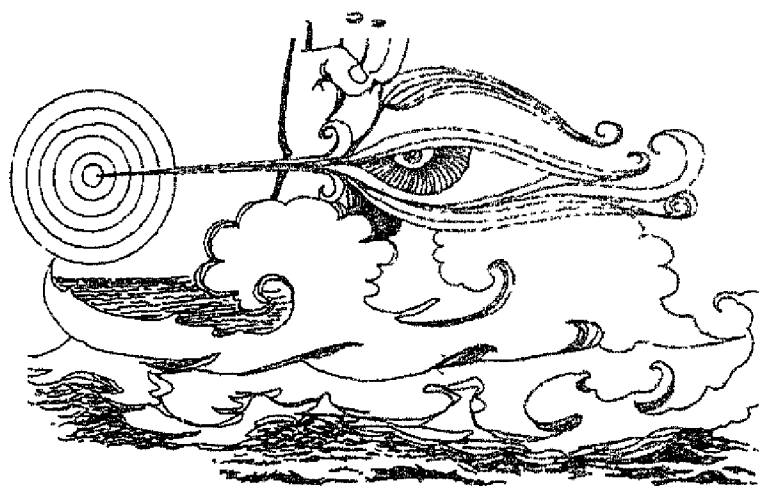
अपने लक्ष्य पर आंख गड़ाकर रखिए, विजय सदा सत्य की होती है।

अपने लक्ष्य पर अपनी आंख गड़ाए रखिए और निश्चित समझ लीजिए कि सत्य की विजय अवश्य होती है, न्याय की विजय अवश्य होती है। बार-बार सोचिए और विचार कीजिए और इस विचार को और भी अधिक पुष्ट कर लीजिए कि आप भी संसार के सौभाग्यशाली व्यक्तियों में से एक हैं और परमात्मा ने आपको इसलिए यह जीवन प्रदान किया है कि वह आपसे कोई महत्वपूर्ण कार्य पूरा कराना चाहता है। यह भी समझ लीजिए कि आपका जन्म जिस परिवार में और जिस समय हुआ, वह निश्चित रूप से ऊंचा था, क्योंकि आपके द्वारा वह जो महत्वपूर्ण कार्य कराना चाहते हैं उसे केवल आप ही कर सकते हैं, दूसरा कोई व्यक्ति नहीं। जब आप पर यह बात खुल जाए तो फिर आपको यह भी मान लेना चाहिए कि आप ससार के सौभाग्यशाली व्यक्तियों में से एक हैं, क्योंकि आपको ही ऐसा शुभ अवसर प्राप्त हुआ है कि आपके ही हाथों वह परमपिता परमात्मा किसी महत्वपूर्ण कार्य को पूर्ण कराना चाहता है। शारीरिक स्वास्थ्य, शिक्षा अथवा प्रशिक्षण की दृष्टि से भी आप ही वह उचित व्यक्ति हैं, जिसके हाथों से वह महत्वपूर्ण कार्य पूरा होना है।

यदि आप निर्धन हैं तो भी अपने मन से दीनता के विचारों को निकाल बाहर फेंकिए। उस विशाल धन-सम्पत्ति का ध्यान कीजिए जिसे प्रभु ने आपके लिए असीम परिमाण में बनाया है और इस विचार को तो सर्वथा कुचल ही डालिए कि आपका जन्म निर्धन रहने के लिए ही हुआ है। गरीब, दीन-हीन तथा अकर्मण्य रहने से सर्वथा इनकार कर दीजिए और सोचिए कि आप सौभाग्यशाली हैं, आपमें उत्साह है, आप सबल हैं, आप प्रबल हैं, आप साहसी हैं, आप अवश्य ही सफल होंगे, विजयमाला आपके ही गले में पड़ेगी। जरा विचार करके देखिए कि जब प्रभु ने आपको किसी महत्वपूर्ण कार्य के लिए इस संसार

में भेजा है तो उसने आपको वैसी योग्यता भी दी है और आपको वैसा अवसर भा प्रदान किया है। तब आप क्यों नहीं उस कार्य को इस प्रकार करके दिखला देते कि सारा संसार चौंक उठे?

उपलब्धि के लिए अपने मन में ऐसा अनुभव कीजिए कि आपके इर्द-गिर्द का वातावरण तथा हर पदार्थ सफल होने का संकेत दे रहा है। उसके लिए आपके आचार-विचार तथा आपकी वेशभूषा से भी यह प्रकट होना चाहिए कि आप अवश्य ही सफल होंगे, बल्कि यूं समझिए कि आपके सम्पूर्ण व्यक्तित्व से सफलता झलकती प्रतीत होनी चाहिए। इसके लिए अच्छा है कि आप सुबह-सवेरे ही अपनी उपलब्धियों का चिन्तन करें। आप अपनी सफलताओं को ध्यान में रखें और इस बात का भी ध्यान रखें कि चाहे कोई कैसी भी सलाह दे, आपको अपने रास्ते से नहीं हटना है तथा अपना मानसिक सन्तुलन बनाए रखकर सफलता प्राप्त करनी है। इसके लिए अपनी शक्तियों को वश में कीजिए, उन पर भरोसा कीजिए। अपनी ईमानदारी, निष्ठा और निश्चय पर विश्वास कीजिए और यह ठान लीजिए कि ससार की कोई भी शक्ति आपको आपके निश्चय से हटा नहीं सकती। तभी आप किसी काम को आसानी से कर सकेंगे। इस प्रकार के विचारों से आपमें वह सामर्थ्य आ जाएगी कि आप जिस काम को भी करना आरम्भ करेंगे, वह स्वय पूर्ण होता चला जाएगा। आप देखेंगे कि इस प्रकार के विचारों से आपके जीवन का सारा ढांचा ही बदल जाएगा। आपके दृष्टिकोण में ऐसा परिवर्तन आएगा कि आप अपनी समस्याओं पर नए ढंग से विचार करने लगेंगे और तब आपके जीवन का एक नया रूप उदित होगा। तब आप अपने लक्ष्य के प्रति, अपने उद्देश्य के प्रति प्रतिबद्ध हो जाएंगे। आपका मन प्रसन्न रहने लगेगा। आपका मस्तिष्क निर्मल हो जाएगा। आपकी विचारधारा पहले से कहीं अधिक प्रभावशाली हो जाएगी और आप अधिक उत्साहपूर्ण चिन्तन कर सकेंगे, जिसके द्वारा आपकी निर्णय करने की सामर्थ्य कई गुना बढ़ जाएगी। तब आपके मन की कायरता दूर हो जाएगी। आप बड़े-से-बड़ा व जोखिम से भरा कार्य भी साहसपूर्वक कर सकेंगे। तब आपके मन से भय की भावना मिटती चली जाएगी। तब आपमें अपूर्व साहस आ जाएगा। तब आप अपने जीवन में जिस बात को नहीं होने देना चाहते, वह नहीं हो सकेगी और जिसे होने देना चाहते हैं, वह अवश्य होकर रहेगी। तब विषैले एवं खिन्नता पैदा करने वाले विचार आपसे दूर रहेंगे। तब आपके मन और मस्तिष्क शान्तिपूर्वक किसी भी बात के बारे में सही निर्णय कर सकेंगे। तब आपकी विचारधारा का प्रवाह बदल जाएगा। तब आपका आत्मविश्वास उदय होगा। तब जीवन के प्रति आपका दृष्टिकोण स्वस्थ होगा और यह सब आपको निराशा के अन्धकार से निकालकर विजय के प्रकाश की ओर ले जाएगा और तब आपकी प्रत्येक आकाक्षा आपकी मुट्ठी में आ जाएगी। तब आपकी समस्त योग्यता एव कार्यक्षमता आपके उद्देश्य की ओर केन्द्रित होकर आपकी मनोकामनाओं को अवश्य ही पूरा कर सकेगी।

अन्तरात्मा की पुकार सुनें

आपने शायद अनुभव किया होगा कि आप स्वयं अपने मन से बातचीत कर सकते हैं। यदि यह बातचीत मौन न रहकर शब्दों में की जाए तो इसका आपके मन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ेगा। निराशा एवं असफलता के दौरान अनेक व्यक्ति अपने मन से बातचीत करके ही असाधारण सफलता प्राप्त कर चुके हैं।

इस संसार में ऐसे कितने व्यक्ति हैं जो अपनी आत्मा की आवाज सुन सकते हैं तथा उसे सुनकर शब्दों द्वारा व्यक्त भी कर सकते हैं। मनुष्य जो भी सोचता है, उसे ही शब्दों में प्रकट करता है। ठीक है, उसके चेहरे से उसके मानसिक विचार प्रतिबिम्बित हो सकते हैं, परन्तु मनुष्य का जीवन भी विचारों का ही प्रतिबिम्ब है और उसके मुंह से निकले शब्दों में इतनी शक्ति होती है कि वह किसी को भी प्रभावित कर सकती है। उसका स्वभाव या आदर्श भी शब्दों से ही प्रकट हो सकता है। शब्दों की इस शक्ति को पहचानकर ही ईसा मसीह ने कहा था—'धरती और स्वर्ग मिट सकते हैं, लेकिन मेरे शब्द नहीं मिट सकते, वे अमर हैं।' वास्तव में अन्तःकरण से निकले शब्द इतने अधिक शक्तिशाली होते हैं कि उनके समक्ष भौतिक पदार्थ भी निर्बल ही सिद्ध होते हैं। शब्द ही तो हैं जो मनुष्य के जीवन को प्रेरणा प्रदान करते हैं। शब्दों के चमत्कार का इससे बढ़िया प्रमाण क्या हो सकता है कि मुंह से कहे हुए शब्दों का मन पर अमिट प्रभाव पड़ता है। उदाहरणार्थ, आप किसी एक विचार को दोहराइए, शब्दों द्वारा मुंह से कहकर दोहराइए और तब देखिए, आपकी सभी शक्तियां एकजुट होकर कार्य करने लग जाएंगी और तब आपको ऐसा जीवन प्राप्त होगा जिसे आप नवजीवन कह सकते हैं।

बेरडन की लड़ाई में जनरल पेता ने फ्रैंच सैनिकों के मन में यह विश्वास भर दिया था कि जर्मन सेनाएं फ्रांस की धरती पर कदम नहीं रख सकतीं और उसके इन विश्वास भरे शब्दों से ही फ्रैंच सैनिकों की सामर्थ्य कई गुना बढ़ गई तथा प्राणवान शब्दों में की गई यह घोषणा फ्रांस के लिए विजय का मूलमन्त्र बन गई। भीषण बमवर्षा में भी फ्रांस के सैनिक केवल अपने सेनापति के शब्दों के सहारे ही मुस्कराते हुए निरन्तर जीत पर जीत

हासिल करते हुए आगे बढ़ गए। मृत्यु का भय भी उन्हें अपने रास्ते से न हटा सका और उन्होंने विजय प्राप्त करके दिखा दी। उस युद्ध-क्षेत्र में उपस्थित एक जर्मन डॉक्टर ने अपने संस्मरणों में लिखा है कि अनेक फ्रांसीसी मृत सैनिकों की मुख-मुद्रा में भी प्रबल आत्मविश्वास झलकता था और मूर्च्छित हो गए सैनिकों के मुख से भी बुदबुदाते हुए यही शब्द निकलते थे कि जर्मन सेनाएं फ्रांस की धरती पर कदम नहीं रख सकतीं। यह एक छोटी-सी घटना है जो स्पष्ट करती है कि यदि व्यक्ति के मन में सफलता के प्रति दृढ़ निश्चय हो जाए और उसे वह शब्दों के द्वारा भी दूसरों के सामने प्रकट करता रहे तो निश्चय ही अपने किसी भी शत्रु को परास्त कर सकता है।

शब्दों द्वारा ही हम अपने विचार दूसरों तक पहुचाते हैं।

शब्दों द्वारा ही, हमारे विचार दूसरों तक पहुचते हैं। यदि आपके शब्दों से प्रेम और मैत्री की भावना प्रकट होगी तो जिन तक आपके ये शब्द पहुचेंगे, उनके हृदय में भी प्रेम और मैत्री की भावना का जन्म होगा। लेकिन यदि आपके शब्द ईर्ष्या, घृणा, द्वेष अथवा किसी प्रकार की दुर्भावना से भरे हुए होंगे तो उससे दूसरों के मन पर भी वैसी ही प्रतिक्रिया होगी। दूसरे शब्दों में कहें तो मनुष्य का अन्तःकरण ही उसको प्रेरणा देता है। शब्दों के महत्वपूर्ण योगदान से ही मानव-सभ्यता का यहां तक विकास हुआ है। विचारों की शक्ति भी शब्दों के द्वारा ही मनुष्य की मनोकामना को पूरा कर देती है। लेकिन इसके लिए इस बात की आवश्यकता है कि आपकी विचारशक्ति भी प्रबल हो ताकि

आपके शब्दों का प्रभाव भी उतना ही पडे जितना आप चाहते हैं। मन से सोचे गए शब्दों में जो शक्ति होती है, मुह से कहे गए शब्दों में उससे भी अधिक प्रभावशाली शक्ति होती है। यही कारण है कि मुह से निकले शब्दो का मन में प्रकट हुए विचारो से बहुत अधिक प्रभाव पडता है। पढे हुए शब्दों को आप भूल भी सकते हैं, लेकिन कहे हुए शब्दों को भूलना कठिन होता है। यही कारण है कि व्यक्ति के मन पर जो प्रभाव किसी उत्तम ग्रन्थ को पढकर भी नहीं पड सकता, किसी भाषण को सुनकर उससे अधिक प्रभाव उसके मन पर पड सकता है। तभी तो कुछ व्यक्ति अपने भाषणों एव प्रवचनों द्वारा लोगों के सामाजिक जीवन में आमूल-चूल परिवर्तन कर देते हैं। केवल इतना ही नहीं कि दूसरों के द्वारा कहे गए शब्द ही आपके हृदय पर प्रभाव डालते हैं, अपितु आपके अपने कहे हुए शब्द भी आपका हृदय परिवर्तन कर सकते हैं। दृढ संकल्प द्वारा कहे गए आपके शब्द, आपके हृदय की समस्त बुराइयों को दूर कर सकते हैं, क्योंकि इस प्रकार के शब्दों का हमारे मन पर जादू का-सा असर होता है और तब शब्दों की यही शक्ति व्यक्ति का कायाकल्प कर देती है।

एक व्यक्ति हीन भावना से ग्रस्त था तथा अत्यन्त लज्जालु और संकोची स्वभाव का भी था। यहा तक कि वह दूसरों के सामने आने व बात करने से भी कतराता था। उस व्यक्ति में आत्मविश्वास की भी नितान्त कमी थी और उसे यह भ्रम भी था कि अन्य व्यक्ति उसे बेईमान समझते हैं, जबकि वास्तव में वह अत्यन्त ईमानदार एव परिश्रमी व्यक्ति था। अचानक उसे एक ऐसी पुस्तक हाथ लग गई जिसमें यह सुझाव दिया गया था कि शब्दों द्वारा स्वयं से बातचीत करके व उत्साहित होकर मनुष्य शक्तिशाली बन सकता है। उस व्यक्ति ने भी उस पुस्तक के सुझाव को मानकर उसके अनुरूप आचरण करना आरम्भ कर दिया और प्रतिदिन अपने आपसे बातचीत करके उसकी विचारधारा में अद्वितीय परिवर्तन आने लगा। उसकी शक्तियां विकसित होने लगीं। उसका हीन भाव समाप्त हो गया और धीरे-धीरे उसमें इतना परिवर्तन आ गया कि वह सभा में भाषण ही नहीं देने लगा बल्कि उनका अध्यक्ष भी बनने लगा। अब उसका वह लज्जालु मन, उसका वह अविश्वास, उसका अपनी योग्यता एव क्षमता पर सन्देह दूर हो चुका था। अपने शब्दों द्वारा अपने से बातचीत करने से आत्मसुझाव के द्वारा व्यक्ति की बडी-से-बड़ी दुर्बलता नष्ट हो सकती है और उसकी सोई शक्तियां जगाई जा सकती हैं। आप आश्चर्य करेंगे कि मनुष्य के मन के भीतर अनेक शक्तियां रहती हैं। उन्हें आत्मसुझाव रूपी दियासलाई दिखाने की आवश्यकता है कि वह बारूद के भण्डार की तरह फट पड़ेंगी। तब व्यक्ति का सोया आत्मविश्वास जाग उठेगा और वह किसी भी कार्य को पूरा करने में समर्थ हो सकेगा। याद रखिए, आपके सोए हुए आत्मविश्वास को जगाना अथवा आपके मन को उत्साहित करना तथा आपके सन्देह एवं भय को दूर करने के लिए आगे लिखे शब्द बहुत मूल्यवान हैं। ये शब्द हैं—

- मेरे भीतर इस काम को करने की शक्ति है।
- मैं इस काम को अवश्य करूँगा।
- मैं इस काम को पूरा करके ही दम लूँगा।

ये तीन वाक्य अपने मुँह से बोलते रहिए, इन्हें दोहराते रहिए। आप देखेंगे कि आपके कार्य करने की सामर्थ्य कई गुना बढ़ जाएगी।

यदि आप किसी कारणवश अपनी वर्तमान स्थिति से सन्तुष्ट नहीं हैं या समझते हैं कि आप अपने आदर्शों के अनुकूल प्रगति नहीं कर पा रहे हैं अथवा कोई ऐसी बाधा है जो आपको आगे बढ़ने से रोकती है तो आप उस बाधा को ढूंढिए और यह काम तभी हो सकता है जब आप अपने आपसे वार्तालाप करना आरम्भ कर दें। अपने अन्तःकरण में झाँककर देखिए, अपनी क्षमताओं और शक्तियों को टटोलिए और फिर एकान्त में बैठकर मन से पूछिए—तुम आगे क्यों नहीं बढ़ पा रहे हो? तुम्हारे साथ के अन्य व्यक्ति कितना आगे बढ़ गए हैं। क्या तुम्हारी योग्यता उनसे कम है? फिर तुम क्यों नहीं अपनी आशा-आकांक्षा को पूर्ण कर पाते? या कौन-सी विकट बाधा तुम्हारी प्रगति के मार्ग में व्यवधान डाल रही है? उसे फौरन अपने रास्ते से हटा दें और फिर देखें आपका कैसा विकास होता है।

उत्साह और अनुत्साह, साहस और भीरुता, धीरता और अधीरता, आत्मविश्वास और आत्मविश्वास का अभाव—इन सभी गुण-दोषों पर विचार कीजिए और देखिए कि आप में गुण अधिक हैं या दोष। इससे आपको तुरन्त पता लग जाएगा कि आपकी उन्नति के मार्ग की बाधा क्या है और इसके बाद उस बाधा को दूर करके उनके विपरीत गुणों की संख्या और मात्रा बढ़ाने का प्रयत्न कीजिए और देखिए कि सफलता आपके पास कैसे भागी आती है और कैसे आप अपने जीवनोद्देश्य को प्राप्त कर लेते हैं।

जिस व्यक्ति में हीन भावना जन्म ले लेती है, उसका जीना दूभर हो जाता है। यह हीन भावना व्यक्ति को कहीं का नहीं छोड़ती। इस हीन भावना के कारण ही व्यक्ति का आत्मविश्वास नष्ट हो जाता है। इस हीन भावना को दूर करने के लिए आपको चाहिए कि आप स्वयं से इस प्रकार बातचीत करें—मैं भी उसी परमपिता की सन्तान हूँ। मेरे भीतर भी उसका अंश विद्यमान है। उस ईश्वर के गुणों का असीम भण्डार मुझे भी प्राप्त है। उसकी दिव्य शक्तियों के सहारे मैं भी जो चाहूँ प्राप्त कर सकता हूँ। सफलता मेरी चेरी है। शक्ति मेरी सहायिका है और भाग्यश्री मेरे साथ-साथ चलती है, पर फिर भी मैं पिछड़ रहा हूँ, क्यों? मैं कायर नहीं हूँ और न ही अपने को दीन-हीन मानकर अपनी ईश्वरीय शक्तियों का अनादर करता हूँ। मैं मानता हूँ कि अपने को तुच्छ, हीन या अकर्मण्य मानना अपने उस सर्जनहार का अपमान करना है। मैं यह अपराध और नहीं करूँगा। बस, बहुत हो चुका। मैं तो प्रभु का अंश हूँ। अब दुनिया की कोई भी ताकत मुझे मेरे कार्यपथ से हटा नहीं सकती। मेरी योग्यता का मुझे अभी तक पता ही नहीं

था, लेकिन अब मुझे अपनी योग्यता का पता चल गया है। अब मैं आशा, आत्मविश्वास, विद्या, बुद्धि और बल को साथ लेकर जीवन-संघर्ष से दो-दो हाथ करने के लिए निकल पडा हू। अब देखता हू कैसे विजयमाला मेरे गले में नहीं पड़ती? अब मुझे उस परमपिता परमात्मा पर पूर्ण विश्वास हो चुका है। इसलिए कभी भी अपनी निन्दा नहीं करूंगा और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विजय प्राप्त करके ही दम लूंगा।

स्वय से इस प्रकार वार्तालाप करके आप अपने जीवन में अद्‌भुत एव आश्चर्यजनक परिवर्तन ला सकते हैं और उत्साह, साहस, आशा-आकाक्षा, आत्मविश्वास, धीरज जिस किसी भी गुण की कमी हो उसे प्राप्त कर सकते हैं। याद रखिए और अपने आपसे कहते रहिए—'दृढ़ निश्चय और अटूट विश्वास से ही शक्ति प्राप्त हो सकती है और मैं ऐसे ही दृढ़ निश्चय में विश्वास करता हू।' प्रतिदिन इस प्रकार की शब्दावली दोहराते रहिए—'मैं अपने जीवन में और अधिक सफलता प्राप्त करके ही रहूंगा, क्योंकि मैं जानता हू कि मैं ऐसा कर सकता हूं। मैं सर्वाधिक गौरवपूर्ण पद प्राप्त करूगा। मैं सकट आने पर साहस एवं दुगुनी शक्ति से कार्य करूंगा और हर संकट को सुअवसर में बदल डालूंगा। मैं अपने में और दूसरों में केवल गुण ही देखूंगा, अवगुण नहीं। अबसे मेरा प्रत्येक शब्द उत्साहजनक, स्फूर्तिदायक, प्रेरणा प्रदान करने वाला तथा साहसी ही होगा। मैं सदा लोकोपकार के ही कार्य करूंगा। अब मैं उन्हीं वस्तुओं और सफलताओं की आशा करूगा जो मनुष्य-जाति के लिए लाभदायक सिद्ध हो सकेंगी।' इस प्रकार की शब्दावली को बार-बार मन-ही-मन में दोहराते रहने से आपका 'मैं', 'मैं' नहीं रह जाएगा। तब उसका अर्थ सात्विक हो जाएगा। तब उसका अर्थ आत्मा हो जाएगा, जिसका परमात्मा से निकटतम सम्बन्ध है और जिसकी शक्तियां असीम हैं। तब 'मैं' का अर्थ केवल मेरा शरीर मात्र न रहकर उपरोक्त घोषणाए करना भर होगा। तब, जब आप इस प्रकार की प्रार्थना, इस प्रकार की शब्दावली को दोहराएंगे तो आपके मन में एक महामन्त्र उदित होगा, जो अत्यन्त गौरवशाली और महान शक्तिप्रदाता है। और वह महामन्त्र है—'मैं उस परमपिता का एक अश हूं जो ससार का स्रष्टा है। उसमें और मेरी आत्मा में कोई भिन्नता नहीं है। हम दोनों एक हैं और जब वह परमपिता सर्वशक्तिमान है तो मैं दुर्बल कैसे रह सकता हूं?'

यह है वह महामन्त्र, जिसको बार-बार दोहराने से आपमें इतनी अधिक शक्ति आ जाएगी कि आपको अपनी बात सिद्ध करने के लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं रह जाएगी। संसार के किसी भी प्रतिभाशाली दार्शनिक, विचारक अथवा लेखक को अपनी बात सिद्ध करने के लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती। उनका प्रबल आत्मविश्वास ही उनका सबसे बड़ा प्रमाण होता है। विश्वासपूर्वक कहे गए शब्दों में बड़ी शक्ति होती है और आत्मविश्वास द्वारा कहे गए शब्दों में तो इतनी अधिक शक्ति रहती है कि लोग उन्हें सत्य मानते हैं और उनके अनुरूप आचरण करने को भी तैयार हो जाते

हैं। आप भी स्वय से वार्तालाप करके अपने आत्मविश्वास को इतना बढा सकते हैं कि आप लोगों से जो भी कहें, लोग उसे सच मानें और उसके अनुरूप आचरण करने को तुरन्त तैयार हो जाएं। इसलिए सन्देह को छोड़िए, भय को भगाइए, घबराहट को दूर कीजिए और मत कहिए—'मैं कोशिश करूंगा', बल्कि इसके स्थान पर विश्वासपूर्वक कहिए—'मैं इस काम को करके ही दम लूगा। मैं इस काम को कर सकता हू।' इस प्रकार की शब्दावली को बार-बार दोहराने से आपकी आत्मा के भीतर ईश्वरीय रूप प्रकाशित हो उठेगा। तब आत्मा और परमात्मा का एकीकरण होते ही आपकी हर प्रकार की दैहिक, मानसिक अथवा आध्यात्मिक उन्नति होती चली जाएगी। याद रखिए कि आपके शब्दों को आपकी आत्मा से ही शक्ति मिलती है और आपकी आत्मा को उस सर्वशक्तिमान परमेश्वर से शक्ति मिलती है। इसके साथ ही यह भी याद रखिए कि आप चाहे जो कुछ भी कहते हैं, उसकी सच्चाई पर भी आपका अटूट विश्वास हो। आप जिन शब्दों का मुह से उच्चारण करते हैं, यदि उनको अपने अतःकरण से स्वीकार नहीं करते तो वह शब्द निर्जीव सिद्ध होंगे। उनका किसी पर कोई असर नहीं होगा। इसलिए आपके मुंह से निकले प्रत्येक शब्द के पीछे आपकी सम्पूर्ण मानसिक एवं आत्मिक शक्ति का होना बहुत आवश्यक है।

उस परमपिता की दृष्टि में तो उसकी सारी सन्तान समान हैं। वह तो सबको समान रूप से प्रेम करता है और उसने सबको एक ही जैसा अधिकार भी दिया है, लेकिन इच्छा और आशा-आकांक्षा की पूर्ति उसी की होती है जो कार्य करता है। अत अपने आदर्श को प्राप्त करने के लिए उपरोक्त शब्दावली को दोहराने के साथ-साथ कर्म भी कीजिए। इसके लिए फिर दोबारा समय नहीं आएगा। यदि अभी से आपने प्रयत्न करना आरम्भ नहीं किया तो फिर वही कहावत सिद्ध होगी—'अब पछताए होत क्या, जब चिड़िया चुग गई खेत'। यदि आपने दूसरों की निन्दा की ओर ध्यान न देकर, अपने उद्देश्य की ओर अपनी समस्त शक्तियों को एकत्र करके कर्म करना आरम्भ कर दिया तो चाहे कुछ भी हो जाए आप सफल होकर ही रहेंगे।

आपमें इतनी सामर्थ्य है कि आप इस ससार में जो चाहें कर सकते हैं, लेकिन अभी तक आपने अपनी शक्तियों को नहीं पहचाना। उन्हें पहचानिए, जीवन में कुछ करने, कुछ बनने के लिए आपकी शक्ति ही आपकी सर्वश्रेष्ठ सहायिका है। स्वयं से बातचीत करके देखिए, आप इसे पहचान जाएंगे और तब उस शक्ति की सहायता से जो चाहे प्राप्त कर सकेंगे। लेकिन हर बात में सन्देह करना अथवा आवश्यक कार्यों को भूल जाना या उस ईश्वरीय शक्ति में विश्वास की कमी, ये कुछ ऐसे दुर्गुण हैं जो उस ईश्वरीय शक्ति में विश्वास न रहने पर बढते ही जाते हैं और आपको सफलता से कोसों दूर धकेल देते हैं। इन दुर्गुणों से भयभीत होने अथवा निराश होने की आवश्यकता नहीं है। ऐसी कोई बुराई नहीं जिसे दृढ़ निश्चय द्वारा दूर न किया जा सके।

इच्छाशक्ति व आत्मविश्वास से आप अपनी आत्मा की आवाज सुन सकते हैं।

प्रत्येक व्यक्ति में ऐसी शक्ति विद्यमान है, जिसे कोई भी बुराई परास्त नहीं कर सकती और वह है ईश्वरीय शक्ति। यही वह शक्ति है जिससे किसी भी बुराई का अन्धकार क्षण भर में छिन्न-भिन्न हो जाएगा। अतः आप जो काम करना चाहते हैं और जिस काम को करने के लिए आपकी अन्तरात्मा भी आपका समर्थन करती है, उस पर आवश्यकता से अधिक सोचने की कोई आवश्यकता नहीं है। दुविधा को छोड़कर अन्धकारपूर्ण स्थिति में सुनहला रूप प्रदान कीजिए। आपका आदर्श ही आपका सबसे बड़ा लक्ष्य है। यदि आप किसी व्यक्ति को अपना आदर्श मानते हैं तो वह ऐसा होना चाहिए कि जिसकी कार्य-कुशलता, जिसकी क्षमता एवं जिसके आत्मविश्वास की सभी लोग मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते हों। ऐसा ही व्यक्ति आपका आदर्श बन सकता है। उसी को आदर्श बनाकर आप प्रेरणा प्राप्त कर सकते हैं। जब आप कोई काम आरम्भ करेंगे तो भूलें तो होंगी ही, उनसे डरने की कोई आवश्यकता नहीं है। घबराकर पीछे हट जाना कायरता की निशानी है और आप पहले यह कह चुके हैं कि आप कायर नहीं हैं। इसलिए अब कहिए, 'मैं पीछे नहीं हटूंगा' और केवल यह कह देना ही काफी नहीं है। इन शब्दों को साकार रूप देने के लिए अपनी इच्छाशक्ति एवं आत्मविश्वास को नियोजित कर दीजिए। सदा अपने हृदय में विश्वास रखिए। आपके मुखमण्डल से, नेत्रों से, वाणी से, चाल-ढाल से यानी कि आपके सम्पूर्ण व्यक्तित्व से विजय की झलक दीखनी चाहिए। यह भी स्मरण रखिए कि स्वयं विजय प्राप्त कर, स्वय अपने आदर्श को प्राप्त कर दूसरों को भी इसकी प्रेरणा दीजिए। आप एक मानव हैं तो यह भी आपके लिए बहुत आवश्यक है कि दूसरे मानव की उन्नति में भी आप सहायक बनें। ऐसे ही व्यक्तियों की प्रतिज्ञा सदा पूर्ण होती है, क्योंकि ईश्वर भी उन्हीं की सहायता करता है जो अपनी आत्मा की आवाज सुन सकते हैं।

दुर्बल विचार : सफलता के शत्रु

दुर्बल, शक्तिहीन एवं अकर्मण्य विचारों को ही ऋणात्मक विचार कहा जाता है। ऐसे विचारों के द्वारा कोई भी व्यक्ति कभी सफलता प्राप्त नहीं कर सकता। इस प्रकार के विचारों का परिणाम तो केवल हानि तथा नाश हो सकता है। किसी भी असफल व्यक्ति का सबसे बड़ा शत्रु उसकी दुर्बलता व हीन भावना होती है।

जरा सोचिए, जो व्यक्ति हमेशा निराशा, कष्ट, कठिनाइयों, अस्वास्थ्य तथा गरीबी की ही बातें करता रहता है, वह व्यक्ति किस प्रकार सफल हो सकता है। वह तो स्वय अपने पाव पर कुल्हाड़ी मार रहा है। अपने प्रयत्नों को स्वयं ही नष्ट कर रहा है। इस प्रकार के बाधक विचारों वाले व्यक्ति के पास साधक विचार नहीं आ सकते। जो सदा निराशा से घिरा हो, उसकी ओर आशा कैसे आकर्षित हो सकती है? ध्वसात्मक विचारों के वातावरण में रचनात्मक सिद्धान्त कैसे पल सकते हैं? इसीलिए ध्वंसात्मक विचारों में रहने वाले व्यक्ति छोटे-से-छोटे काम में भी सफल नहीं हो सकते। वे सदा निम्न वर्ग में ही रहते हैं। उनके हर प्रयत्न का फल केवल असफलता ही होता है। ऐसे व्यक्ति पहले तो किसी काम के लिए 'हा' करते ही नहीं और यदि हा कह भी दें तो काम में मन लगाकर प्रयत्न नहीं कर सकते और यदि प्रयत्न करते भी दिखाई दें तो भी वह सब दिखावा ही होता है। ऋणात्मक या ध्वंसात्मक विचार मनुष्य की महत्वाकांक्षा का गला घोंट देते हैं। ऋणात्मक विचारों से ग्रस्त व्यक्ति में ऊंचा उठने की कोई आकाक्षा नहीं रह जाती। ऐसे विचार, व्यक्ति के जीवन में विष घोलकर उसके कार्य करने की शक्ति को नष्ट कर देते हैं। इस प्रकार के ऋणात्मक विचारों से व्यक्ति का आत्मविश्वास इतना दुर्बल हो जाता है कि वह हाथ में आए अवसर को भी नहीं पकड़ पाता तथा सम्मुख आई परिस्थिति का स्वामी बनने के बजाय उसका दास बन जाता है।

काम को पूरा करने की सामर्थ्य व्यक्ति के आत्मविश्वास पर ही निर्भर करती है। काम चाहे जितना भी छोटा हो तथा कैसा भी हो, जब तक आपको यह विश्वास न हो जाए कि आप उसे विधिवत एवं सुरुचिपूर्ण ढंग से सम्पन्न कर सकते हैं, तब तक आप उसे सम्पन्न नहीं कर सकते। कोई भी कार्य पहले व्यक्ति के अपने मन में पूरा होता

है, काम को पूरा करने की विधि पहले व्यक्ति के मन में उपजती है, पहले मन द्व
ही काम को बिगाड़ा अथवा बनाया जाता है, उसकी सफलता अथवा असफलता प्राप्त
जाती है, उसके बाद ही उसे सम्पन्न किया जा सकता है। जिस काम को आप पस
ही नहीं करते तथा जिसके पूरा होने में आपको अपनी सामर्थ्य पर सन्देह है अथ
जिसके बारे में आपके मन में सशय है, उस काम को आप कभी भी पूरा नहीं क
सकते। ससार का ऐसा कोई ज्ञान-विज्ञान नहीं है जिसके बल पर आप उस काम
सही रूप में पूरा कर सकें जिसे आप पसन्द नहीं करते। अपनी ही बनाई सीमाओं
पार करने की शक्ति किसी भी व्यक्ति में नहीं होती।

दुर्बल विचारों का परिणाम केवल हानि व नाश ही है।

सफलता प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को सबसे पहले अपने ऋणात्मक विचारों से छुटकारा पाना चाहिए। अपने मन के सन्देह को दूर करना चाहिए। सफलता से पहले सफलता की आशा करना और उसमें विश्वास करना बहुत जरूरी है। अपनी कार्य-सामर्थ्य तथा कार्य-दक्षता पर पूरी तरह भरोसा किए बिना न तो कोई व्यक्ति अपने काम को भली-भांति कर ही सकता है और न ही उसमें सफल हो सकता है। कार्य में सफलता प्राप्त करते हुए भी अपने इस विश्वास को लगातार दोहराते रहना पड़ता है—'मैं इस कार्य को भली-भांति सम्पूर्ण करके ही दम लूगा।'

उदाहरणार्थ, यदि एक बालक प्रात-काल नींद खुलते ही यह कहने लगे कि 'मैं उठ ी नहीं सकता' तो निश्चित है कि वह बिस्तर से नहीं उठ सकता। वह बिस्तर से तभी उठ सकता है जब उसे अपनी शक्ति पर, अपनी सामर्थ्य पर पूर्ण विश्वास हो कि वह

उठ सकता है। जो मनुष्य अपने मन में सदा यही दोहराता रहता है कि 'मैं तो इस काम को कर ही नहीं सकता' या 'मैं इस काम को कैसे कर सकता हू? कोई दूसरा व्यक्ति भले ही उसे कर ले, पर मैं नहीं कर सकता और इसलिए इसके बारे में प्रयत्न करना बेकार है', वह वास्तव में उस कार्य को नहीं कर सकेगा। जो विद्यार्थी अपने मन में यह सोचता है कि वह कॉलेज में प्रवेश नहीं पा सकेगा, वह किस प्रकार ऊची शिक्षा प्राप्त कर सकता है? वह तो चार शब्दों के इस वाक्य—'मैं नहीं कर सकता'—का शिकार हो जाता है और जब तक वह इस ऋणात्मक विचार का, इस 'नहीं' का पल्ला नहीं छोडता तब तक वह वास्तव में कुछ नहीं कर सकता। यह छोटा-सा शब्द 'नहीं' व्यक्ति के सम्पूर्ण आत्मसम्मान को जड़-मूल से नष्ट कर देता है। इस एक शब्द ने ही न जाने कितने व्यक्तियों की योग्यता तथा कार्य करने की शक्ति को नष्ट कर डाला है। लेकिन इसके विपरीत जो व्यक्ति सदा यह कहता है—'मैं कर सकता हू'—उसके मार्ग में कितनी भी विघ्न-बाधाएं आए, वह अपने आत्मविश्वास एवं आत्मसम्मान की रक्षा हेतु इस प्रकार के शब्दों से प्रेरणा प्राप्त कर लेता है। जिस प्रकार एक व्यक्ति सफल वकील तभी बन सकता है जब वह कानून के नियमों और सिद्धान्तों को समझे एवं कानून सम्बन्धी ग्रन्थों का अध्ययन करे। लेकिन यदि वह दवाओं अथवा डॉक्टरी उपकरणों के बारे में सोचता रहेगा तो क्या वह सफल वकील बन सकेगा? यह सब कहने का आशय यही है कि आप जिस विषय में भी विशेषज्ञ बनना चाहते हैं, उसे छोडकर यदि अन्य विषयों के अध्ययन में लगे रहे तो अपने लिए चुने हुए विषय में विशेषज्ञ किस प्रकार बन सकेंगे? जब आपका मन ही अन्य विषयों के चिन्तन में लीन रहता है तो आप अपने लिए चुने हुए विषय में सफलता कैसे प्राप्त कर सकते हैं? इस प्रकार यह कहना भी बिल्कुल उचित है कि जब आपका मन निराशा के विचारों से ग्रस्त है तो फिर आपकी मनोवृत्ति सफलता के लिए किस प्रकार समर्थ एवं सक्षम बन सकती है? तब कैसे आपकी कार्यक्षमता बढ़ सकती है? जब तक आप स्वयं को किसी भी प्रकार के दोष से ग्रस्त समझेंगे तब तक आप उस तक नहीं पहुच सकते, जहां पहुचकर आप सफलता प्राप्त कर सकते हैं। जब तक आपकी मनःस्थिति इतनी उन्नत नहीं हो जाती, तब तक आप अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो सकते। जब तक आपके मन में नकारात्मक, ध्वंसात्मक तथा ऋणात्मक विचार भरे हैं, तब तक आपका मनोबल गिरता ही रहेगा। तब तक आप किसी रचना, किसी निर्माण या किसी सृजन-कार्य में सफल नहीं हो सकेंगे। अनेक व्यक्ति जीवन भर केवल इस प्रकार के दुर्बल एवं अस्वस्थ विचारों से घिरे रहने के कारण ही सफल नहीं हो पाते।

यदि कोई लडकी सुन्दर एवं स्वस्थ रहना चाहती है तो उसके लिए समझदारी की सबसे पहली बात यह होगी कि वह अपने मन से कुरूपता एवं अस्वास्थ्य सम्बन्धी विचारों को निकाल फेंके। उनके स्थान पर निरन्तर सुन्दरता एव स्वास्थ्य के आदर्श को ध्यान में रखे तथा स्वयं को उन आदर्शों के अनुरूप ढालने का प्रयत्न करे। इस प्रकार निरन्तर

सुन्दरता तथा स्वास्थ्य का ध्यान करने से वह अपने आदर्श के अनुकू
सुन्दर एव स्वस्थ बन सकती है। लेकिन यदि वह हर समय यही
तो कुरूप है, भद्दी हैं, अस्वस्थ है, बीमार है, बदसूरत है तो सौन्द
उससे हमेशा कोसों दूर ही रहेंगे।

यह बडे दुर्भाग्य की बात है कि अनेक नवयुवक एव नवयुवतिय
दुर्बलता एव अक्षमता का रोना रोते रहते हैं। उन्हें नहीं मालूम कि
विचार उनकी सफलता एव प्रसन्नता के लिए कितने घातक हैं। उन्हें च
के हीन विचारों को अपने मन से सदा-सदा के लिए निकाल बाहर
अन्धकार से निकलकर आशा के प्रकाश की ओर बढ़ें। निराशा
विषाक्त दुर्गन्ध फैलाता है, जिसमें व्यक्ति का दम घुटकर रह जाता है।
होगा। श्रेष्ठता, सुन्दरता एवं सफलता की चोटी पर चढने का प्र
महत्वपूर्ण कार्य करने का, कुछ बनने का सकल्प कीजिए। जब तक
लें कि असफलता का विचार एक बीमार विचार है, तब तक आप श्रे
पहुचने में समर्थ नहीं हो सकते। श्रेष्ठता के स्तर तक पहुंचने के लि
विचारों को छोड़ना ही होगा। अतः अभी निश्चय कीजिए कि आपको
तथा आपको सफलता के सर्वोच्च शिखर पर पहुंचना है। इस प्रकार
आते ही आप स्वय प्रयत्न करना आरम्भ कर देते हैं और तब आपके
आत्मप्रेरित होकर अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में जुट जाते हैं।

दुर्बल विचार मनुष्य को सदा के लिए निष्क्रिय कर देते हैं।

हीन भावनाओ का बडा घातक प्रभाव होता है। जो व्यक्ति हर समय गरीबी के विचारों में ही उलझा रहता है, वह कभी भी सम्पन्न नहीं बन सकता। जब उसके मन में ही यह विश्वास नहीं है कि वह धनी अथवा सौभाग्यशाली है तो वह कभी भी धन-सम्पत्ति अर्जित नहीं कर सकता, कभी भी सौभाग्यशाली नहीं बन सकता। जब तक मनुष्य के मन में ही धन-सम्पत्ति प्राप्त करने की ललक नहीं होगी तब तक वह उस सम्बन्ध में कोई संघर्ष या प्रयत्न नहीं करेगा। जब तक वह अपने मन में यही सोचता रहेगा कि धन-सम्पत्ति तो औरों के लिए है, औरों के भाग्य में है, तब तक वह धन-सम्पत्ति का स्वामी नहीं बन सकता। जो व्यक्ति अपनी योग्यता, क्षमता, कार्य-कुशलता एव सामर्थ्य के बारे में ही विश्वस्त नहीं है, वह कभी उन साधनों का प्रयोग नहीं कर सकता, जिनके द्वारा सिद्धि प्राप्त होती है। जब वह अपने मन के द्वारा खडी की गई बाधाओं को ही दूर नहीं कर सकता, तब वह दूसरों के द्वारा खडी की गई विघ्न-बाधाओं को किस प्रकार लाघ सकता है और कैसे उन्नति की ओर बढ सकता है? जिसके मन में गरीबी के विचार हों, जिसे हर ओर गरीबी ही दिखाई पडती हो, जो सदा गरीबी के ही सपने लेता हो, गरीब रहने के ही काम करता हो, यदि वह गरीब रहे तो आश्चर्य ही क्या है?

अनेक लोग इसी प्रकार अकर्मण्यता की चादर में लिपटे बरसों पडे रहते हैं। उन्हें यह विश्वास ही नहीं होता कि उनकी अकर्मण्यता उन्हीं के विचारों के कारण है। उनका आत्मविश्वास डोल जाता है और उनकी समझ में नहीं आता कि वे अब क्या करें। उनके विचार ऋणात्मक हो चुके होते हैं, जिसके कारण उनसे उनकी योग्यता स्वयं दूर भाग जाती है और वे असफल रह जाते हैं। ऐसे व्यक्तियों को चाहिए कि वे अपने विचारों की गुलामी के बन्धन को तोड फेंकें, निराशा की ओर से अपना मुह घुमा लें, जीवन में जो कुछ भी श्रेष्ठ है, सुन्दर है, स्वस्थ है उसे अपना आदर्श बनाए तथा अपने मनोबल को बढ़ाकर, अपनी मनःस्थिति को उन्नत करें। अपने आत्मविश्वास को पुष्ट करके, अपनी कार्यकुशलता पर पूरी तरह भरोसा करके तथा ध्वसात्मक, ऋणात्मक एव नकारात्मक विचारों पर विजय प्राप्त करके निर्माणात्मक एव सकारात्मक विचारों द्वारा अपने आदर्श को प्राप्त करें।

शरीर का अणु-अणु सोचता है

नवीनतम वैज्ञानिक खोजों ने यह सिद्ध कर दिया है कि मनुष्य का केवल मस्तिष्क ही नहीं, बल्कि शरीर का अंग-प्रत्यंग, एक-एक अणु सोचता है, विचार करता है। आपके मन में उत्साह के भाव होते हैं तो आपकी कार्यक्षमता बढ़ जाती है, लेकिन मन में निराशा हो तो शरीर की कार्यशक्ति कुण्ठित हो जाती है।

अनेक वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि मानव शरीर के किसी भी अग को काटकर यदि किसी मारक विष के पास रखा जाए तो वह कटा हुआ अग भी कुछ विकृत-सा होता दिखाई पडता है और उस विष से दूर होने की कोशिश करता है, लेकिन वही कटा अग जब किसी लाभकारी औषधि के पास रखा जाए तो उसकी ओर बढता है। इससे भी यही सिद्ध होता है कि मानव शरीर का एक-एक अणु सोच-विचार करता है। इसलिए आशा-निराशा, हर्ष-शोक अथवा भय इन सबका भी मानव शरीर पर प्रभाव पडता है। डॉक्टर क्वेली का कथन है कि आवश्यकतानुसार पशुओं के शरीर में भी परिवर्तन हो जाता है। जिराफ की गर्दन लम्बी होने का कारण यही है कि उसके पूर्वजों को अपने भोजन के लिए घास की अपेक्षा पेड पर लगी पत्तियों पर जीवित रहना पडता था। उसके शरीर का अणु-अणु विचारवान था। इसलिए उसकी चारों टांगें उठकर लम्बी होती चली गईं ताकि उसका मुह पत्तियों तक पहुच सके। लेकिन पत्तियों तक तब भी मुह न पहुंचा तो उसने अपनी गर्दन को ही लम्बा करना आरम्भ कर दिया और होते-होते गर्दन इतनी लम्बी हो गई।

इसी प्रकार मानव शरीर के भी किसी अग को बुद्धि की आवश्यकता पडने पर शरीर के अणु अपने आकार में वृद्धि नहीं करते, बल्कि अधिक-से-अधिक भागों मे विभक्त होते जाते हैं और इस प्रकार उनकी सख्या इतनी बढ़ जाती है जिससे मानव शरीर के उस अंग का विकास हो जाता है। डॉक्टर क्वेली के कथनानुसार मानव शरीर में अणुओं के बढने से जो सवेदनशीलता होती है, उसे प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। शरीर के अणुओं में यह गुण उन्हें उत्तराधिकार में मिलते हैं, जिसे वह आने वाले सभी अणुओं को देते

चले जाते हैं और क्रमानुक्रम से यह गुण चलता चला जा रहा है। शरीर के अणु-अणु में स्वतन्त्र रूप से सोचने की शक्ति मौजूद है और शरीर के सभी अणु सगठित होकर शरीर की रचना के लिए कार्य करते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि मानव शरीर भिन्न-भिन्न अंगों का समूह ही नहीं है, बल्कि अणुओं का सुसगठित रूप है। आपने प्राय सुना होगा कि मानव शरीर के सभी अंग मन के अनुशासन में चलते हैं। शरीर के स्वस्थ एव रुग्ण होने का उत्तरदायित्व भी मन पर है। मन ही शरीर के अंग-प्रत्यग में आशा-आकांक्षा भर सकता है या फिर शरीर को नैराश्य से भरकर अकर्मण्य बना डालता है। मन से निकलने वाले इस प्रकार के विचारों का शरीर के जीवाणुओं पर बडा गहरा प्रभाव पडता है। अनेक शल्य चिकित्सकों का कहना है कि युद्ध में विजय प्राप्त करने वाले घायल सैनिकों के घाव जल्दी भर जाते हैं, जबकि पराजित हुए सैनिकों के घावों को ठीक होने में काफी समय लगता है। इससे यह सिद्ध होता है कि व्यक्ति के मन में यदि उत्साह है, हर्ष है, प्रफुल्लता है और अपनी विजय का विचार है तो उसका शरीर सदा स्वस्थ एव नीरोग बना रहेगा।

दूसरे शब्दों में हम इस बात को इस प्रकार भी कह सकते हैं कि मानव शरीर का प्रत्येक जीवाणु एक छोटा सा पावर स्टेशन है, जिसका सीधा सम्बन्ध मन से है। इसीलिए जो मन में उत्पन्न हुए क्रोध, ईर्ष्या, घृणा, आशा-निराशा, सुख-दुख, हर्ष-शोक आदि जैसे भाव फौरन शरीर के अणु-अणु में दिखाई पडते हैं। मन दुखी हुआ कि शरीर का एक-एक अणु दुखी हो जाता है और मन में हर्ष आया कि एक-एक अणु हर्षित हो उठता है। कितना महत्वपूर्ण अंश है हमारा शरीर, यह बात उपरोक्त उदाहरण द्वारा सिद्ध हो जाती है। इसके समर्थन के लिए किसी विशिष्ट प्रमाण की आवश्यकता नहीं है। आपने देखा होगा कि जब भी कभी आपके मन में आशा, उत्साह अथवा हर्ष के भाव उत्पन्न होते हैं, तब आपका शरीर भी फूल की तरह हल्कापन महसूस करता है और उस समय आपकी कार्यक्षमता भी बढ जाती है, लेकिन यदि मन में ही निराशा, दुख, घृणा या क्रोध के भाव हों तो शरीर की कार्यशक्ति कुण्ठित हो जाती है, जीवन का सारा उल्लास समाप्त हो जाता है, सारा उत्साह मर जाता है।

शल्य चिकित्सकों ने खोजों द्वारा यह पता लगाया है कि मन की निराशा के कारण ही शरीर पर कई जख्म हो जाते हैं। मानसिक आघात के कारण अनेक व्यक्ति शारीरिक रूप से अस्वस्थ हो जाते हैं। अपच, जिगर खराब रहना, हृदय रोग तथा पागलपन प्रायः ईर्ष्या, घृणा एवं क्रोध के कारण ही पैदा होते हैं। दूषित भावनाओं से मनुष्य के रक्त में एक प्रकार का विष घुलने लगता है, जिसके कारण व्यक्ति के शरीर में शक्ति नहीं रहती, साहस नहीं रहता तथा वह अकर्मण्य बन जाता है। यदि कोई रोगी व्यक्ति स्वास्थ्य-लाभ करना चाहता है तो निराशा एवं एकाकीपन से उसे हानि ही होगी, क्योंकि चिन्ता और निराशा शरीर के अणु-अणु से साहस एवं स्वास्थ्य को नष्ट कर डालती है, जिसके कारण शारीरिक व्यवस्था का क्रम विकृत हो जाता है शरीर में गड़बड़ी फैल जाती है और व्यक्ति अस्वस्थ हो जाता है।

आपने प्राय देखा होगा कि कई व्यक्ति किसी प्रियजन की मृत्यु का समाचार सुनते ही बेचैन हो जाते हैं। इसका कारण केवल यही है कि मृत्यु के समाचार से उत्पन्न शोक का प्रभाव केवल हृदय पर ही नहीं पड़ता, बल्कि शरीर पर भी पड़ता है। जबकि इसके विपरीत किसी हर्षदायक समाचार से केवल मन को ही प्रसन्नता नहीं होती बल्कि तन भी खिल उठता है और शरीर के अंग-प्रत्यग में भी नई स्फूर्ति, नया उत्साह तथा नया उल्लास जाग जाता है।

डॉक्टर क्वेली ने अनेक परीक्षणों के द्वारा यह भी सिद्ध किया है कि शरीर के प्रत्येक जीवाणु में कुछ छोटे आकार के जीवाणुओं का भी समूह रहता है जो लगातार विचार का काम करता है और मानव-शरीर का सम्पूर्ण नियत्रण निरन्तर उस छोटे-से जीवाणु के वश में रहता है। कुछ आधुनिकतम वैज्ञानिकों का तो यहां तक कहना है कि शरीर में उपस्थित जीवाणु का अपना अलग ही मस्तिष्क होता है, जिसके द्वारा वह जीवाणु उस अंग की चेष्टाओं पर ही अपना पूर्ण नियन्त्रण किए रहता है। मानव शरीर के मुख्य विचार-केन्द्र जैसे आमाशय, यकृत, प्लीहा, फेफड़े और शरीर का एक-एक अग अपने समूह की रक्षा, अपनी रक्षा, उनका विकास तथा उनकी कार्यशीलता में वृद्धि के लिए निरन्तर प्रयत्न करता रहता है। यही अणु-समूह शरीर के विषैले अंशों को शरीर से दूर करता रहता है। यकृत का प्रत्येक जीवाणु केवल इसी कार्य में हर समय लगा रहता है। मानव रक्त में ज्यों ही कोई विषैला तत्व प्रवेश पाता है, फौरन ही उसके आमाशय तथा पाचन-सस्थान के सभी अगों की कार्यशक्ति नष्ट होने लगती है और तब भोजन का भली-भाति समीकरण नहीं हो पाता यानी भोजन पच नहीं पाता। तब उसमें बदबू और विष उत्पन्न होने लगता है। रक्त उस विष को शुद्ध करने की कोशिश करता है, परन्तु यह दूषित विष रक्त को कमजोर कर देता है। धीरे-धीरे शरीर के सभी अणुओं की व्यवस्था बिगड़ जाती है। तब हृदय की गति भी धीमी पड़ने लगती है। किसी भी कार्य के प्रति मनुष्य के मन में रुचि नहीं रहती और तब उसका शरीर श्रान्त-क्लान्त तथा निस्तेज होकर उसका स्वभाव भी चिड़चिड़ा हो जाता है। उस समय शरीर के सभी जीवाणु शक्ति प्राप्त करना चाहते हैं और वह अपना संदेश मस्तिष्क तक पहुंचाते हैं। तब मस्तिष्क विचार करता है और व्यक्ति किसी डॉक्टर के पास जा पहुंचता है। फिर यदि वह धैर्यपूर्वक डॉक्टर पर विश्वास करके अपना इलाज कराता है तो शीघ्र ठीक हो जाता है और यदि चिन्तित रहकर जल्दी-जल्दी डॉक्टर अथवा दवाइयां बदलता रहता है तो उसका शरीर स्वस्थ होने की अपेक्षा और भी अधिक दुर्बल हो जाता है। कई बार तो ऐसा भी होता दिखाई देता है कि व्यक्ति डॉक्टर और दवाओं के कारण इतना धन और समय नष्ट कर डालता है कि उसके पास पौष्टिक भोजन करने के लिए एक पैसा भी नहीं रहता और विश्राम करने के लिए उसके पास समय नहीं बचता।

मनोवैज्ञानिक चिकित्सा का भी यही सिद्धान्त है। उसका आधार ही यही है कि सोचना केवल मस्तिष्क का ही कार्य नहीं है, बल्कि शरीर का एक-एक जीवाणु इस कार्य को करता है। इसका प्रमाण हैं वे अन्धे व्यक्ति, जो अपने हाथों की उंगलियों के अग्रभाग से ही पढ़ने का काम करते हैं। इससे सिद्ध होता है कि अन्धे व्यक्तियों का मस्तिष्क उनकी

उंगलियों के अगले भाग में स्थित है। इसी प्रकार देखना, सुनना, चखना, छूना, श्वास लेना, जागना, सोना आदि सभी चेष्टाए जीवाणुओं के द्वारा ही सम्पन्न होती हैं। मनुष्य चलता है तो चलता हुआ वह विचार नहीं करता बल्कि जीवाणु विचार करते हैं। सोते हुए भी—जबकि मस्तिष्क की सभी क्रियाएं बन्द रहती हैं—हृदय के विचारशील जीवाणु मस्तिष्क को चलाते रहते हैं। किसी दुर्घटना में जब मस्तिष्क पर चोट आती है और उसके अनेक तन्तु टूट जाते हैं, तब भी मस्तिष्क की विचारशक्ति पर बहुत कम असर होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि मस्तिष्क की विचारशक्ति वाले जीवाणु बहुत सम्पन्न होते हैं, बहुत क्रियाशील होते हैं। इस प्रकार व्यक्ति के सभी अग अपना-अपना कार्य ठीक ढग से करते रहते हैं। किसी एक वैज्ञानिक ने तो बडे मनोरंजक ढंग से इस सिद्धान्त की पुष्टि की है। उसने एक मेढक को पकडकर उसका सिर काटकर अलग कर दिया। उसके बाद उसकी एक टांग पर तेजाब की एक बूंद डाली तो मेढक ने दूसरी टांग से उस टांग पर पड़ी तेजाब की बूद को हटाने की कोशिश की। इससे भी सिद्ध होता है कि विचार करने की शक्ति केवल मस्तिष्क तक ही सीमित नहीं है, बल्कि शरीर के एक-एक अंग में स्थित है। मस्तिष्क तो शरीर का एक छोटा-सा स्थान है और उसके कुछ सीमित कार्य हैं। शेष शरीर के अन्य अंगों का काम मस्तिष्क को नहीं करना पड़ता। शेष शरीर के उन सभी अंग-प्रत्यंगों की अपनी-अपनी प्रयोगशालाएं हैं, जिनके द्वारा वह मस्तिष्क को बिना कुछ कहे अपना काम आप करता रहता है। उन प्रयोगशालाओं के जीवाणु इतने बुद्धिमान हैं कि शेष शरीर का प्रत्येक अग अपना-अपना कार्य करता रहता है।
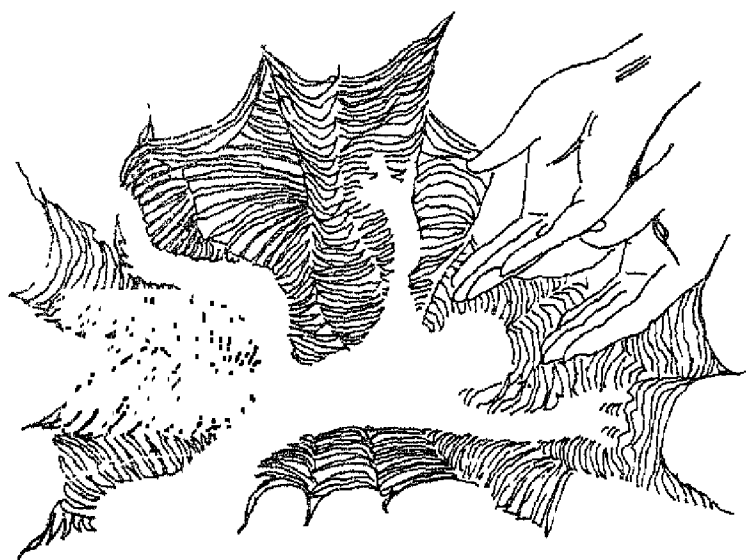
मनुष्य का केवल मस्तिष्क ही नहीं, प्रत्येक अंग, प्रत्येक अणु सोचता है।

अब हम आपको यह बताते हैं कि प्रत्येक जीवाणु दूसरे जीवाणु को प्रभावित भी करता है। उदाहरण के लिए कोई व्यक्ति भोजन करने बैठता है कि अचानक ही उसे अपने किसी प्रियजन की मृत्यु का समाचार मिलता है, जिसे सुनकर वह स्तब्ध रह जाता है। तब उसकी भूख समाप्त हो जाती है। यह सब कैसे होता है? मृत्यु के समाचार का प्रभाव तो उसके मस्तिष्क पर पड़ा था, पर उसकी भूख क्यों समाप्त हो गई? ऐसा इसलिए हुआ कि विचारों का प्रभाव केवल मस्तिष्क पर ही नहीं होता, बल्कि शरीर के प्रत्येक अंग पर होता है।
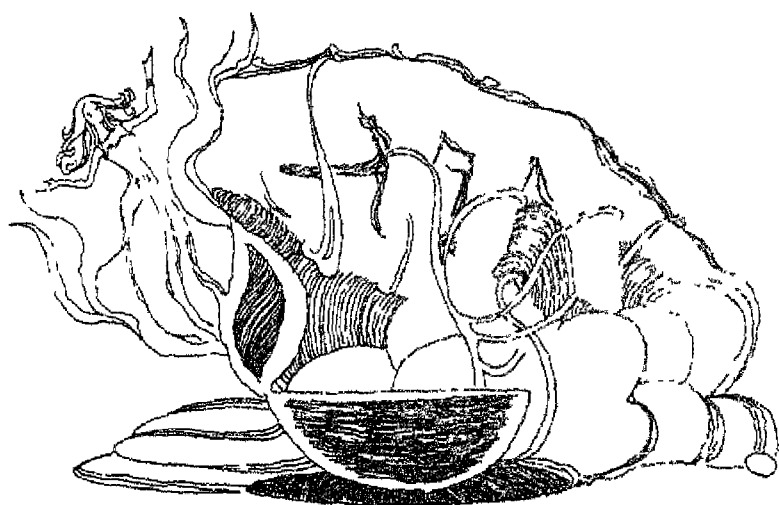
आशा का दीप मनुष्य के प्रत्येक अणु को सोचने की शक्ति प्रदान करता है।

यदि आप अपने शरीर की कार्यकुशलता बनाए रखना चाहते हैं तो आपको आशा, उल्लास और आनन्दमय विचारों को ही अपने मन में स्थान देना होगा और निराशा, दुख या हीनभाव पैदा करने वाले विचारों से अपने को दूर रखना होगा। इसके लिए सर्वोत्तम उपाय यही है कि आप अपने मन में आशा की ज्योति जगाएं, अपने विश्वास को बनाए रखें, सदा अपने को स्वस्थ अनुभव करें और यह मानकर चलें कि जब उस सर्वशक्तिमान परमात्मा की शक्ति आपके पास है और जब आपके उससे अटूट सम्बन्ध हैं तो फिर आप अस्वस्थ कैसे रह सकते हैं? केवल सोचने से ही काम नहीं चलेगा, उस सर्वशक्तिमान से अपना सम्बन्ध बराबर बनाए रखना होगा। तभी उसकी शक्ति आप में प्रवाहित हो सकेगी और तभी आप पूर्णतः स्वस्थ रह सकेंगे।

सत्यवादिता का महत्त्व

पोप ने कहा है–'एक सत्यवादी व्यक्ति परमात्मा की सर्वोत्तम कृति है।' बर्न्स ने लिखा है–'व्यक्ति कितना ही निर्धन क्यों न हो, लेकिन ईमानदारी के बल पर वह लोगों का सरताज होता है।' हेनरी क्ले ने लिखा है–'मैं राष्ट्रपति बनने के बजाय सत्यवादी बनना अधिक पसन्द करूंगा?

प्रेजिडेंट जॉन किवन्सी एडम्स के बेटे ने ज्यों ही अपने पिता के डैस्क में से एक पत्र लिखने के लिए कुछ कागज निकाले कि प्रेजिडेंट महोदय ने तुरन्त उसे रोका और बोले–"यह कागज वापस रख दो। ये सरकारी कागज हैं। मेरे अपने कागज डैस्क के उस ओर पड़े हैं। वहां से ले लो। निजी काम के लिए मैं सदा वही कागज इस्तेमाल करता हूं।"

सत्यवादी आदमी ईश्वर की सबसे महान कृति है।

प्रेजिडेंट एडम्स अपनी सत्यनिष्ठा और समय की पाबन्दी के लिए बहुत प्रसिद्ध थे राज्यसभा भवन में उनका आगमन ही इस बात का संकेत था कि कार्रवाई का समय हो गया है। यदि वह किसी से मिलने का कोई समय निश्चित कर लेते थे तो उसे भी अवश्य ही निभाते थे। उनका कहना था कि आलस्यवश किसी अन्य व्यक्ति का समय नष्ट करना उतना ही बुरा है, जितना चोरी से किसी का रुपया निकाल लेना।

अब्देल कादिर को यात्रा के समय विदाई देते समय उसकी मा ने रास्ते के खर्च के लिए चालीस दीनार दिए और साथ-ही-साथ आशीर्वाद देते हुए कहा—"जाओ बेटे, लेकिन मुझसे वायदा करके जाओ कि कभी झूठ नहीं बोलोगे। शायद अब हमारी मुलाकात कयामत के दिन ही होगी।" मां से यह वायदा करके अब्देल कादिर अपनी जीविका की खोज में निकल पडा। अभी उसे यात्रा करते हुए कुछ दिन हुए थे कि लुटेरों ने उनके काफिले पर हमला कर दिया और तब उनमें से एक ने अब्देल कादिर से पूछा—बता, "तेरे पास कितना रुपया है?"

"मेरे चोगे में चालीस दीनार सिले हुए हैं।" अब्देल कादिर ने उत्तर दिया, जिसे सुनकर लुटेरा हंस पड़ा। तभी एक दूसरे ने उसे डांटते हुए पूछा—"सच-सच बता, तेरे पास कितना रुपया है?"

अब्देल कादिर ने बड़ी स्पष्टता और सरलता से अपने पहले वाले उत्तर को ही दोहरा दिया। किन्तु उस पर किसी ने विश्वास नहीं किया। तब लुटेरों के सरदार ने, जिसने अपने साथियों को लड़के से बातें करते देख लिया था, अब्देल कादिर को आवाज दी—"इधर आओ लडके। तुम्हारे पास कितना रुपया है?"

अब्देल कादिर ने उत्तर दिया—"मैं तुम्हारे दो आदमियों को पहले ही बता चुका हू कि मेरे पास चालीस दीनार हैं, जो मेरे चोगे में सिले हुए हैं, लेकिन लगता है कि इन्हें मेरी बात पर यकीन नहीं आया।"

"इसका चोगा फाड़ डालो।" लुटेरों के सरदार ने आदेश दिया और जब उसका चोगा फाड़ा गया तो उसमें चालीस दीनार सिले हुए थे। तब डाकुओं के सरदार ने आश्चर्यचकित होते हुए कहा—"तुमने यह सच-सच क्यों बता दिया कि तुम्हारे पास चोगे में चालीस दीनार सिले हुए हैं?"

अब्देल कादिर ने उत्तर दिया—"मैं अपनी मां से वायदा करके आया हूं कि मैं कभी झूठ नहीं बोलूगा। क्या मैं अपनी मा से किया हुआ वायदा तोड़ दूं?"

इस पर डाकुओं का सरदार बोला—"लड़के! तुम अपनी इस छोटी-सी उम्र में अपनी मां के प्रति, अपने कर्तव्य की इतनी परवाह करते हो, जबकि मैं इतनी उम्र गुजार देने के बाद भी परमात्मा के प्रति अपने कर्तव्य को भूला हुआ हूं। लाओ, मुझे अपना हाथ दो, ताकि मैं इसे चूमकर तौबा कर लू।" तब उसने उस लड़के का हाथ थामकर सचमुच अपने गुनाह की माफी मांगी और उसके बाद उसके साथियों ने भी एक-एक करके

परमात्मा से अपने गुनाहों की माफी मागी। सत्यवादिता एव सत्य चाहे बच्चों में हो, अपने आस-पास रहने वालों पर अवश्य प्रभाव डालता है।

मिराब्यू का कथन है—'यदि सत्यवादिता का अस्तित्व न रहे तो भी हमें इसकी खोज करनी चाहिए, क्योंकि अमीर बनने का यही सबसे अच्छा साधन है।'

किसी देहाती पाठशाला में अध्यापक ने छात्रों को स्पैलिंग ठीक करने के लिए एक-एक कठिन शब्द दिया। कक्षा में अठारह छात्र थे, एक-एक करके सभी छात्रों से पूछा गया, लेकिन कोई भी उस शब्द की स्पैलिंग न बता सका। जब अठारहवें छात्र का नम्बर आया तो उसने उस शब्द की सही स्पैलिंग बता दी। आश्चर्य की बात तो यह थी कि वह छात्र अपनी कक्षा में सबसे छोटा था, लेकिन अध्यापक ने उस छात्र को सबसे आगे बैठने का आदेश दिया और उस शब्द को ब्लैकबोर्ड पर लिख दिया, ताकि सभी छात्र उस शब्द को भली प्रकार समझ लें। तभी वह नन्हा-सा बालक बोला—"श्रीमान जी, मैंने इस शब्द की स्पैलिंग इस तरह से नहीं कही थी, मुझसे भूल हो गई थी।" यह कहता हुआ वह नन्हा बालक उठकर फिर अपनी पुरानी जगह पर आ बैठा। आगे आते हुए उसने इतनी शीघ्रता नहीं की थी, जितनी वापस जाने में की थी। वह नन्हा बालक इतना सत्यनिष्ठ था कि जो काम उसने नहीं किया, उसका श्रेय पाने के लिए भी वह तैयार नहीं था।

एक बड़ा पादरी अपने अपराधों को स्वीकार करके प्रायश्चित करना चाहता था। उसकी यह आंतरिक इच्छा थी कि इस प्रकार स्वयं को अपराधी सिद्ध करके वह भी महात्मा बनने की ख्याति अर्जित कर सकता है। एक दूसरे पादरी के सम्मुख, जब वह अपने अपराधों को स्वीकार करने के लिए पहुचा तो बोला—"मैं अनेक प्रकार से पापों का भागी रहा हू। मैंने मिथ्या दम्भ, ईर्ष्या और प्रतिशोध के वशीभूत होकर सभी प्रकार के कुकर्म किए हैं।" तब जिस पादरी के सम्मुख वह अपने अपराधों को स्वीकार कर रहा था, उसने उत्तर दिया—"ठीक है, आप जो कुछ भी कह रहे हैं, वह सत्र ही है।" अचानक वह पादरी जो अपने अपराधों को स्वीकार करके महात्मा बनना चाहता था, क्रोध में भरकर बोला—"ऐ मूर्ख! यह न समझना कि मैं जो कुछ कह रहा हू, वह सब सच है।"

श्रोता पादरी ने यह सब सुनकर कहा—"अरे! तो क्या तुम झूठ भी बोलते हो?" यह सुनकर उस पादरी का सिर शर्म से झुक गया।

इसी प्रकार एक व्यक्ति ने अपने वकील से कहा—"मिस्टर जोन्स, मुझे बोस्टन में रह रहे एक सज्जन के साठ पौण्ड देने हैं, लेकिन इस समय मेरी स्थिति ऐसी नहीं है कि मैं साठ पौण्ड दे सकू। मैं चाहता हूं कि जब तक मैं इस रकम का प्रबन्ध न कर लूं, आप कोर्ट से किसी प्रकार इस रकम की अदायगी स्थगित करा दें।"

वकील मिस्टर जोन्स ने उत्तर दिया—"ठीक है, ऐसा ही होगा।"

कचहरी लगी तो वकील साहब ने कहना आरम्भ किया—"श्रीमान! इस पुर्जे पर जो हस्ताक्षर हैं, वह मेरे मुवक्किल के नहीं, बल्कि जाली हैं।" इस तर्क का आशय यह था

कि हस्ताक्षरों का मिलान करने के लिए गवाहों को बुलाया जाता, जिससे उनके मुवक्किल को रकम जुटाने के लिए पर्याप्त समय मिल जाता, लेकिन वकील के इतना कहते ही मुवक्किल ने गरजकर कहा—"वकील साहब! मैंने इसलिए तो आपको अपना वकील नहीं बनाया कि आप कचहरी में जाकर झूठ बोलें। यह हस्ताक्षर मेरे हैं और मैं कसम खाकर यह कहता हू कि मुझे रकम लौटाने में कोई एतराज नहीं है। मैं रुपया देना चाहता हू, लेकिन मेरे पास इस समय पैसे नहीं हैं, इसलिए मुझे थोडा-सा समय चाहिए।"

अपने मुवक्किल की गरज सुनकर वकील साहब बगलें झांकने लगे और मुवक्किल को समय मिल गया।

इसी सम्बन्ध में एक और उदाहरण देखिए—एक लड़का किसी पंसारी के पास जाकर बोला—"मुझे नौकरी चाहिए।"

पसारी ने पूछा—"यदि मैं तुम्हें नौकरी पर रखूं तो क्या तुम वही करोगे जो मैं कहूंगा?"

लडका बोला—"बिल्कुल वही कहूगा।"

"अगर मैं कहूं कि तुम घटिया चीनी को भी अच्छी चीनी कहो तो क्या तुम कहोगे?"

"जी हा, क्यों नहीं?"

"और यदि मैं यह कहूं कि यह कॉफी बहुत बढ़िया है और जबकि उसमें मिलावट हो तो?"

"मैं उसे भी बढिया बताऊगा।"

"और काफी दिनों से दुकान में पडे हुए मक्खन को ताजा कहकर बेचने को कहू तब?"

"उसे एकदम ताजा कहूंगा।" लड़के ने उत्तर दिया।

लड़के के इस प्रकार के उत्तर सुनकर पंसारी चौंक गया। उसने पूछा—"अच्छा बताओ, वेतन क्या लोगे?"

लड़के ने उत्तर दिया—"सौ डॉलर प्रति सप्ताह।"

पसारी उसका उत्तर सुनकर हैरान रह गया और बोला—"सौ डॉलर प्रति सप्ताह!"

लड़के ने बडी शान्तिपूर्वक उत्तर दिया—"जी हां, सौ डॉलर प्रति सप्ताह और दो सप्ताह के बाद कमीशन भी लेना आरम्भ कर दूंगा। क्या आपको पता नहीं, पहले दर्जे के झूठे महंगे भी होते हैं? यदि आपको पहले दर्जे के झूठे व्यक्ति की आवश्यकता है तो उसके लिए वेतन भी उतना ही देना होगा, लेकिन यदि आपको केवल कर्मचारी की आवश्यकता है तो मैं केवल तीन डॉलर प्रति सप्ताह पर नौकरी करने के लिए तैयार हू।"

इस प्रकार उस लड़के ने उस पंसारी को अपने विचारों के अनुकूल मोड़ लिया और केवल तीन डॉलर सप्ताह पर ही नौकरी करने लगा।

एक नया व्यापारी किसी अनजाने गांव में पहुचा तो देहाती व्यक्ति उसके पास सामान

देखने आने लगे, लेकिन किसी ने भी उससे कुछ न खरीदा। अन्त में गाव का जमींदार उसके पास सामान देखने पहुचा। दुआ-सलाम के बाद उसने व्यापारी का सामान देखना आरम्भ किया और देखते-देखते उसने अपने लिए एक कम्बल और अपनी पत्नी के लिए एक मलमल का थान पसन्द किया और व्यापारी से बोला—"तुम्हें इस माल के बदले में चार फर वाली खालें मिल जाएगी।" यह कहकर वह सामान लेकर अपने घर चला गया और अगले दिन अपने कुछ मित्रों के साथ उस व्यापारी के पास आया और व्यापारी से बोला—"लो भाई, यह चार फर वाली खालें।" और यह कहता हुआ अपनी गठरी में से चार खालें निकालकर व्यापारी को देने लगा। फिर कुछ रुककर उसने अपनी गठरी से पाचवीं खाल भी निकाली जो बहुत बढिया और कीमती थी और उसे भी व्यापारी को देने का आग्रह करने लगा, लेकिन व्यापारी ने उसे लेने से इनकार कर दिया और बोला—"मेरे माल के बदले में मुझे केवल चार ही खालें चाहिए थीं और वह मुझे मिल गईं। इससे अधिक मुझे और कुछ नहीं चाहिए।" कुछ देर तक दोनों एक-दूसरे से आग्रह करते रहे, लेकिन व्यापारी ने वह पाचवीं खाल स्वीकार नहीं की। तब जमींदार ने उस पांचवीं खाल को अपनी गठरी में बाध लिया। उसने व्यापारी को ऊपर से नीचे तक देखा और दुकान से बाहर खडे अपने मित्रो को आवाज दी—"आओ भाइयो! इस व्यापारी से जरूर कुछ खरीदो। यह एक बढ़िया व्यापारी है, धोखेबाज नहीं है और इसका हृदय भी बहुत विशाल है।" इसके बाद व्यापारी की ओर देखते हुए उससे बोला—"यदि तुम पाचों खाल रख लेते तो मैं अपने इन सभी साथियों से यही कहता कि तुम्हारे साथ कोई व्यापार न करे, क्योंकि इस तरह के व्यापारियों को हम अपने यहा टिकने नहीं देते, लेकिन अब हम दोनों आपस में मित्र बन गए हैं।" शाम होने से पहले ही उस व्यापारी का लगभग सारा माल बिक गया तथा उसका गल्ला पैसों से भर गया और उसके पास खालों का भी ढेर लग गया।

न्यू ऑरलियन्स में जैकअप बारकर नामक एक बहुत अमीर सौदागर था। उसका कुछ सामान एक जहाज में लदकर आ रहा था, लेकिन जहाज के पहुंचने में कुछ देर हो रही थी। अत. सौदागर नए सिरे से जहाज का बीमा कराने के लिए बीमा कम्पनी में आ गया। जहाज की सुरक्षा का खतरा अधिक था, इसलिए बीमा कम्पनी ने किश्त की जो रकम मांगी वह बारकर को कुछ अधिक लगी। वह कम रकम देना चाहता था। सौदा तय न हो सका और बारकर महोदय बीमा कम्पनी के दफ्तर से बाहर आ गए। उसी रात बारकर महोदय को यह समाचार मिला कि जहाज नष्ट हो गया है। और कोई होता तो न जाने क्या हो जाता, परन्तु बारकर महोदय ने केवल 'बहुत अच्छा' कहकर इस बात को टाल दिया। अगले दिन प्रात काल अपने कार्यालय जाते हुए बारकर महोदय बीमा कम्पनी के कार्यालय के पास रुके, लेकिन अपनी कार से बाहर न निकले। इस पर कम्पनी का सैक्रेटरी दौडता हुआ उनके पास आया तो बारकर महोदय उससे बोले—"मेरे पास जहाज के बारे में आ चुका है अत बीमे के कागज तैयार करने की कोई

आवश्यकता नहीं।" यह सुनकर सैक्रेटरी भागता हुआ कार्यालय में गया और फौरन लौटकर बोला—"श्रीमान, हम तो पॉलिसी तैयार कर चुके हैं, अब आप अपना वचन नहीं लौटा सकते। कल शाम जब आप चले गए थे तो आपके द्वारा बताई हुई किश्त पर ही सौदा कर लिया था और सारे कागज तैयार कर लिए थे। अब तो हमारी कम्पनी आपके जहाज का उत्तरदायित्व ले चुकी है और अब आपको यह पॉलिसी लेनी ही होगी।" इसी बीच बीमा कम्पनी का एक क्लर्क पॉलिसी के वह सारे कागज ले आया जिनकी स्याही अभी सूखी भी न थी। उसे देखकर बारकर महोदय बोले—"ठीक है दोस्त, अगर आपकी यही इच्छा है तो मैं इस पॉलिसी को स्वीकार कर लेता हूं।" और यह कहकर उन्होंने वह कागज अपनी जेब में डाल लिया।

मार्क ट्वेन ने लिखा है—किसी निर्धन व्यक्ति के पास पक्षियों के सम्बन्ध में एक बहुत बढ़िया पुस्तक थी, जो उसको केवल सौ डॉलर में बेचने को तैयार था, हालांकि बाजार में उसका मूल्य एक हजार डॉलर था। खरीदार इस सौदे पर बड़ा प्रसन्न था, लेकिन इस खरीदार का मुकाबला हेमण्ड ट्रम्बल से कीजिए, जिसकी कथा कुछ इस प्रकार है। किसी बूढ़ी महिला के पास बाइबल की एक प्रति थी, जिसे वह ट्रम्बल को केवल सौ डॉलर में बेचने को तैयार थी, लेकिन उत्तर में ट्रम्बल ने उस बूढ़ी महिला को बताया कि यदि पुस्तक सम्पूर्ण हो तो बाजार में बाइबल की उस प्रति का मूल्य एक हजार डॉलर मिल सकता है और वह उस पुस्तक को ब्रिटिश अजायबघर में एक हजार डॉलर में बिकवा सकता है। पुस्तक सचमुच पूरी थी और इस प्रकार उस बूढ़ी महिला को एक हजार डॉलर मिल गए। यह था व्यवसाय का उच्चतम मापदण्ड, जिससे मानवता का सिर गौरव से ऊंचा उठ जाता है।

आज के इस वर्तमान युग में वस्तुओं में मिलावट की जो स्थिति है, उसका चित्रण किसी ने इन शब्दों में किया है—चार मक्खियां भूखी थीं। उनमें से एक किसी ऐसी मिठाई पर जा बैठी, जिसे देखते ही भूख जाग उठती। मक्खी ने तृप्त होकर मिठाई खाई, किन्तु उसकी अंतड़ियों में सूजन आ गई और वहीं मर गई। वास्तव में मिठाई में जहरीला रंग मिला हुआ था। दूसरी मक्खी ने पहली मक्खी का यह हाल देखा तो वह किसी मैदे वाले की दुकान पर जा बैठी, लेकिन मैदा खाने के बाद उसके पेट में दर्द हुआ और वह भी तड़पकर मर गई। मैदे में फिटकरी मिली हुई थी।

तीसरी मक्खी ने किसी दूध वाले की दुकान पर जाकर अपनी भूख मिटाई, लेकिन दूध में चॉक मिला था, जिसके कारण वह भी मर गई।

तब अपनी सभी सहेलियों को मौत के मुंह में जाते देखकर चौथी मक्खी किसी दुकान पर पड़े कागज पर बैठकर विष चाटने लगी। उसने सोचा कि मित्रों के बिना मर जाना ही अच्छा है, लेकिन वह ज्यों-ज्यों विष चूसती जाती थी, तन्दुरुस्त और स्वस्थ होती जाती थी। उसने तो सोचा था कि विष खाकर ही जान दे दूंगी, लेकिन उस विष में भी मिलावट थी। अतः वह मर न सकी।

आज अनेक व्यक्ति धोखे को बढ़ावा दे रहे हैं, जबकि आवश्यकता है लोगों को धोखे से बचाने की। ऐसे लोगों की, जो अमरीकन माल को ब्रिटिश माल कहकर न बेचें। लोगों को धोखा न दें। आज संसार को आवश्यकता है, उन चिकित्सकों की, जो रोग को न समझते हुए साफ इनकार कर दें और कह दें कि वह उसका उपचार नहीं कर सकते, लेकिन अनुचित दवाओं का प्रयोग करके लाभ न उठाएं। आज आवश्यकता है उन लोगों की, जो अनुचित साधनों को अपनाकर जनता को धोखा न दें। आज आवश्यकता है उन वकीलों की, जो मात्र धन कमाने के लिए लोगों को मुकदमेबाजी में न फंसाएं। आज आवश्यकता है उन उपदेशकों की, जो बड़े-बड़े वेतन प्राप्त करने की अपेक्षा अपनी अन्तरात्मा की आवाज सुनें और उसके अनुसार आचरण करके केवल कोरी वाह-वाही लूटने की ओर ही ध्यान न दें। आज आवश्यकता है ऐसे संवाददाताओं की, जो केवल सम्पादक की ही सन्तुष्टि के लिए भद्दे और अपमानजनक लेख न लिखें। आज आवश्यकता है उन व्यक्तियों की, जो किसी भी प्रकार की बेईमानी के काम को लाभकारी न समझें तथा यह कह सकें कि वह इस काम को नहीं करेंगे, क्योंकि यह गलत है।

ए० टी० स्टीवार्ट ने यह दृढ़ सकल्प किया हुआ था कि उसकी दुकान पर सदा सच ही बोला जाए, चाहे उसका परिणाम कैसा भी हो। किसी भी क्लर्क को यह आज्ञा न थी कि वह किसी दोष को छिपाए या हेराफेरी करे। एक बार उन्होंने किसी कर्मचारी से नए नमूने का बहुत-सा माल खरीदने के बारे में उसकी सहमति पूछी। कर्मचारी ने बताया कि वह माल घटिया था और कुछ नमूने तो बिल्कुल बेकार थे। कर्मचारी अभी स्टीवार्ट के साथ बातचीत कर ही रहा था कि एक ग्राहक आ गया, जिसने नए नमूने का बढिया माल दिखाने के लिए कहा। वही कर्मचारी तुरन्त बोल उठा—"जी हां, हमारे यहां अभी-अभी बढ़िया माल आया है।" और यह कहकर उसने वही माल उस ग्राहक को प्रस्तुत कर दिया जिसकी बुराई अभी थोड़ी देर पहले वह अपने मालिक के सामने कर रहा था। ग्राहक ने माल की विशेषताओं को सुनते हुए उस माल की बहुत बड़ी खरीद का ऑर्डर कर्मचारी को दे दिया। स्टीवार्ट किंकर्तव्यविमूढ़ से वह सब कुछ देख रहे थे कि उनसे न रहा गया और वह ग्राहक से कह उठे—"महाशय! कृपया इस माल को और अधिक सावधानी से जांचकर ही आप आदेश देने की कृपा करें।" इसके बाद कर्मचारी की ओर मुंह घुमाकर बोले—"खजांची के पास जाकर अपना हिसाब चुका लो, क्योंकि अब मैं तुम्हें दुकान पर नहीं रखूंगा।"

किसी दुकान में एक महिला ने प्रवेश किया, लेकिन कुछ देर सामान देखने के बाद वह बिना कुछ लिए दुकान से चली गई। दुकानदार ने नौकर से पूछा—"तुम उस महिला को कुछ भी नहीं बेच सके?"

नौकर ने उत्तर दिया—"जनाब, उसने कोई विशेष किस्म का माल चाहा था, जो हमारे यहां नहीं है।"

दुकानदार ने कहा—"तुमने अमुक माल दिखाकर क्यों नहीं कह दिया कि यह वही है।"

नौकर ने उत्तर दिया—"क्योंकि वह माल वैसा नहीं है, इसलिए मैंने उसे ऐसा नहीं कहा।"

दुकानदार की त्योरी चढ़ गई और उसने नौकर से कहा—"अजीब आदमी हो। तुम मेरे यहा नहीं निभ सकते।"

नौकर ने उत्तर दिया—"ठीक है श्रीमान, यदि मुझे झूठ के सहारे ही नौकरी करनी पड़ेगी तो मैं नहीं करूगा।" वह वहां से चला गया, लेकिन कुछ दिन बाद यही ईमानदार कर्मचारी एक बहुत बडा धनाढ्य व्यापारी बन बैठा।

बीचर का कहना है—'ऐसे बहुत कम व्यक्ति हैं जो व्यापार में नैतिकता पर ध्यान देते हैं। यदि आपके मन में कम मूल्य देकर अधिक माल लेने की वृत्ति है तो इसका स्पष्ट अर्थ है कि आप दुकान को हानि पहुंचाते हैं, जबकि उचित मूल्य से कम पर खरीदना सरासर बेईमानी है।'

किसी दुकान पर कुछ अच्छे कार्ड रखे थे। उन्हें देखकर एक महिला कहने लगी—"कितने खूबसूरत कार्ड हैं और खासकर वह जिस पर लिखा है, ईमानदारी सबसे बढिया नीति है।"

"जी हा, मैं इन्हें यूरोप से लाया हू और मैंने इस पर कोई कर भी नहीं दिया है।" दुकानदार ने उत्तर दिया।

देखा आपने, किस-किस प्रकार के लोग इस दुनिया में मौजूद हैं।

कार्लाइल कहा करता था—"हमें ऐसे लोगों की आवश्यकता है, जो सिर से पैर तक हर ओर से अच्छे हों।"

किसी किसान ने सेबों के कुछ टोकरे अपने विक्रेता के पास भेजे। सभी सेब बढिया किस्म के थे और हर टोकरे पर किसान ने अपना नाम लिख दिया और साथ ही अपने खरीदारों से प्रार्थना भी की थी कि जब सेब उनके पास पहुंचें तो वह उसे सूचित करें कि उनकी किस्म कैसी थी तथा लोगों ने उसे कितना पसन्द किया। कुछ दिन बाद खरीदार ने किसान को पत्र द्वारा सूचित किया कि सभी सेब बढ़िया किस्म के थे और साथ ही यह भी लिखा कि भविष्य में जितने सेब उसके पास हों, सब उसी खरीदार के पास भिजवा दिया करे।

एक व्यक्ति का कहना है—मैं सदा ही सत्यनिष्ठ रहा, लेकिन कभी भी सफल नहीं हो सका। उस व्यक्ति से हमारा यह कहना है कि वह जो कुछ भी कहता है वह ठीक है। जो ईमानदारी निषेधात्मक हो, उसकी कोई कीमत नहीं होती, उसका कोई फल नहीं मिलता। किसी चपरासी को कार्यालय में उन्नति इसलिए नहीं मिलती कि वह डाक की टिकटें नहीं चुराता, बल्कि इसलिए मिलती है कि वह पूरी सावधानी, योग्यता, साहस और कुशलता से कार्य करता है।

मनुष्य आपस में एक-दूसरे को धोखा देता है और झूठ बोलता है। यदि प्रकृति भी

इसी प्रकार धोखा देने लगे अथवा झूठ बोलने लगे तो क्या पहाड समुद्र नदियां सभी धोखेबाज नहीं हो जाएंगे? यदि हम खेत में बीज डालें और उसमें बढ़िया फसल उपजने के स्थान पर खेत मरुस्थल बन जाए तो हमारी क्या स्थिति होगी?

एक प्रसिद्ध बेलचे बनाने वाली कम्पनी के अध्यक्ष का कहना था—मेरे जीवन के वह चौबीस वर्ष बड़े ही सुखद थे, जब मैं बेलचे बनाया करता था। मैं जब कभी काम-धन्धे के लिए कहीं जाता तो वहीं मेरे परिचित निकल आते। हमारे कारखाने का नाम सत्यवादिता एव ईमानदारी का प्रतीक माना जाता था। हमारा माल ससार भर में जाता था, क्योंकि हम बढिया और मजबूत माल बनाते थे और बजाय इसके कि हम माल बेचने जाते, ग्राहक खुद हमारे पास माल लेने आते थे।

एक बार इंग्लैंड और उसके उपनिवेशों के बीच कुछ गडबड़ी पैदा हो गई तो उस समय इग्लैंड के सम्राट जार्ज तृतीय ने अपने कुछ कमिश्नर उपनिवेशों में भेजे, ताकि वे अपने प्रभाव से उन कठिनाइयों को समाप्त कर सकें। तभी न्यूजर्सी के मिस्टर रीडसे से कमिश्नर ने कहा—"यदि आप अपने प्रभाव से इग्लैंड और उपनिवेशों के मध्य हुई कठिनाइयों को समाप्त कर सके तो हम आपको दस हजार पौण्ड भेंट करेंगे।" उत्तर में रीडसे महोदय ने कहा—"मैं बिक्री की वस्तु नहीं हू और जो कुछ भी हू उसे खरीदने के लिए ब्रिटिश साम्राज्य की समूची सम्पत्ति भी कम है।"

'न्यूयार्क टाइम्स' जैसे सुविख्यात समाचार पत्र के मालिक जार्ज जोन्स को जब यह लालच दिया गया कि वह सम्पानी विद्रोहियों के विषय में अपने समाचार पत्र में कोई खबर न छापे, अपितु मौन धारण कर ले तो उन्होंने जो उत्तर दिया, वह स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है। उन्होंने कहा—"शायद इससे बढ़कर मेरे लिए शैतान भी बोली नहीं लगा सकेगा।" उन्होंने मुंहमांगी रिश्वत को ठोकर मार दी और अपराधियों के प्रमाणों के प्रकाशन में एक दिन की भी देर न की, जिसके परिणामस्वरूप सभी भ्रष्टाचारी नेताओं को देश-निकाला दे दिया गया।

इसी प्रकार अब्राहम लिंकन के पास एक व्यक्ति अपना जायदाद सम्बन्धी मुकदमा लेकर आया तो लिंकन ने उससे कहा—सबसे पहले आपको तीस हजार डॉलर पेश करने होंगे तो मुवक्किल ने उत्तर दिया कि वह इतने रुपये का प्रबन्ध नहीं कर सकता। इस पर लिंकन ने रुपया जमा कराने का जिम्मा अपने सिर ले लिया और एक बैंक के कर्मचारी को कहा—"हमें एक कानूनी दस्तावेज तैयार करना है, जिसके लिए तीस हजार डॉलर की जरूरत है और यह रकम मैं आपको एक-दो घण्टे में लौटा दूंगा।" खजाची ने तीस हजार डॉलर बिना कोई रसीद लिए लिंकन को पकड़ा दिए। इसका कारण यही था कि खजांची को लिंकन और उसकी सच्चाई पर पूरा भरोसा था। लिंकन के विरोधी वकील ने भी यह कहा था कि लिंकन को जब तक यह विश्वास नहीं हो जाता कि उनका मुवक्किल अवश्य ही जीत जाएगा, वह मुकदमे को नहीं लेते थे। इसका प्रभाव यह पड़ा

कि लिंकन जब भी कोई मुकदमा अदालत में लेकर जाते तो अदालत में विपक्षी वकील, ज्यूरी के सदस्य तथा दर्शक सभी यह समझ लेते थे कि लिंकन जिस मुवक्किल का मुकदमा लेकर आए हैं, वह अवश्य ही सच्चा है और उस मुकदमे में अवश्य ही उनकी विजय होगी। जरा सोचिए कि लिंकन के विरोधी वकील भी उसकी उपस्थिति को सच मानते थे। उन्हें भी लिंकन पर पूरा भरोसा था। एक बार किसी मुदकमे के दौरान लिंकन को यह पता चला कि उनके मुवक्किल ने अपने पक्ष को सच्चा बताकर उन्हें धोखा दिया है। उन्होंने उस मुकदमे में बहस करने से इनकार कर दिया। तब लिंकन के एक सहकर्मी ने वह मुकदमा अपने हाथ में ले लिया और उसे जीत भी लिया। मुकदमा लड़ने की नौ सौ डॉलर फीस भी ले ली, लेकिन लिंकन ने उसमें से अपना भाग लेने से इनकार कर दिया। ऐसा था लिंकन का चरित्र। उसकी तो बस यही इच्छा थी कि हमेशा सत्य की ही विजय हो और चरित्र में सन्तुलन बना रहे।

जिस समय लिंकन एक मामूली दुकानदार थे, एक गरीब महिला उनसे कुछ सामान खरीदकर ले गई। पैसे लौटाने में कुछ भूल हो गई, लेकिन लिंकन को जैसे ही इस भूल का पता चला, वह दुकान बन्द करके रात के अंधेरे में छः मील पैदल चलकर उस महिला के घर जा पहुंचे और जब उसे वह राशि सौंप दी, तब कहीं उनको चैन मिला। लिंकन ने यह प्रतीक्षा नहीं की कि जब कभी वह महिला दोबारा आएगी, तब उसकी बकाया रकम लौटा देंगे। ईमानदारी का इससे बढ़कर और क्या प्रमाण हो सकता है? इसी के कारण तो लिंकन का नाम अमरीकी इतिहास में सर्वोपरि लिखा जाता है।

अमरीका के प्रसिद्ध शहर शिकागो में एक जलसा हो रहा था। वहां सदस्यों के नामांकन पर विचार हो रहा था। लिंकन के परिचित सदस्यों ने उसे वहां पर तार भेजा कि अमुक दो नेताओं को सहमत कर लिया जाए तो लिंकन का नाम भी नामांकित हो सकता है, लेकिन यह सहमति प्राप्त करने के लिए उन दोनों विरोधियों को मन्त्रिमण्डल में लेना होगा। लिंकन ने तार द्वारा तुरन्त ही उत्तर दिया—'मैं कोई सौदेबाजी नहीं करता और न ही किसी से दबकर रहता हूं।' ऐसी थी लिंकन की सत्यनिष्ठा। एक मामूली-से लांछन को भी वह गहरा घाव समझते थे।

फ्रैंकफर्ट के एक छोटे-से मुहल्ले में—जो यहूदियों का मुहल्ला कहलाता था—अन्सेल्म नाम का एक यहूदी रहता था, जिसके पास अनगिनत धनराशि थी। उस व्यक्ति की ईमानदारी की कथा भी अत्यन्त प्रेरणाप्रद है। उन दिनों यहूदियों को अपने घरों में ही बन्द रहना पड़ता था और जब नेपोलियन ने फ्रैंकफर्ट पर अपना अधिकार जमा लिया, तब भी यह नियम बना रहा। यहूदियों को एक नियत समय पर अपने घरों के दरवाजे बन्द करने होते थे और उसके बाद यदि कोई यहूदी घर से बाहर दिखाई पड़ जाता तो उसे मौत के घाट उतार दिया जाता था। लेकिन अन्सेल्म अन्य सब यहूदियों से भिन्न था। उसने एक छोटा-सा मकान लेकर उसके बाहर लाल रंग की एक ढाल लटका दी, जिस पर जर्मन भाषा में 'राथ्सचाइल्ड' लिखवा दिया और तब उसने उस छोटे-से मकान में रुपये का लेन-देन आरम्भ कर दिया। इसी दौरान नेपोलियन ने हैस्सीकैसल के एक

व्यक्ति लैण्डाग्रेव विलियम को वहां से खदेड़ भगाया उसने अपनी चालीस पचास लाख की सम्पत्ति अन्सेल्म के पास धरोहर के रूप में रख दी। उसने यह आशा भी नहीं की थी कि यह रकम उसे कभी वापस भी मिलेगी, क्योंकि उसका विश्वास था कि आक्रमणकारी अन्सेल्म से उस राशि को जरूर छीन लेंगे। लेकिन अन्सेल्म बहुत चतुर था। उसने वह धन अपने बाग में दबा दिया और जब खतरा टल गया तो उसने उस धन को ब्याज पर लगा दिया। कुछ दिन बाद लैण्डाग्रेव विलियम लौटकर वापस आया तो अन्सेल्म ने अपने बड़े बेटे के द्वारा उसे यह कहला भेजा कि वह ब्याज समेत अपनी सारी रकम ले जाए। लैण्डाग्रेव आश्चर्यचकित रह गए, क्योंकि वह तो उस रकम के वापस मिलने की आशा ही छोड़ बैठा था।

जिस दिन आपके मन में बेईमानी से एक भी पैसा प्राप्त करने की भावना उत्पन्न हो, वह दिन सर्वाधिक अभिशप्त होना चाहिए। जिस व्यवसाय से आप यह आशा रखते हैं कि बिना कुछ परिश्रम किए आपको लाभ हो जाएगा, वह व्यवसाय बेईमानी और अपमान का व्यवसाय होता है। फिर चाहे वह सट्टा हो, लाटरी हो या अन्य कोई कार्य। इस प्रकार कमाए हुए धन को आप जब भी अपने काम में लाते हैं तो समझ लीजिए कि आप बेईमान होते जा रहे हैं और तब आपकी दशा इस प्रकार हो जाएगी।

- —सोमवार को मैंने सट्टा किया।
- —मंगलवार को मेरे पास लाखों रुपया हो गया।
- —बुधवार को मैंने पांच मंजिला भवन बनाना आरम्भ कर दिया।
- —बृहस्पतिवार को मैंने शानदार दावत दी।
- —शनिवार को मेरे पास सब कुछ समाप्त हो गया और कुछ भी न रहा।

सत्य को प्रमाण के लिए ईश्वर का भी इंतजार नहीं करना पड़ता।

आदतों का महत्त्व

आदतें मुख्यतः दो प्रकार की होती हैं—अच्छी और बुरी। अच्छी बातें इन्सान जल्दी ग्रहण नहीं कर पाता, लेकिन बुरी आदतें उस पर बहुत जल्दी हावी हो जाती हैं। अतः यदि समझ-बूझकर बुद्धिमत्तापूर्वक अच्छी आदतों को अपनाया जाए तो वह प्राकृतिक बन जाती हैं और जीवन में सफलता प्रदान करती हैं।

बेकन ने कहा है—'यदि समझ-बूझकर बुद्धिमत्तापूर्वक किसी आदत को अपनाया जाए तो वह प्राकृतिक बन जाती है।'

लेमरटीन का कहना है—'आदतें हमें अपनी लौह-शृंखला में बांधकर प्रतिदिन हमारा मार्गदर्शन करती हैं।'

हेजलेट का कथन है—'आदत की जंजीर मानव-जीवन से किसी सांप की तरह लिपटकर उसके दिल को तोड-तोड़कर खाती रहती है।'

एफ० डब्ल्यू० रॉबर्टसन का कहना है—'यदि आप जीवन की उपेक्षा करते हैं तो आप अपने उद्देश्य को प्राप्त नहीं कर सकते।'

किसी स्त्री ने एक चिकित्सक से पूछा—"मैं अपने बच्चों की शिक्षा-दीक्षा कब आरम्भ करूं?"

चिकित्सक ने पूछा—"बच्चे की आयु क्या है?"

स्त्री ने उत्तर दिया—"दो वर्ष।"

चिकित्सक महोदय ने कहा—"तब तो दो वर्ष तुमने यूं ही गंवा दिए।"

वास्तव में बच्चे की शिक्षा-दीक्षा उनकी नानी-दादी से ही आरम्भ हो जानी चाहिए। हम कर्मरूपी बीज बोते हैं और आदतरूपी फल काटते हैं और जब आदतरूपी बीज बोते हैं तो चरित्ररूपी फल काटते हैं। अच्छी आदतें आत्मसंयम और निरभिमानिता पर निर्भर करती हैं, जबकि बुरी आदतें खरपतवार की तरह, बिना किसी सहायता के, अच्छाईरूपी बाधाओं का रस चूसती रहती हैं। छोटी आयु में बच्चा अच्छी आदतें उतनी ही सरलता से ग्रहण करता है, जितनी सरलता से बुरी आदतें। आयु के प्रारम्भिक वर्ष तक खूब देखभाल कीजिए, उनकी भली प्रकार से सुरक्षा कीजिए और आशा कीजिए कि आपकी आयु के अन्तिम बीस वर्ष वे आपकी सुरक्षा करते रहेंगे।
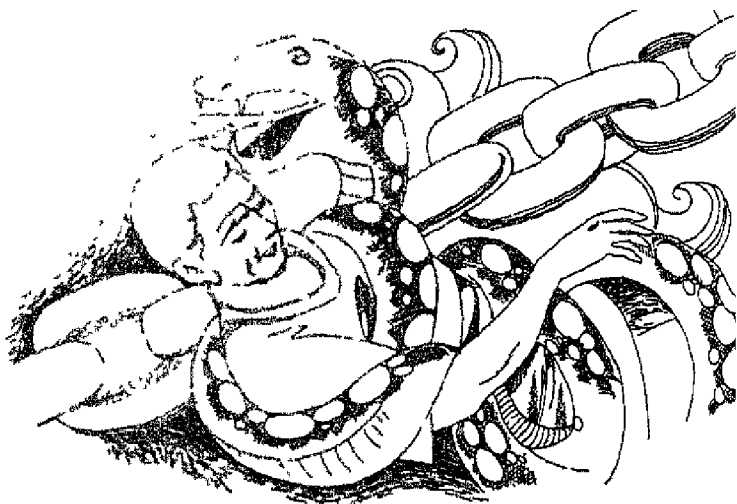
आदत की जंजीर मानव से साप की तरह
लिपटकर उसके दिल को खाती रहती है।

एक मूर्ख व्यक्ति घण्टाघर के पास रहा करता था। जब भी कभी घण्टा बजता तो उसकी टन-टन की आवाज को गिनते हुए उसे बड़ा आनन्द आता था। एक बार घड़ी बिगड जाने के कारण टन-टन की आवाज आनी बन्द हो गई, लेकिन वह व्यक्ति अपनी आदत के अनुसार हर घण्टे पर ठीक टन-टन गिनता रहा। इसी प्रकार डॉक्टर जॉनसन की भी एक आदत थी। वह जब भी रास्ते से गुजरते तो हर खम्भे को छूते जाते थे। यदि कोई खम्भा छूट जाता था तो उन्हें बड़ी बेचैनी और झल्लाहट महसूस होती थी और वह दोबारा लौटकर उसे छूते थे और तब आगे बढ़ते थे। इसी प्रकार विचार भी एक आदत ही है। विरासत भी व्यक्ति की एक आदत है, जो उसकी सन्तान तक जा पहुंचती है।

जर्मनी के बॉन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर पैलमैन ने शराबियों की पैतृक आदतों का मनन करना आरम्भ किया और उन्होंने ऐसे सैकड़ों व्यक्तियों की जीवन-गाथा लिखी जो एक ही शराबी की सन्तान थे। इन सब सन्तानों में से सर्वाधिक कुख्यात एक महिला थी, जिसका नाम फ्रा-एडा जर्क था, जिसका जन्म सन् 1740 में हुआ था। यह महिला अपने जीवन के चालीस वर्षों में शराबी, चोर और आवारा रही। उसका देहान्त सन् 1800 में हुआ। उसकी नस्ल में 834 व्यक्तियों ने जन्म लिया, जिनमें से 709 के बारे में जीवनपर्यन्त हालात दर्ज हैं। उन 709 में से 106 कानूनी रूप से शादीशुदा माता-पिता की सन्तान थे, 144 भिखमंगे थे जबकि 62 व्यक्ति दान पर गुजारा करते थे। 181 महिलाएं बदनामी का जीवन गुजारती थीं तथा 76 व्यक्तियों को सरकार द्वारा दण्डित

किया गया, जिनमें से सात को प्राणदण्ड भी मिला। इस प्रकार लगभ
में एक खानदान पर राष्ट्र का साढ़े बारह लाख डॉलर जेलखानों व
पर खर्च हुआ।

देखा आपने आदतों का चमत्कार! आदत मानव स्वभाव क
सिद्धान्त है, जिसे अवश्य ही प्रयोग में लाना चाहिए, ताकि जीवन
सरलता और उपयोगिता विकसित होती रहे। यदि आप दूरदर्शिता
लें तो किसी के प्रति उपेक्षा न कर सकेंगे। अनेक सफल व्यक्तियों
कि असफलता का कारण क्या हो सकता है तो उनमें से प्रत्येक
असफलता का मुख्य कारण बुरी आदतें ही हैं।

आदतों के जाल में उलझकर अपना भविष्य व वर्तमान खराब न

नदी के प्रवाह के साथ-साथ बहते चले जाना संसार में सबसे आस
कार कुसंगति से प्रभावित होकर अनेक दुष्कर्मों की आदतें पैदा कर ले
। थोड़ी देर की कुसंगति भी व्यक्ति के जीवन को बर्बाद करने के लिए
टे-छोटे और मामूली गुनाहों से सावधान रहना चाहिए।

न्यू ऑर्लियन्स नगर का धरातल—मिसीसिपी नदी में बाढ़ के समय
दह फीट ऊंचा है। नगर की रक्षा के लिए एक बांध बनाया गया। सन
ीने में बांध में एक छोटी-सी दरार देखी गई, जिसमें से पानी आ र
रेत के कुछ बोरे ही उस दरार को पाटने के लिए काफी थे, लेकिन

इस बात की परवाह न की गई। इसका परिणाम यह हुआ कि पानी का प्रवाह इतना अधिक उग्र हो गया कि उस दरार को पाटने के सभी परिणाम व्यर्थ सिद्ध हुए। तब पचास लाख डॉलर का पुरस्कार उस व्यक्ति के लिए घोषित किया गया जो उस दरार को पाट देता, लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी थी।

किसी अनुभवी व्यक्ति का कहना है कि दुनिया में सिर्फ चार अच्छी आदतें हैं—समय की पाबन्दी, औचित्य, गतिशीलता व कुशलता। यदि समय की पाबन्दी न हो तो अवसर चूक जाता है। यदि कोई काम उचित रूप से न किया जाए तो उससे किसी को लाभ नहीं होता। गतिशील न रहने से कोई भी काम भली-भांति नहीं हो सकता और कुशलता के अभाव में अच्छे-से-अच्छा अवसर भी हाथ से निकल जाता है।

पारिवारिक प्रथाएं और परम्पराएं समाज पर गहरा प्रभाव डालती हैं, क्योंकि आदतों के बीज समाज में फैलते रहते हैं। ऐसी आदतों के वास्तविक स्रोत का पता लगाना बहुत आसान है। काम करने का ढंग अत्यन्त साधारण बात है, किन्तु जिस ढंग से छोटी-छोटी बातें की जाती हैं, वही महत्वपूर्ण हैं। छोटी-छोटी बातों से ही बडे कारोबार करने की आदत बनती है। इसलिए काम चाहे जैसा भी हो, लेकिन उसमें सफल होना बहुत आवश्यक है।

यदि आपके बगीचे में कोई वृक्ष टेढा उगा हुआ हो तो सीधा नहीं कर सकते और यदि आप उसे सीधा करके उससे ये कहें कि अब टेढ़े न होना तो वह आपका कहना नहीं मानेगा। लेकिन यदि आप एक खम्भा गाड़कर उस वृक्ष को थोड़ा सीधा करके खम्भे के साथ बांध दें और प्रतिदिन थोड़ा-थोडा सीधा करते रहें और मौसम के आने पर खम्भे के साथ खूब कसकर बांध दें तो फिर उसे स्थायी रूप से भी सीधा करने में सफल हो सकेंगे। कहने का अर्थ यह है कि टेढ़े वृक्ष को भी सीधा किया जा सकता है, लेकिन एकदम नहीं, इस काम के लिए समय चाहिए। शारीरिक आदतों की उपमा भी ऐसे ही वृक्ष से दी जाती है, जो टेढ़ा उगा हुआ हो।

सर जॉर्ज स्टानटन भारत में एक ऐसे व्यक्ति से मिले, जिसने किसी की हत्या कर डाली थी और वह भी अपने लिए नहीं, बल्कि अपनी जाति की रक्षा के लिए और इसके लिए उसने कठोर प्रायश्चित किया। वह लगातार सात वर्ष तक ऐसे बिस्तर पर सोया करता था जिसकी पूरी सतह पर लोहे की कीलें लगी हुई थीं। सर जॉर्ज स्टानटन ने उसे प्रायश्चित के पांचवें वर्ष में देखा था। वह व्यक्ति उस कीलों के बिस्तर पर आराम से सो सकता था। उस व्यक्ति ने बतलाया कि सात वर्ष बाद प्रायश्चित पूरा हो जाने पर भी अन्य बिस्तर की बजाय उसे कीलों वाला बिस्तर ही उचित प्रतीत होगा। अपराधी जीवन का यह कैसा जीता-जागता उदाहरण है। आरम्भ में अपराध एक कंटीले बिस्तर के समान होता है, जो समय पाकर नैतिक अनुभूति मर जाने के कारण आरामदेह प्रतीत होता है

नियाग्रा नदी पर जब एक पुल बनने की बात उठी तो समस्या उपस्थित हुई कि लोहे

के रस्से नदी के दूसरे छोर पर किस प्रकार पहुंचाए जाएं। अन्त में यह प्रस्ताव स्वीकार किया गया कि जब हवा अनुकूल दिशा में बह रही हो तो एक पतंग उड़ाई जाए और उसे नदी के दूसरे छोर पर उतारा जाए। तब पतंग की पतली-सी डोर के साथ एक मोटी रस्सी बाधी जाए और उसे भी दूसरे किनारे पर पहुचाया जाए। फिर और अधिक मोटी रस्सी और फिर लोहे के रस्से उस पार पहुचाए जाए। इस प्रकार एक ऐसा शानदार पुल बना लिया गया, जिसके द्वारा सयुक्त राज्य अमरीका और कनाडा के बीच एक सड़क मार्ग तैयार हो गया। यह एक उदाहरण है कि किस प्रकार आदत के बल पर व्यक्ति ने नियाग्रा जैसी नदी पर पुल बना दिया। पहले पतंग की डोर उस पार पहुंचाई गई, फिर मोटी रस्सी, फिर मोटा रस्सा और फिर लोहे के रस्से।

किसी चित्रकार ने निष्कपटता की एक तस्वीर बनानी चाही तो उसने प्रार्थना में मगन एक बालक की तस्वीर बना डाली। वह नन्हा-सा बालक घुटनों के बल अपनी माता के पास खडा था। उसके दोनों हाथ प्रार्थना के लिए जुडे हुए थे और उसकी कोमल नीली आखें थोडा ऊपर को उठी हुई थीं। चित्रकार को अपना वह चित्र बहुत पसन्द था और उसे उस चित्र पर नाज था। उसने वह चित्र अपने कमरे की दीवार पर लटका रखा था कि एक दिन उसे विचार आया कि जिस प्रकार उसने निष्कपटता का चित्र बनाया, उसी प्रकार अपराधी का भी कोई चित्र बनाए। काफी परिश्रम करने के बाद भी उसे इस प्रकार का कोई अवसर हाथ न लगा। अत में अपने विचार को मूर्तरूप देने के लिए वह बन्दीगृह में जा पहुचा। वहा उसने पथरीली कोठरी के सीलन भरे फर्श पर पड़े हुए एक व्यक्ति को देखा। उस व्यक्ति के हाथ-पांव हथकड़ियों व बेड़ियों से जकडे हुए थे। उसका शरीर सूख गया था, आखें कटोरों में धंस गई थीं। लेकिन उसके चेहरे पर अपराध के लक्षण स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहे थे। चित्रकार ने उस व्यक्ति का चित्र बना लिया और उसे भी दीवार पर लटका दिया। बाद में पता लगा कि जिन दो व्यक्तियों के चित्र उसने बनाए थे, वह वास्तव में दो नहीं, एक ही व्यक्ति था। एक उसके बचपन का चित्र था, जिसमें निश्छलता थी और दूसरा जवानी का था, जिससे अपराध झलक रहा था।

इच्छाशक्ति को इस प्रकार मोडा जा सकता है कि वह वस्तुओं के उजले पक्ष पर केन्द्रित हो। इसी प्रकार अच्छे और सत्कार्यों की आदत भी डाली जा सकती है।

आरम्भ में जहाज पर ही रहना मल्लाहों को एक कैद-सा प्रतीत होता है, लेकिन धीरे-धीरे यही काम उनकी आदत बन जाता है। एक व्यक्ति का वर्णन करते हुए वार्डकेम्स ने लिखा है कि वह समुद्री जीवन छोड़कर गाव में रहने लगा और वहां उसने एक ऊंचा चबूतरा बनवाया और उस पर जहाज के तख्ते के आकार का मचान बना लिया, जिस पर चढकर वह सैर किया करता था। इसी प्रकार फ्रैंकलिन जब निगरानी किया करता था तो उसे धरती पर कम्बल बिछाकर सोना पडता था। जब वह वहां से वापस लौटा तो उसे साधारण बिस्तर पर नींद ही नहीं आती थी।

कैप्टन रास और उनके अन्य साथी नंगी चट्टानों अथवा हिमशिलाओं पर सोने के

इतने अभ्यस्त हो गए थे कि उन्होंने बिस्तर छोड़कर कुर्सी पर सोना आरम्भ कर दिया। दो मल्लाह शराब पीकर जब मदहोश हो गए तो एक नाव में बैठकर जहाज की ओर चल पडे। दोनों ही नाव पर बैठकर चप्पू चला रहे थे, पर नाव तनिक भी आगे नहं बढ रही थी। दोनों एक-दूसरे पर आरोप लगाने लगे कि वह पूरी शक्ति से चप्पू नहीं चलाता और दोनों खूब जोर लगाकर चप्पू चलाने लगे। घण्टे भर तक इस प्रकार चप्पू चलाते रहने पर भी नाव टस से मस न हुई। जब शराब का नशा उतरा तो इधर-उधर देखकर एक ने दूसरे कहा—"अरे! लंगर तो हमने अभी तक उठाया ही नहीं।" ठीक ऐसी ही दशा उन लोगों की होती है जो किसी काम से चिपके होते हैं, लेकिन जिसका उन्हें ज्ञान ही नहीं होता है। प्रयत्न-पर-प्रयत्न करते जाते हैं, पर उनके सब प्रयत्न बेकार हो जाते हैं।

रस्किन का कहना है—'लापरवाह नवयुवकों पर दया आती है। उनका प्रत्येक विचार उनके लिए जीवन तथा मरण का स्रोत बन जाता है। इसलिए मेरी नवयुवकों को सलाह है कि वे कभी लापरवाह न बनें। लापरवाही के लिए केवल एक ही स्थान निश्चित है, जहा सोचने-समझने की कोई आवश्यकता नहीं है, जहा पहुचकर कुछ शेष रहता ही नहीं और वह जगह है—मृत्युशैया।'

मानव-मस्तिष्क शरीर के विभिन्न अगों को आदतें बनाने की राह दिखाता है। इस प्रकार शरीर का प्रत्येक अग अपने आप काम करता रहता है और मस्तिष्क को परिश्रम करने से मुक्ति मिल जाती है तथा व्यक्ति और अधिक बढ़िया सेवा करने के लिए तैयार हो जाता है।

आपने सुना होगा कि यदि आप शैतान के बेटे को अपने घर बुला लें तो शैतान का पूरा परिवार आपके घर आ जाएगा। इसी प्रकार एक बुरी आदत अनेक बुरी आदतों को अपने साथ ले आती है। अनुशासनहीनता और उपेक्षा रूपी बुरी आदतें अपने जैसी अनेक बुरी आदतों को पैदा करने में सहायक सिद्ध होती हैं और आपके सारे व्यक्तित्व को अपना शिकार बना लेती हैं। किसी व्यक्ति को जब यह पता लगता है कि लोग उसे झूठा समझते हैं तो उसे दुख होता है। उसने तो कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा होगा कि ऐसी बुरी आदत उसके मन में घर कर लेगी, लेकिन छोटे-छोटे उद्देश्यों की पूर्ति करते-करते उसके मस्तिष्क में एक ऐसी पगडण्डी बन जाती है, जिसका उसे पता नहीं चलता तथा जिस पर चलते-चलते झूठ बोलना उनके लिए एक शारीरिक आवश्यकता बन जाता है। वह अपनी इस आदत से छुटकारा पा सकता है, लेकिन यह काम इतना आसान नहीं है। यह अपनी इन आदतों के साथ फौलादी जजीरों में जकड़ा हुआ रहता है और जब तक सतर्कता से काम लेते हुए, प्रत्येक कर्म में इच्छाशक्ति को जुटाते हुए एक नई पगडण्डी नहीं बना लेता, तब तक उससे छुटकारा नहीं पा सकता।

आपने कई बार देखा होगा कि किसी सत्यनिष्ठ और ईमानदार व्यक्ति ने कोई ऐसा

कर्म कर डाला, जिससे समाज को दुख पहुंचा। ऐसा क्यों होता है? इसका कारण हैं छोटे-छोटे काम, जिन्हें वह नगण्य समझता था। वह उसे उग्र अपराध कर्म की ओर आ रहे थे। आदतों की यही पगडण्डिया दिन-प्रतिदिन अभ्यस्त होते हुए बहुत प्रबल गतिशील एवं प्रभावशाली हो जाती हैं। इस प्रकार कुकर्मी लोगों को ये सिखलाना कि केवल इच्छाशक्ति के बल पर ही वह अपने स्वभाव में परिवर्तन कर सकते हैं, निरर्थक है चरित्र का निर्माण तो वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है, आदतों की रचना पर आधारित है। आज हम जो काम करते हैं वह लगभग वैसा ही है जैसा उसने कल किया था और यदि हम उस काम को वैज्ञानिक ढंग से नहीं करते तो भले ही कितने ही संकल्प कर लें, कल भी हम उस काम को उसी प्रकार करेंगे। बड़े दुर्भाग्य की बात है कि आदतों की रचना का ज्ञान न तो हमें घर पर सिखाया जाता है और न ही स्कूलों, कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में। यह एक ऐसा विज्ञान है जिसकी तुलना में शिक्षा के अन्य सभी क्षेत्र नगण्य लगते हैं। आप किसी व्यक्ति को सच्ची राह पर लाने का प्रयत्न करते हैं, लेकिन उसे यह नहीं बतलाते कि इसके लिए उसे अपनी पुरानी आदतों को छोड़ना होगा। कष्ट सहकर व ईश्वर से प्रार्थना करके ऐसे कर्म करने होंगे, ऐसी पगडण्डियां बनानी होंगी, जिन पर चलकर वह सत्य के मन्दिर में पहुंच सके।

इस सम्बन्ध में एक उदाहरण है। एक वृद्ध सिपाही घर जा रहा था। उसके एक हाथ में खाने की वस्तुएं और दूसरे में अण्डों की टोकरी थी कि तभी पीछे से कोई पुकार उठा, 'हाल्ट! अटेन्शन!' आवाज सुनते ही सिपाही रुका और सावधान की मुद्रा में खड़ा हो गया। खाने-पीने की वस्तुएं और अण्डों की टोकरी हाथ से छूटकर जमीन पर बिखर गई। यह सब कैसे हुआ? यह हुआ अभ्यास के कारण। उसके स्नायुओं को जो आदत पड़ी हुई थी, उसी को उन्होंने दोहरा दिया। देखा आपने आदतों का चमत्कार! किसी भाग्यहीन व्यक्ति ने कहा है कि मेरे पास ससार का समस्त धन-वैभव इकट्ठा हो जाए तो भी सच्चा इन्सान बनने के लिए मैं उस सबको न्यौछावर कर दूंगा, लेकिन इसके बाद चौबीस घण्टे भी नहीं गुजर पाएंगे कि वह एक छोटे-से गुनाह से प्रभावित होकर दोबारा पाप के बन्धन में जा फंसेगा।

विचारों पर नियंत्रण रखिए

असफल अपने विचारों द्वारा ही होता है। जिसने अपने मन
ा वह कभी असफल हो ही नहीं सकता। अतः दृढ़ इच्छाशक्ति
रों के गुलाम न बनकर विचारों को ही अपना गुलाम बनाए।
ना या मन पर नियंत्रण रखना कोई कठिन कार्य नहीं है।

ा का कथन है—'आपका प्रत्येक विचार आपके भविष्य का निर्माता
ार शुभ हो या अशुभ।'

आपके विचार ही आपके भविष्य के निर्माता हैं।

विचारो का ही दूसरा नाम भाग्य भी हो सकता है, क्योंकि विचारों के अनुसार ही आप अपने ससार का निर्माण करते हैं। आपके विचारानुसार ही आपको फल भी, मिलता है। प्रेम का प्रतिफल प्रेम ही होता है और द्वेष का प्रतिफल द्वेष। एक पुरानी कहावत है कि किसी मामूली पढ़े-लिखे व्यक्ति को विरासत में एक जहाज मिल गया। उस व्यक्ति को न तो समुद्र के बारे में कुछ ज्ञान था और न ही जहाज के बारे में कुछ जानकारी थी। बस, उसे यह सनक सवार हुई कि वह समुद्र की यात्रा करेगा और अपने जहाज का कमाण्डर भी स्वय ही होगा। समय आया और वह जहाज लेकर अपनी समुद्री यात्रा पर चल पड़ा। अब वह अपने जहाज का खुद ही कप्तान था। अत जहाज पर पहुंचने ही उसने सभी कर्मचारियों को आदेश दिया कि वह अपना-अपना काम संभाल लें। जहाजरानी की अनेक बारीकिया होती हैं, लेकिन उसे उनका कोई ज्ञान न था। इसलिए वह मन-ही-मन भयभीत हो रहा था। जहाज समुद्र में बढ़ा चला गया और काम आसान होता गया। कप्तान महाशय जहाजियों के काम को देखते हुए आगे बढ़े और डैक पर जा पहुचे। वहां उन्होंने देखा कि एक व्यक्ति बहुत बड़े चक्र को कभी इधर और कभी उधर घुमा रहा है।

कप्तान साहब ने पूछा—यह आदमी यहा क्या कर रहा है तो उन्हें बताया गया कि जहाज की पतवार का चालक यही व्यक्ति है। यही जहाज को सही दिशा की ओर चलाता है। इतना सुनकर कप्तान साहब बोले—पता नहीं यह आदमी यहां क्या करता रहता है? मुझे तो यहा पर इस आदमी की कोई जरूरत महसूस नहीं होती। जहाज के पाल ही जहाज को आगे ले जाने के लिए काफी हैं और जब सामने से कोई दूसरा जहाज आता दिखाई पड़े अथवा जमीन दिखाई देने लगे, तब इस पतवार को काम में लाया जा सकता है। इस व्यक्ति की कोई जरूरत नहीं है, पाल खोल दो और जहाज को अपने आप आगे बढने दो।

कप्तान साहब की आज्ञा का पालन होना था, हुआ, पर उसके बाद जो दुर्घटना हुई और जो इने-गिने लोग बच गए, वह उस मूर्ख कप्तान को जीवन भर एक क्षण के लिए भी नहीं भूल पाए, जिसने कहा था कि पतवार के चालक की कोई आवश्यकता नहीं है और जहाज को अपने आप चलने दिया जाए।

जरा विचार कीजिए, क्या आप पर भी उस जहाज से अधिक किसी बहुमूल्य एव उलझनपूर्ण वस्तु के संचालन का भार नहीं पड़ा हुआ है? वह वस्तु है आपका मन, आपका जीवन। क्या आपने कभी अपने मन की पतवार को, अपने जीवन की पतवार को अपने हाथ में थामने का ध्यान किया है? क्या आपने कभी अपने मन को वश में करके उसे अपनी इच्छानुसार चलाने की कोशिश की है? क्या आपने कभी उसकी उच्छृंखलता पर कोई रोक लगाई है, अथवा उसे यूं ही इधर-उधर भागने की खुली छूट दे रखी है? क्या आपका मन क्रोध अथवा अन्य दुर्गुणों के कारण दिशाभ्रष्ट होकर इधर-उधर नहीं भागता रहता? क्या आप हर ऐरे-गैरे को अपना मित्र बना लेते हैं? क्या आपका मन मनोरंजन के ओछे साधनों से अपने आपको बहलाता हुआ आपको उस मार्ग

वही व्यक्ति कर सकता है जिसमें जन्मजात प्रतिभा अथवा विलक्षण बुद्धि हो। लेकिन पिछले कुछ वर्षों में विचारों को नियन्त्रित करने के विषय में बहुत अधिक अध्ययन किया गया है। नियन्त्रित मन के रहस्य को जानने का भी भरसक प्रयत्न किया गया है तथा चारित्रिक सुधार की शक्ति और परिस्थितियों में प्रयास लाने के साधन, वातावरण बदलने के साधन तथा व्यक्ति के स्वास्थ्य, प्रसन्नता और सफलता आदि की प्राप्ति में मनोनियन्त्रण के योगदान को जानने के भी भरसक प्रयत्न हुए हैं। इन सबसे यही निष्कर्ष निकलता है कि विचारों को असीम प्रशिक्षण दिया जा सकता है तथा इनको प्रशिक्षित एवं नियन्त्रित करने के परिणाम अनन्त हैं। लेकिन बहुत ही कम व्यक्ति अपने विचारों को नियन्त्रित कर पाते हैं, अधिकांश व्यक्ति तो लापरवाह होते हैं। वे कभी भी अपने विचारों को नियन्त्रित एवं प्रशिक्षित करने का कोई प्रयत्न ही नहीं करते तथा हर बात को भाग्य के भरोसे छोड़ देते हैं। इस प्रकार विचारों को बेलगाम घोड़े की तरह छोड़कर अपने मन को विवश कर देते हैं कि उस परिस्थिति और घटना को बदलने के लिए कोई प्रयत्न ही न करें।

यदि आप अपनी भलाई चाहते हैं और उनका भी हित करना चाहते हैं जो आप पर आश्रित हैं तो आपके लिए यह बहुत आवश्यक है कि आप अपने विचारों को नियन्त्रित करने के उपायों पर विचार करें। तभी आपके व्यक्तित्व का विकास भी हो सकेगा और तभी आप उनका भी हित कर सकेंगे जो आप पर आश्रित हैं।

अनेक व्यक्ति यह समझते हैं कि विचार तो अमूर्त तथ्य हैं, कोई ठोस वस्तु नहीं हैं और इसलिए न तो हम उन्हें बदल सकते हैं, न ही उन्हें बदलने की कोई आवश्यकता है और न ही उन पर हमारा वश है। अक्सर लोग यही सोचते हैं कि मन की प्रवृत्तियों पर रोक लगाना कठिन ही नहीं, निरर्थक भी है। वह समझते हैं कि विचारों का विश्लेषण करना बहुत कठिन है और इसके लिए फालतू समय आदि की जरूरत है। लेकिन यह बात इतनी गलत है कि इससे अधिक गलत बात और कोई नहीं हो सकती। भले ही कोई व्यक्ति कितना भी अबोध हो, कितना भी असंस्कृत हो, कितना भी अज्ञ हो, कितना भी व्यस्त हो, इतनी सामर्थ्य उसमें अवश्य होती है कि वह अपने विचारों को समझ सके, उनका विश्लेषण कर सके, उनकी खोज-बीन कर सके और तब अपने स्वभाव, अपने क्रिया-कलाप, अपने चरित्र और अपने जीवन में जितना चाहे परिवर्तन ला सके। हर व्यक्ति की समस्याएं दूसरे व्यक्ति से भिन्न होती हैं, जिन्हें उसे स्वयं सुलझाना होता है। इस प्रकार हर व्यक्ति का लक्ष्य भी भिन्न होता है। लेकिन विचारों को सुधारने और उन्हें अपने लक्ष्य के अनुकूल बनाने की प्रक्रिया सभी के लिए एक जैसी होती है। एक व्यक्ति के विचार करने का ढंग दूसरे व्यक्ति के ढंग से भिन्न होता है। किसी मूर्तिकार की छैनी यदि एक सेंधमार के हाथ आ जाए तो वह उससे पक्की दीवार में भी छेद कर लेगा और किसी अपराधी व्यक्ति के हाथ में आ जाए तो वह उससे किसी की हत्या भी कर सकता है। शक्ति व्यक्ति के हाथों में हो तो चाहे तो किसी सुन्दर रचना का निर्माण किया जा

सकता है और चाहे तो किसी सुन्दर रचना को नष्ट-भ्रष्ट किया जा सकता है। इस प्रकार यह शक्ति भी हममें है कि हम अपने स्वभाव को श्रेष्ठ बनाएं या बिगड़ जाने दें।

जो व्यक्ति अपने विचारों को अपने वश में नहीं कर सकते, जो अपनी प्रवृत्तियों एव चेष्टाओं को नहीं बदल सकते, वे यह भी नहीं जान सकते कि सौन्दर्य, सफलता व प्रसन्नता का सृजन कैसे हो सकता है। उनके मन की लगाम ही उनके हाथ में नहीं होती। ऐसे व्यक्ति प्रायः कहा करते हैं, 'जो हो गया, सो ठीक है।' लेकिन जो हो गया वह ठीक नहीं है; ठीक वह है जो होना चाहिए। यदि एक मूर्तिकार पत्थर पर एक भी चोट ऐसी मार दे जिसकी जरूरत न हो तो वह मूर्ति बना ही नहीं सकता। उसका ध्यान अपने लक्ष्य की ओर, अपने लक्ष्य के छोटे-से-छोटे बिन्दु तथा छोटी-सी-छोटी रेखा की ओर रहता है और उसका प्रयास सदा यही रहता है कि उसकी छैनी की हर चोट उसके लक्ष्य तक पहुंचने वाली हो। अपने अन्तःकरण में उसने मूर्ति का जो रूप या मॉडल बनाया हुआ होता है, छैनी की हर चोट, पत्थर को उसी रूप में ढालती जाती है और उसी का यह परिणाम होता है कि मूर्तिकार ठीक वैसी ही मूर्ति बना देता है, जिसकी उसने कभी कल्पना की थी। दूसरे शब्दों में वह अपने सपनों को साकार कर दिखाता है। लेकिन ऐसा तभी संभव हो पाता है, जब मूर्ति निर्माण करते समय उसकी दृष्टि तनिक भी इधर-उधर नहीं भटके तथा उसका ध्यान पूर्णतः एकाग्र रहे। तभी वह अपने विचारों के अनुरूप मूर्ति बना पाता है।

अपने विचारों और चरित्र में सुधार के लिए आपको भी मूर्तिकार की तरह प्रयत्न करना होगा, काट-छांट करनी होगी, स्पष्ट सोच लेना होगा कि आप क्या करना चाहते हैं और कैसे उसे कर सकते हैं। उसके बाद अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए, अपनी कल्पना को साक्षात एवं मूर्त रूप देने के लिए लगातार कठोर परिश्रम एवं प्रयत्न करना होगा। आपके विचार तथा साधारण औजार में इतना ही अन्तर है कि विचारों के लिए आपको हर समय कुछ-न-कुछ करते रहना होगा। छैनी की भांति आप उसे एक ओर सरका नहीं सकते और न यह कह सकते हैं कि हम कोई चोट नहीं मारेंगे। भली-भांति समझ लीजिए कि आपका प्रत्येक विचार एक चोट है, जिससे आपके जीवन का गठन होता है। जिस प्रकार बिना सोचे-विचारे एक मूर्तिकार पत्थर पर चोट नहीं मार सकता, उसी प्रकार आप भी बिना सोचे-विचारे नहीं रह सकते। अतः आपको चाहिए कि आपका प्रत्येक विचार आपकी नहीं, बल्कि औरों की भलाई के लिए हो और तब दृढ़ इच्छाशक्ति से अपनी कार्यशक्ति को नियोजित करके आप अपनी कल्पना के अनुरूप सफलता प्राप्त कर सकते हैं। ध्यान रहे, आप चाहे जितनी भी सच्चाई और ईमानदारी से अपने विचारों को नियन्त्रित करें अथवा अपने लक्ष्य पर अपनी सामर्थ्यानुसार कितनी ही पैनी दृष्टि से देखें, आपके विचार करने का ढंग और आपकी पुरानी आदतें, आपके चित्त की एकाग्रता को अवश्य विचलित करेंगी और जिसके विचार ही अपने वश में नहीं वह अपने आदर्श

के अनुरूप क्या कार्य करेगा? वह अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में कैसे समर्थ होगा? मिस्टर कार्टर ने लिखा है—'यदि बच्चों के माता-पिता उन्हें आदेश देने के बजाय उन्हें अपने विचारों पर नियन्त्रण करने की विधि सिखा सकें तो इससे नई पीढ़ी को सन्मार्ग पर चलाने का काम तथा उसे सफल मानव बनाने का काम बहुत सरल हो जाएगा। यदि बच्चों को यह सिखा दिया जाए कि वह किस प्रकार श्रेष्ठ विचारों को अपने मन में स्थान दें तथा बुरे विचारों को अपने से दूर भगाएं और उन्हें इस प्रकार का प्रशिक्षण दिया जाए कि कैसे वे अपने मन पर कंट्रोल कर सकें तो बालकों पर हुक्म चलाने अथवा उन्हें आदेश न मानने पर दण्ड देने की कोई आवश्यकता नहीं रह जाएगी। तब बच्चों का हृदय निर्मल होगा, उनका व्यवहार सच्चाई से परिपूर्ण होगा, उनमें किसी प्रकार की हीन भावना नहीं होगी और न ही उन्हें कुछ छिपाने की आवश्यकता रह जाएगी।'

ध्यानपूर्वक सोचा जाए तो मन को वश में करने का दूसरा नाम ही आत्मसंयम है। जिसने मन को अपने वश में कर लिया, उसने जीवन को अपने वश में कर लिया। उसे अपने उद्देश्य की सफलता में तनिक भी सन्देह नहीं रखना चाहिए। यदि बच्चों में अपने मन को वश में करने की आदत पड़ जाए तो उनके जीवन में दुख, कठिनाई अथवा असफलता पहले तो आ ही नहीं पाती और आती भी है तो वह अपने आपको इनसे बचाने में समर्थ हो जाते हैं। जिन कुछ अनुभवों के कारण जीवन अन्धकारमय हो जाता है, वे उनसे बच सकते हैं, लेकिन जिन बच्चों को मन को वश में करने का उपाय बचपन में ही नहीं सिखाया जाता, जिन्हें मनोनिग्रह का पाठ बचपन में ही नहीं पढ़ाया जाता, वे जीवन की सर्वोत्तम शिक्षा से वंचित रह जाते हैं।

स्वयं के हित के लिए और जो हम पर आश्रित हैं, उनके हित के लिए भी, हमें अपने विचारों का विश्लेषण करना चाहिए। मन में आने वाले प्रत्येक विचार की जांच-परख करना आपका कार्य होना चाहिए, क्योंकि विचारों की यह जांच-परख, चिन्तन-मनन और विश्लेषण एक दैवी वरदान है। यदि आप अपने विचारों को पहचान जाएं तो आप उन्हें अपने वश में कर सकते हैं और जिनके विचार उनके वश में होते हैं, उनका जीवन वास्तव में सफल जीवन होता है।

के अनुरूप क्या कार्य करेगा? वह अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में कैसे समर्थ होगा? मिस्टर कार्टर ने लिखा है—'यदि बच्चों के माता पिता उन्हें आदेश देने के बजाय उन्हें अपने विचारों पर नियन्त्रण करने की विधि सिखा सकें तो इससे नई पीढ़ी को सन्मार्ग पर चलाने का काम तथा उसे सफल मानव बनाने का काम बहुत सरल हो जाएगा। यदि बच्चों को यह सिखा दिया जाए कि वह किस प्रकार श्रेष्ठ विचारों को अपने मन में स्थान दें तथा बुरे विचारों को अपने से दूर भगाए और उन्हें इस प्रकार का प्रशिक्षण दिया जाए कि कैसे वे अपने मन पर कंट्रोल कर सकें तो बालकों पर हुक्म चलाने अथवा उन्हें आदेश न मानने पर दण्ड देने की कोई आवश्यकता नहीं रह जाएगी। तब बच्चों का हृदय निर्मल होगा, उनका व्यवहार सच्चाई से परिपूर्ण होगा, उनमें किसी प्रकार की हीन भावना नहीं होगी और न ही उन्हें कुछ छिपाने की आवश्यकता रह जाएगी।'

ध्यानपूर्वक सोचा जाए तो मन को वश में करने का दूसरा नाम ही आत्मसंयम है। जिसने मन को अपने वश में कर लिया, उसने जीवन को अपने वश में कर लिया। उसे अपने उद्देश्य की सफलता में तनिक भी सन्देह नहीं रखना चाहिए। यदि बच्चों में अपने मन को वश में करने की आदत पड़ जाए तो उनके जीवन में दुख, कठिनाई अथवा असफलता पहले तो आ ही नहीं पाती और आती भी है तो वह अपने आपको इनसे बचाने में समर्थ हो जाते हैं। जिन कुछ अनुभवों के कारण जीवन अन्धकारमय हो जाता है, वे उनसे बच सकते हैं, लेकिन जिन बच्चों को मन को वश में करने का उपाय बचपन में ही नहीं सिखाया जाता, जिन्हें मनोनिग्रह का पाठ बचपन में ही नहीं पढ़ाया जाता, वे जीवन की सर्वोत्तम शिक्षा से वंचित रह जाते हैं।

स्वयं के हित के लिए और जो हम पर आश्रित हैं, उनके हित के लिए भी, हमें अपने विचारों का विश्लेषण करना चाहिए। मन में आने वाले प्रत्येक विचार की जांच-परख करना आपका कार्य होना चाहिए, क्योंकि विचारों की यह जांच-परख, चिन्तन-मनन और विश्लेषण एक दैवी वरदान है। यदि आप अपने विचारों को पहचान जाएं तो आप उन्हें अपने वश में कर सकते हैं और जिनके विचार उनके वश में होते हैं, उनका जीवन वास्तव में सफल जीवन होता है।

क्रोध, भय और ईर्ष्या आदि आवेगों से बचें

क्रोध, भय, द्वेष या घृणा करना मनुष्य की बुरी आदतों के प्रतीक हैं और यह आदतें विष के समान हैं–जो शरीर के हर अंग पर बुरा और घातक असर छोड़ती हैं। अतः हमेशा शांतचित्त रहें। क्रोध, घृणा या ईर्ष्या किसी समस्या का हल नहीं। प्रेम और स्नेह की भावना ही अपने अन्दर संजोकर रखें।

होरेस फ्लेचर का कथन है–'क्रोध एवं चिन्ता के कारण व्यक्ति केवल निराश एवं असमर्थ ही नहीं होता, बल्कि कई बार तो उसकी मृत्यु भी हो जाती है।'

एलबर्ट हूबार्ड का कहना है–'क्रोध तथा प्रतिशोध के आवेग अस्थायी होते हैं। ये बहुत देर तक नहीं टिक सकते। अतः शान्तचित्त होकर उनका प्रतिकार कीजिए।'

भय का आवेग भी हमारे लिए कम घातक नहीं होता, क्योंकि भय हमारे चित्त को विक्षुब्ध करके हमारे मन में आकस्मिक हलचल मचा देता है। लेकिन जो व्यक्ति अपने हृदय को सबल बनाने का प्रयत्न करते रहते हैं, उन पर इस प्रकार के आवेगों का उतना भयंकर आक्रमण नहीं हो सकता। क्रोध के आवेग में कई बार मनुष्य पक्षाघात का शिकार हो जाता है एवं उसकी मृत्यु भी हो जाती है। किसी भी प्रकार का शोक, गहरी चिन्ता अथवा काफी दिनों से चली आ रही ईर्ष्या या जलन के कारण लोगों को पागल तक होते देखा गया है। यही वे भावनाएं हैं जिनसे मनुष्य की तर्कशक्ति भी नष्ट हो जाती है, पर इन सब घातक कारणों में क्रोध से शोक अधिक मारक सिद्ध होता है।

एक प्रसिद्ध चित्रकार कारेजियो केवल शोक के आवेग से ही मर गया। उसका एक चित्र ड्रिसडेन चित्रशाला की बहुमूल्य निधि माना जाता था, लेकिन उसे उस चित्र का मूल्य केवल चालीस ड्यूकेट्स प्राप्त हुआ और इस आघात को न सह पाने के कारण ही उसकी मृत्यु हो गई। अंग्रेजी का प्रसिद्ध कवि कीट्स भी अपनी कविता की आलोचना सहन न करने के कारण ही मर गया। इस प्रकार के अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं, जब व्यक्ति शोक के आघात से मर गया। प्रेम में असफल होने पर निराशा से मर जाने वाले व्यक्तियों के भी अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं
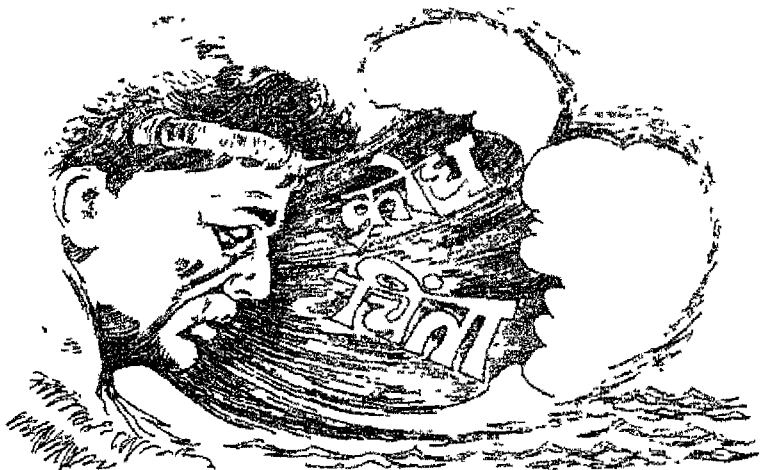
क्रोध व चिन्ता का आवेग मृत्युदायी भी हो सकता है।

इसी प्रकार अत्यधिक प्रसन्नता अथवा आकस्मिक हर्ष का भी बड़ा तीव्र आघात होता है और उससे भी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है। आपने प्रायः समाचार पत्रों में इस प्रकार के समाचार पढ़े होंगे कि काफी देर से खोए हुए बच्चे के मिलने पर अकस्मात माता-पिता की मृत्यु हो गई या किसी व्यक्ति की बड़ी लाटरी खुली और यह समाचार सुनते ही उसके हृदय की गति रुक गई अथवा किसी सम्मानित परिवार का पुत्र माता-पिता की आज्ञा के बिना शादी कर बैठा और इस आघात को उसकी माता सहन न कर सकी और केवल पांच ही मिनट में उसकी मृत्यु हो गई।

ऋणात्मक भावनाओं का आवेग भी इसी प्रकार हानिकारक होता है। ठीक है, इस प्रकार का आवेग मारक सिद्ध नहीं होता, लेकिन हानिकारक तो होता ही है। क्रोध के कारण भूख नष्ट हो जाती है, व्यक्ति की पाचनशक्ति रुक जाती है और केवल कुछ ही घण्टों के लिए नहीं, बल्कि कई दिनों तक उसका तंत्रिका-तंत्र बिगड़ा रहता है, जिसके कारण व्यक्ति का मानसिक एवं चारित्रिक सामंजस्य भी समाप्त हो जाता है। ऋणात्मक भावनाओं के आवेग से सुन्दर, स्वस्थ एवं सुदर्शन मुखाकृति भी कुरूप बन जाती है। इसका कारण यही होता है कि चित्तवृत्ति का प्रभाव व्यक्ति की मुखाकृति पर तुरन्त पड़ता है। यही नहीं, अधिक क्रोध और त्रास के कारण पीलिया रोग भी हो सकता है तथा कई बार व्यक्ति को वमन (कै) भी लग जाती है। क्रोध के कारण स्तनपान कराने वाली माता का दूध भी विषैला बन सकता है।

ईर्ष्या भी ऋणात्मक भावावेगों में से एक है। यह भी आपका एक शत्रु है। इससे आपकी प्रसन्नता और स्वास्थ्य का ह्रास हो सकता है। ईर्ष्यालु व्यक्ति का स्वास्थ्य प्रायः

खराब ही रहता है। उसका मन भी इतनी थकान महसूस करता है कि कई बार ऐसे व्यक्ति या तो पागल हो जाते हैं या आत्महत्या कर बैठते हैं। इस प्रकार घृणा भी व्यक्ति की पाचनशक्ति को नष्ट कर देती है। इससे उनका सात्वीकरण नहीं हो पाता तथा उसका रक्त बनना भी रुक जाता है और तब मानसिक अशान्ति के कारण उसका चारित्रिक पतन भी हो सकता है।

इस प्रकार की ऋणात्मक भावनाओं, विषाक्त भय और क्रोध के आवेग के कारण शरीर के भीतर ऐसे अनेक रसायन उत्पन्न हो जाते हैं जिनकी तुलना में साप का विष भी कम मारक होता है। सांप के मुंह में एक थैली होती है, जिसमें उसका सारा विष जमा रहता है, लेकिन मनुष्य के शरीर में ऐसी कोई थैली नहीं होती। इसलिए भय अथवा क्रोध के समान मनुष्य के शरीर में पैदा हुआ विष उसकी समस्त नस-नाडियों में फैल जाता है। इसे रोकने के लिए कितना भी प्रयत्न क्यों न किया जाए, वह रुक नहीं सकता और तब यही विष शरीर के रस-स्रावक अंगों-उपांगों को भी दूषित कर देता है। आपने प्रायः देखा होगा कि निराश होते ही व्यक्ति के श्वासोच्छ्वास की गति धीमी हो जाती है। उसकी पाचनशक्ति घट जाती है, उसके रक्त-संचार में बाधा पड़ जाती है, उसका रक्त कमजोर हो जाता है व उसकी आंखों की चमक समाप्त हो जाती है, जबकि प्रसन्न मनःस्थिति में मनुष्य की सभी मांसपेशियां एवं मस्तिष्क अधिक सक्रिय हो जाता है।

प्रोफेसर एल्मर गेट्स ने इस विषय में अनेक अनुसंधान किए हैं और उनका कहना है कि मानव का शरीर तब निरर्थक हो गई नस-नाडियों तथा पुराने पड़ गए सैलों को शरीर से बाहर निकालने का प्रयत्न करता है। शोक में आंखों की राह उसके आसू बाहर निकलते हैं तथा अक्षमता एवं भय अथवा किसी दुर्घटना के कारण व्यक्ति के मन में हलचल पैदा हो जाती है और वह अधिक काम करने के लिए मजबूर हो जाता है। कई बार भय के आवेग के कारण शरीर पर ठण्डा पसीना भी आने लगता है और मुह का स्वाद कड़वा हो जाता है। ध्यान से देखें तो आप पाएंगे कि भय के समय व्यक्ति के शरीर पर जो पसीना आता है, प्रसन्नता के समय आने वाले पसीने से उसकी दुर्गन्ध अधिक होती है। इससे यह सिद्ध होता है कि दुख अथवा शोक के कारण शरीर के निरर्थक अंश अथवा सैल बाहर नहीं निकल पाते और इस प्रकार यह ऋणात्मक भावनाएं व्यक्ति के शरीर-तन्त्र में विषैले रसों का समावेश करके बहुत हानि पहुचाती हैं। इसके विपरीत हर्ष की भावनाएं शरीर के निरर्थक अंशों और टूटे-फूटे सैलस को बाहर निकालने में सहायता प्रदान करती हैं, जिससे व्यक्ति का बल तथा उसकी पाचनशक्ति अत्यधिक समर्थ हो जाते हैं।

इसलिए जब भी कभी आपको किसी प्रकार का शोक या दुख महसूस हो अथवा क्रोध आ जाए तो आपको चाहिए कि आप अपने श्वासोच्छ्वास और गुर्दों को गतिशील बनाए रखें ताकि विषैले अंश शीघ्रातिशीघ्र शरीर से बाहर हो जाए। इस समय यदि आप चाहें तो किसी खुले स्थान पर जाकर तब तक व्यायाम करें जब तक पसीना न आ जाए या फिर

किसी नदी, तालाब अथवा सरोवर आदि में स्नान करके भी शोक के
जा सकता है, क्योंकि नहाने से आपकी त्वचा के रोमकूप खुल जाते हैं
कम हो जाता है। या फिर आप कोई नाटक देखने चले जाएं अथवा f
या मनोरंजन में अपने मन को लगा दें, जिससे दुख अथवा शोक या
होकर प्रसन्नता एव हर्ष की भावनाए उत्तेजित हों। आपको चाहिए वि
अथवा वस्तु का त्याग कर दें, जिनसे आपको दुख, क्लेश, शोक या
चाहे वह कोई शत्रु हो, आपके कार्य करने का स्थान हो या कुछ औ
प्रसन्नता की भावना एक साधन है जिससे शरीर की कार्यशक्ति बढ़ती है,
होते हैं तथा मनुष्य दीर्घायु होता है। यही वह भावना है जिससे हमें जीव
प्राप्त होता है। यदि आपका मन हर समय प्रसन्नता से भरपूर रहे तो
उमगें सदा जागी रहेंगी, पर यह तभी संभव होता है जब मन को उचि
किया गया हो। निरन्तर क्रोध, शोक तथा दुख को पाले रखना, स्वय अ
मारना है। यही नहीं, इस प्रकार आप केवल अपने को ही नहीं बल्कि
को हानि पहुचाते हैं जो आपके सम्पर्क में आते हैं। शोकाकुल व्यक्ति f
तो कर नहीं सकता, स्वय अपना भी अहित ही करता है।
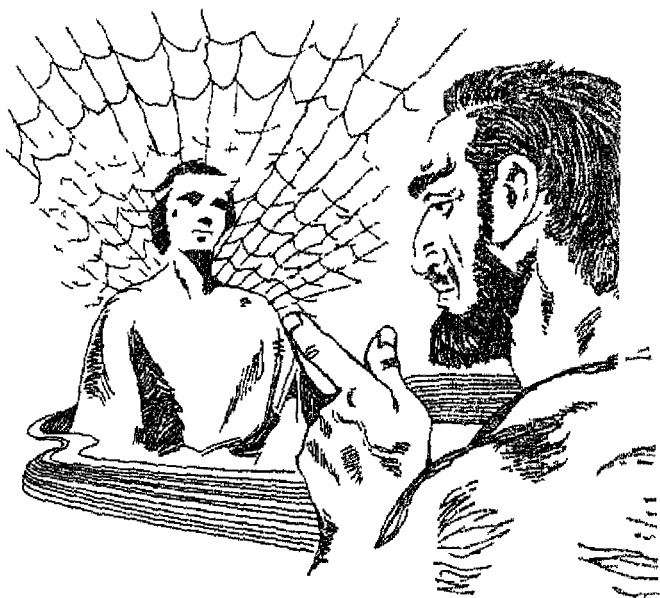
क्रोध को जड़ से उखाड़ फेंकने का संकल्प लीजिए।

होरेस ग्लेन्वर का कहना है 'किसी व्यक्ति की मृत्यु पर रोने और विलाप करने की अपेक्षा, शोक करने की अपेक्षा, यदि उसके सद्गुणों की प्रशंसा की जाए और उसके अनुकरणीय कार्यों की सराहना की जाए अथवा उसके जीवन की घटनाओं की चर्चा की जाए तो शोक या आवेग बहुत कम हो जाता है। इसी प्रकार क्रोध पर भी काबू पाया जा सकता है, पर क्रोध पर काबू पाने के लिए आत्मनिर्णय एव आत्मसयम की बडी आवश्यकता होती है। घटनाओं को शान्त भाव से सुनकर, देखकर, समझकर, न्यायोचित दृष्टि से उन पर विचार करना क्रोध के आवेग को रोकने का बड़ा सरल उपाय है। क्रोध कब आता है? प्राय लोगों को किसी अन्य व्यक्ति से दुर्वचन अथवा गाली आदि सुनकर ही क्रोध आता है। थोड़ा ध्यान से सोचिए कि दूसरों के मुंह से निकली बातों को सुनकर अपने मन को क्रोध द्वारा दूषित करना या छोटी-छोटी बातों पर भड़क जाना कहा तक उचित है? क्या किसी कुत्ते के भौंकने मात्र से आपका यश कलकित हो सकता है? यदि नहीं तो आप इस बात से क्यों डरते हैं कि किसी ने आपकी निन्दा की, आपको गाली दी अथवा आप पर झूठे लांछन लगाए? क्रोध के अनेक प्रकार हैं और अनेक कारण हैं, पर इसका प्रमुख कारण आपका भय ही होता है। फिर वह भय चाहे आघात का हो कि सामने वाला आपको मार देगा, आपकी आर्थिक क्षति का हो, किसी विशेषाधिकार के छिन जाने का हो अथवा आपके यश को बट्टा लग जाने का हो या किसी के साथ आपकी मित्रता समाप्त हो जाने का हो। लेकिन यह सब होता है किसी-न-किसी की बात के द्वारा। आप सोचिए और विश्वास कीजिए कि दूसरों के कुछ भी कहने से आपकी कीर्ति पर कोई भी बुरा प्रभाव नहीं पड़ सकता। केवल किसी के कह देने मात्र से ही सत्य और तथ्य नहीं बदल सकते। बुद्धिमान लोग सच्चाई से आखें नहीं मूदेंगे और यदि मूर्ख लोग आप पर लगाए गए आरोपों को सच मान भी लें तो आपको चाहिए कि उन मूर्खों की परवाह न करें। हो सकता है कि क्रोध के उस आवेग में आपके मन में यह विचार भी आ जाए कि आप उस व्यक्ति के टुकड़े-टुकडे कर डालें, लेकिन अपने मन को सयत रखिए तथा अपने आत्मविश्वास को बनाए रखिए। इन्हीं के द्वारा आप क्रोध पर काबू पा सकते हैं। ध्यान रखिए कि आपके मन में जोश आए, अवश्य आए, पर जोश में होश भी कायम रहे, वरना क्रोध के आवेश में आप यदि कुछ गलत कर गए तो उसका परिणाम भी गलत ही निकलेगा। इस संदर्भ में एक छोटा-सा उदाहरण आपको बहुत अधिक सहायता दे सकता है। मिराब्यू एक बार किसी सभा में भाषण कर रहा था कि अचानक एक व्यक्ति ने मंच पर आकर चिल्लाना शुरू कर दिया और मिराब्यू की ओर संकेत करके कहने लगा—"तू धोखेबाज है, तू झूठा है, हत्यारा है, नालायक है, बदमाश है, गुण्डा है।" लेकिन मिराब्यू ने इन सब बातों का कोई उत्तर न दिया और अपने श्रोताओं को सम्बोधित करके बोला—"सज्जनो! मैं तब तक आगे नहीं बोलूंगा, जब तक मुझे गाली देने वाले इन सज्जन की गालियों का सारा स्टाक समाप्त नहीं हो जाता।"

अब आप ही अनुमान लगाइए कि मिराब्यू की इस बात का उस सज्जन पर क्या असर हुआ होगा। किसी से कोई काम बिगड़ गया तो उस पर क्रुद्ध होने से आपको क्या मिलेगा? जो गलती हो गई उसको सुधारने का प्रयत्न कीजिए, न कि अंगारे बरसाने का। चिल्लाकर क्रुद्ध होने से आपकी वह शक्ति--जिसे आप किसी अन्य लाभकारी काम में लगा सकते थे--बेकार खर्च होने से बच जाएगी।

क्रोध का कारण कुछ भी रहे, पर वह साधारण ही होता है और इसका प्रमाण यह है कि प्रायः क्रोध करने वाला व्यक्ति अगले ही दिन माफी मांगता नजर आता है। आपको चाहिए कि जो कल करना है उसे आज ही करने का अभ्यास करें यानी अपनी बुद्धि से काम लें। यदि आप सदा प्रसन्नचित्त एवं हर्षित-हृदय रहते हैं तो फिर क्रोध का कोई अवसर आने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता और यदि कभी क्रोध आ भी गया तो उसका आवेग बहुत कम होगा। इसके लिए यह भी आवश्यक है कि आपका स्वभाव आशावादी हो तथा आपके मन में दूसरों के लिए स्नेह और प्रेम की भावनाएं रहें तथा अपने सम्पर्क में आने वाले हर व्यक्ति के साथ आपका व्यवहार स्नेहपूर्ण हो। ऐसा होने पर आपका दूसरों पर क्रोध करना बहुत कठिन हो जाएगा, क्योंकि तब ईर्ष्या, भय, द्वेष और घृणा आदि ऋणात्मक भावनाएं स्वयं समाप्त हो जाएंगी। इस प्रकार की ऋणात्मक भावनाएं बड़ी घातक होती हैं। इनसे आपके मन की प्रसन्नता ही नष्ट नहीं होती, बल्कि आस-पास का सारा वातावरण भी दूषित हो जाता है तो फिर क्यों नहीं क्रोध को आज ही जड़ से उखाड़ फेंकते? आज, अभी और इसी समय से इस प्रकार का संकल्प कीजिए कि, 'मैं आज क्रोध नहीं करूंगा', 'मैं आज और कल क्रोध नहीं करूंगा', 'मैं आज, कल और परसों क्रोध नहीं करूंगा', 'मैं एक वर्ष तक क्रोध नहीं करूंगा।' इस प्रकार के दृढ़ संकल्प को धारण करते ही आपके अन्दर इतनी शक्ति आ जाएगी कि आप उस पर काबू पा लेंगे या कभी भी क्रोध नहीं कर सकेंगे।

चिन्ता छोड़े, सुख से जियो

जब भी आप असफलता की आशा से भयभीत होने लगते हैं, अथवा जब भी आप चिन्ता से भयभीत हो उठते हैं तब आप आत्मविश्वास द्वारा ही कठिन परिस्थितियों पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। आत्मविश्वास से ही आप अपने सब कष्टों से मुक्ति पाकर सुखमय जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

आप शायद यह जानकर आश्चर्य करेंगे कि प्रसन्न रहना, उत्साहित रहना, साहसी बने रहना या कार्य के बारे में शान्तिपूर्ण ढंग से विचार करना बड़ी आसान बातें हैं। यह कुछ ऐसे साधन हैं जिनके द्वारा आप अनेकानेक कार्य कर सकते हैं, ऐसे आश्चर्यजनक कार्य जिन्हें देखकर लोग दांतों तले उगली दबा लें, ऐसे कार्य जो कठिन ही नहीं असम्भव भी प्रतीत होते हों। लेकिन जिस व्यक्ति के मन में सोचने-विचारने की शक्ति ही स्पष्ट नहीं होती, उसका दृष्टिकोण धुंधला होता है, उसके विचार अनुत्साहपूर्ण एव साहस से हीन होते हैं। चिन्ता भी उसके मस्तिष्क को धुंधला कर देती है।

यदि आप विजय की बातें करते हैं तो अवश्य विजयी होंगे। सफलता की बातें करते हैं तो अवश्य सफल होंगे। स्वास्थ्य की बातें करते हैं तो अवश्य ही स्वस्थ रहेंगे और यदि उन्नति की बातें करते हैं तो अवश्य ही उन्नति भी करेंगे। लेकिन यदि आप चिन्ताग्रस्त हैं तो आप कभी भी सही रूप से कुछ भी नहीं सोच सकते और न ही योजनाबद्ध तरीके से अपनी कार्य-शक्ति को किसी उद्देश्य में नियोजित कर सकते हैं। चिन्ताग्रस्त रहकर आप किसी को भी अपनी ओर आकर्षित नहीं कर सकते, क्योंकि चिन्ता के कारण आपके व्यक्तित्व का आकर्षण समाप्त हो जाता है। चिन्ता से न केवल आपकी प्रसन्नता नष्ट होती है, अपितु आप दूसरों की प्रसन्नता को भी नष्ट करते हैं।

इसलिए यदि कर सकते हैं तो हंसी-खुशी की बातें कीजिए, प्रसन्नता की बातें कीजिए। यदि संसार को सुखी नहीं बना सकते तो कम-से-कम दुखी तो मत बनाइए। जो व्यक्ति कष्टों में भी मुस्कराता रहता है, उसके साहस की दाद देनी होगी, लेकिन जो व्यक्ति कष्ट आते ही हिम्मत हार बैठते हैं, क्या वह कुछ कर सकेंगे? जब स्वयं आप अपने

वेपरीत हों और हर काम आपकी इच्छा के विरुद्ध हो रहा हो, यदि उस समय भी आप मुस्करा सकते हैं तथा हिम्मत और साहस के साथ विजय-पथ पर आगे बढ़ सकते हैं तो स्पष्ट है कि आपका मन उस धातु का बना हुआ है जिसे मोड़ा नहीं जा सकता।

असफलता की आशा से आपका आत्मविश्वास डगमगाने लगता है।

सुप्रसिद्ध विचारक कार्लाइल का कहना है कि संकट के समय कुछ लोग और भी अधिक साहसी हो जाते हैं। उनकी हिम्मत पहले से कहीं अधिक बढ़ जाती है। लेकिन अनेक लोग ऐसे भी होते हैं जो जहां भी जाते हैं, भय की भावना अथवा दुखपूर्ण विचार ही फैलाते हैं। उनके पहुचते ही उनके मन की निराशा एवं चिन्ता का दूषित प्रभाव अन्य लोगों पर पड़ने लगता है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि चिन्ता करना और भयग्रस्त रहना तथा जीवन में कष्ट और दुख भोगना उन्होंने अपना भाग्य मान लिया होता है, परन्तु इससे अधिक मूर्खतापूर्ण विचार और कुछ नहीं हो सकता। इस संसार में किसी भी व्यक्ति का जन्म दुखी अथवा दीन-हीन रहने के लिए नहीं हुआ है और न ही किसी को यह अधिकार है कि वह ससार में दुख अथवा निराशा फैलाए। दुख की भावना निराशा को जन्म देती है और निराशा से अकर्मण्यता का जन्म होता है, जबकि मनुष्य का जन्म इसलिए हुआ है कि वह सदा प्रसन्न रहे, प्रफुल्लित रहे, कर्मठ रहे, आशावादी रहे और ससार में आनन्द फैलाता रहे।

आपको क्या अधिकार है कि आप इष्ट-मित्रों या सम्बन्धियों के यहां अपनी रोनी सूरत लेकर जाएं तथा वहा पहुचकर भी दुख, निराशा अथवा अकर्मण्यता फैलाएं। अनेक लोगों की यह आदत होती है कि जब कभी उन्हें कोई चिन्ता होती है तो वे उसका नाना प्रकार

से स्वागत करने लगते हैं। चिन्ता, भय और दुख को प्याज की परतों की तरह उतार-उतार कर लोगों को दिखाते हैं और अपने दुर्भाग्य का रोना रोते हुए अपने अभावों का बढा-चढा कर बयान करते रहते है। जीवन को कटु बनाने वाली बातों का खुलकर विवरण देने का उन्हें जैसे चाव होता है। वे नहीं समझते कि इस प्रकार वह अनजाने ही अपने शत्रु की जड़ों को सींच रहे है और उनका यह शत्रु है चिन्ता, जिसका उनके चरित्र पर बडा गहरा प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार के व्यक्तियों की मौजूदगी में न तो आप शान्त रह सकते हैं और न खुलकर सांस ही ले सकते हैं। हंसना-मुस्कराना तो ऐसे व्यक्तियों के सामने दूभर हो जाता है। इन चिन्ताग्रस्त, निराश एव रोता चेहरा लिए व्यक्तियों को देखकर लगता है कि मानो सारे ससार के समस्त कष्टों का बोझ इन्होंने ही अपने कन्धों पर लाद रखा है। वस्तुत इस प्रकार के व्यक्तियों की समस्त प्रतिभा कष्टों का रोना रोते-रोते ही समाप्त हो जाती है। भले ही उत्साह एवं उमग से आपका दिल उल्लसित हो, लेकिन ऐसे व्यक्ति अपनी उत्साहहीन बातचीत तथा अपनी मनहूस सूरत से आप पर तुषारापात करने मे कोई कसर नहीं छोड़ते। सन्देह, नैराश्य या अकर्मण्यता की बातें करके आपकी हंसी-खुशी को नष्ट-भ्रष्ट कर डालते हैं तथा आपके उत्साह और उमंगों का गला घोट देते हैं। तब आपको ऐसा प्रतीत होता है कि आप सूर्य के आलोक से निकलकर नरक के अधकार में जा पहुंचे हैं।

परमात्मा ने आपको पृथ्वी पर किसी प्रकार की शिकायत करने अथवा दुखों के कारण विलाप करने के लिए नहीं भेजा है, बल्कि हसने-मुस्कराने तथा अन्य व्यक्तियों को प्रसन्न रखने के लिए भेजा है। परमात्मा यह नहीं चाहता कि आप उसके इस सुन्दर ससार में निराशा फैलाएं अथवा जीवन भर हाय-हाय करके कीड़े-मकोड़ों की तरह दबकर, पिसकर मर जाए।

इमर्सन ने लिखा है कि हसमुख तथा बुद्धिमत्तापूर्ण चेहरा सभ्यता, श्रेष्ठता और सस्कृति का शिखर है। जितनी बार भी हम किसी ऐसे सुदर्शन चेहरे के दर्शन करते हैं, उतनी ही बार हमें एक ऐसी आभा दिखाई देती है, जिसकी झलक न तो पृथ्वी पर दिखाई देती है और न ही आकाश में। उसके दर्शन से हमें लगता है कि इस व्यक्ति का किसी दिव्य शक्ति से बडा ही घनिष्ठ सम्बन्ध है।

अपने काल्पनिक दुख के सहारे मनहूस, रोते-कलपते, निराश व शिकायतें करते रहने वाले व्यक्ति, पूरे परिवार की सुख-शान्ति और प्रसन्नता को नष्ट कर डालते हैं, जिसके कारण समस्त परिवार में निराशा का अंधकार छा जाता है। इस प्रकार की मानसिक स्थिति से क्या मिलता है, सिवाय अपनी शक्तियों को क्षीण करने के?

आपने ऐसे अनेक व्यक्ति देखे होंगे, जिनकी महत्वाकांक्षाएं बडी ऊची थीं, परन्तु आज वे किन्हीं कीडे-मकोडों से अधिक कुछ नहीं। मामूली-सी नौकरी करके, दिन भर काम की चक्की में पिसते रहकर किसी प्रकार अपना जीवन काट रहे हैं। इसका कारण है, सदा दूसरों के आगे अपना दुखडा रोते रहना, सदा निराशावादी बने रहना, सदा मनहूसियत फैलाते रहना। जो भी व्यक्ति इस प्रकार के दुर्बल विचारों का दास है, वह कभी ऊचा नहीं उठ सकता, कभी शक्तिशाली नहीं बन सकता। भले ही उसकी बुद्धि कितनी भी विलक्षण क्यों न हो, भले ही उसमें कार्यक्षमता कूट-कूटकर भरी हो, परन्तु

ऐसा व्यक्ति असमर्थ बनकर हथियार डाल देता है। उसका बुद्धि-चातुर्य, उसकी योग्यता एव कार्यक्षमता नष्ट हो जाती है और वह मूर्खतापूर्ण निर्णय लेने लगता है। उसकी समझदारी, उसकी शक्ति, उसका मानसिक सन्तुलन समाप्त हो जाता है। और ये ही वे गुण हैं जिनकी प्रभावशाली कार्य करने के लिए नितान्त आवश्यकता होती है।

चिंता रहित होकर आप अपनी मंजिल पर सफलता से पहुंच सकते हैं।

जब व्यक्ति पर कोई सकट आ पड़ता है अथवा किसी बड़े काम की जिम्मेदारी आ पडती है तो उसी समय उसके धैर्य की, उसके पौरुष की, उसके निर्णय लेने की शक्ति की परीक्षा होती है। ऐसे समय केवल वही व्यक्ति सफल सिद्ध हो पाते हैं जो अपने मन की सहज प्रसन्नता को नष्ट न होने दें।

इसलिए अपने मन को सफल बनाइए, उसे अपने विश्वास में लीजिए, प्रत्येक स्थिति एवं परिस्थिति का धैर्यपूर्वक विश्लेषण कीजिए, प्रत्येक वस्तु को परखिए, तभी आप सही निर्णय ले सकेंगे। आपका जन्म इसलिए नहीं हुआ है कि आप अपनी भावनाओं के गुलाम बन जाए, बल्कि आपका पौरुष तो इसमें है कि आप इन्हें अपना गुलाम बना लें।

- हा सकता है कि प्रारम्भ मे आपका एसा लग कि यह सब इतना आसान नहीं हे, जितना आप समझते थे, लेकिन आशंकाओ के फेर मे मत पड़िए। योग्यता तो बनाने से बनती है। बार-बार रस्सी के घिसने से पत्थर पर भी निशान पड जाता है। जरूरत बस इस बात की है कि आप लक्ष्य प्राप्त करने की भीष्म प्रतिज्ञा कर ले, निशाना साधते वक्त अर्थात् लक्ष्य की राह पर बढते समय आपको अर्जुन की भांति चिडिया की आख ही दिखाई दे, पूरी चिडिया नहीं। यदि आपने ऐसी दक्षता प्राप्त कर ली तो कोई कारण नहीं कि सफलता आपका वरण न करे।
- याद रखे। जितना कठोर हमारा परिश्रम होगा उसका फल भी उतना ही मीठा होगा। जीवन चलने का नाम है, और सफलता भी यदि इसक साथ जुड़ जाए तो डगर और आसान हो जाती है। सफलता सभी चाहते है, परन्तु इसकी राह कांटों भरी होती है, जिस पर चलकर ही फूलो की क्यारिया मिलती हैं। सफलता की राह दुश्वार जरूर है, मगर ऐसी भी नही कि घबराकर रास्ता ही बदल लिया जाए।
- असफलताओ के बावजूद जीवन एक अद्‌भुत सन्तोष प्रदान कर सकता है। अनेक दुश्वारिया के बावजूद जीवन शानदार है। इसलिए जीवन के मूल्यों और इसके अपरिमित महत्त्व में विश्वास रखिए। जो विश्वास करते है तथा डटे रहते हे, उनके लिए अलौकिक आनन्द, शान्ति और उपलब्धि इसमे ही अन्तर्निहित हैं। स्वय अपन को पहचानने के बाद ही 'सफलता' से आपका मिलन होता है।